फूल में काँटा

फूल में काँटा

लेखक

श्रीरामजीदास वैश्य

—:oo:—

प्रकाशक

(राजा) रामकुमार-प्रेस-बुकडिपो

उत्तराधिकारी—नवलकिशोर-प्रेस-बुकडिपो,

हजरतगंज, लखनऊ

सजिल्द २)]   सन् १९५६ ई०   [सादी १॥)

निवेदन

प्रिय पाठकगण !

आज मैं आपके सम्मुख "फूल में काँटा" उपस्थित करता हूँ। मैं इस समय एक अनुभव-रहित विद्यार्थी हूँ। लड़कपन में आकर जो कुछ समय अभ्यास करने से निकल सका, उसमें टूटी-फूटी भाषा द्वारा अपने बाल-विचारों को आपके सामने प्रकट करने का साहस किया। आशा है कि आप लोग इस पुस्तक द्वारा मेरे विचारों को जानकर यदि वे अच्छे हों, तो मेरे उत्साह को बढ़ावेंगे।

एक रात पलँग पर पड़े-पड़े न मालूम क्यों इस पुस्तक के लिखने की 'तरंग' मेरे हृदय में उत्पन्न हुई। उसी समय अनायास मेरी आँखों के सामने इसका चित्र खिंच गया। फिर क्या पूछना था 'विचारों' की तो पल्टन बँध गई। ज्यों-ज्यों मैं सोचता जाता था, गिनती बढ़ती ही जाती थी। मैं बड़ा घबड़ाया कि हैं! परमेश्वर, आज यह क्या लीला है। रात क्या इसी प्रकार कटेगी? खैर जैसे-तैसे नींद तो आई, परंतु सुबह उठते ही फिर वही ध्यान। मैं भी अपने नित्य कृत्य से निश्चित हो आराम-कुरसी पर आ डटा और एक पेंसिल और कुछ कागज के टुकड़े ले क्रम-क्रम से जो-जो बातें हृदय में उत्पन्न हो चुकी थीं, लिखने बैठा। लिखने पर तो कमर कस ली, परंतु एक बाधा बीच में यह खड़

किस भाषा में? बड़ी मुसीबत का सामना था, अँगरेजी और हिंदी में

तो इतना ज्ञान नहीं कि कोई पुस्तक लिखने का इरादा करूँ। फिर जिस समय यह याद आती थी कि "पुस्तक लिखना" और 'लेखक' बनना गुड्डा-गुड़ियों का खेल नहीं है, उस समय सारी आशा नष्ट हो जाती। खैर! अपनी नादानी पर कुछ भी ध्यान न देकर मैंने हिंदी ही में लिखना निश्चय किया। एक तो हिंदी अपनी मातृभाषा है, कितनी ही अज्ञानता क्यों न हो, फिर भी अपने विचार किसी-न-किसी तरह उसमें प्रकट कर ही सकते हैं। दूसरे हिंदी-भाषा से प्रथम ही से मुझे इतना प्रेम है कि यदि किसी प्रकार इसकी सेवा हो सके, तो मैं हटना नहीं चाहता। बस, इसी प्रकार हिंदी-भाषा में, (यह कहते हुए मुझे बहुत डर मालूम होता है, क्योंकि मैं यह खूब जानता हूँ कि जो कुछ मैं लिख रहा हूँ, वह कोई भी भाषा नहीं है) लिखने की ठानी।

'लाड़-चाव में साहूकारों के लड़के कहाँ तक बिगड़ जाते हैं' और 'जो जैसा करता है, उसे वैसा ही फल मिलता है' इस पुस्तक में इन्हीं बातों के दिखलाने का यत्न किया गया है। इस उपन्यास के नायक का नाम फूलचंद है। धनी-मानी पिता के होने और उच्च कुल में जन्म लेने से फूलचंद 'फूल' से किसी तरह कम न था, परंतु कुसंगति होने से उसमें भी संसार के दुर्व्यसन लग गए, और इसीलिए 'फूल' होने पर भी 'काँटेयुक्त फूल' कहा जाने लगा (क्योंकि वास्तव में 'कुसुम' में भी काँटे हैं, सुधा में भी विष है) इसी विचार से इस पुस्तक का नाम मैंने 'फूल में काँटा' रक्खा है।

"विलायत की सैर" आजकल के दिनों में नव-शिक्षितों को कितनी प्रिय है, उसको कौन नहीं जानता ! अन्य देशों में जाकर सैर करना, वहाँ की कारीगरी सीखना और विद्या-लाभ करना कुछ बुरी बात नहीं है, परंतु जो नवयुवक इस देश से वहाँ जाते

हैं, वह अपने देश के गुणों को खोकर वहाँ से दुर्गुण सीख आते हैं। वे वहाँ जाकर यह नहीं सोचते कि हम किस ग़रज़ से यहाँ आए हैं? विद्या या व्यापार सीखने की ग़रज़ से अथवा ऐश-आराम भुगतने की ग़रज़ से! यहाँ से लोग बड़े-बड़े वादे करके जाते हैं कि वहाँ जाकर यह करेंगे, वह करेंगे, परंतु विलायत की हवा लगते ही उनके विचार बदल जाते हैं। वहाँ पर वे अपना उद्देश बिलकुल भूल जाते हैं और विलायत की भूमि को स्वर्ग समझ ऐश-आराम में मस्त होकर नाना प्रकार के बुरे व्यसनों में फँस कर अपना जीवन नष्ट कर देते हैं। इसलिये मैंने इस पुस्तक में यह दिखलाया है कि ऐसी लालसा से जानेवाले मनुष्यों को विलायत जाने पर कैसी-कैसी आपदाएँ झेलनी पड़ती हैं।

यह तो मैं पाठकों से निवेदन कर ही चुका हूँ कि मैं 'अनुभव-रहित' हूँ, फिर विलायत का हाल लिखना मेरे लिये बिलकुल असंभव था। यदि मैं लिखने का यत्न भी करता, तो मुझे सारी कल्पित और झूठ-मूठ बातें लिखनी पड़तीं, जिसका फल यह होता कि होनहार नवशिक्षित उसे बिलकुल 'फ़ार्स' कहकर ख़ाका उड़ाते और शिक्षा लेना तो दूर रहा, उलटे लेखक की हँसी करते। इसी डर से मैंने 'आस्टिन फ्रायर' (Austin Fryers) साहब की शरण ली और विलायत का सारा हाल उन्हीं की पुस्तक 'पापर मिलिओनेर' (A pauper millionaire) के आधार से इस पुस्तक में लिखा गया है।

मुझे जासूसी कहानियाँ बहुत प्रिय लगती हैं और उसी का यह फल है कि मैंने फूलचंद के साथियों के कर्तव्य का भंडाफोड़ करने के लिये कुछ जासूसी चर्चा की है। प्रिय पाठकगण! उसकी भलाई-बुराई विचारते समय इस बात का भी ध्यान रहे कि वे सारी ऊटपटाँग कल्पनाएँ स्वयं लेखक की हैं। बहुत यत्न करने

पर भी मैं इस पुस्तक से अँगरेज़ी की 'बू' एकदम अलाहिदा न कर सका, इसीलिये परिच्छेदों के ऊपर और कहीं-कहीं बीच-बीच में भी अँगरेज़ी शब्दों का प्रयोग मुझसे स्वभावतः हो गया है । इस दोष को पाठक क्षमा करें । अब एक कार्य और रह गया है और वही सबसे कठिन है । यानी अपने उन मित्रवरों को, जिन्होंने मुझे इस काम में सहायता पहुँचाई है, उन्हें "धन्यवाद" दिया जाय । धन्यवाद शब्द का प्रयोग जैसा आजकल बिगड़ रहा है, उसे तो हम सब ही जानते हैं । यदि किसी ने किसी को पानी पिलाया, तब भी 'धन्यवाद' या एक लाख रुपए किसी को दिए, तब भी वही 'धन्यवाद' कहा जायगा । मेरी समझ में यदि धन्यवाद में भी नंबर या डिगरी लगा दी जाती, तो अवश्य मतलब समझा जा सकता था, परंतु भाषा-शास्त्र में इसके लिये हमारे पथ-प्रदर्शक विद्वानों ने किसी प्रकार के नियम नहीं बनाए, जिससे हम 'धन्यवाद' के गुरुत्व को तौल सकें । परंतु हाँ, मानस-शास्त्रवालों ने अवश्य इसकी विवेचना की है । उपकार के बदले में कितनी कृतज्ञता का भाव किसके लिये मन में उत्पन्न होती है, यह बात उस शास्त्र के जाननेवालों को मालूम हो सकती है और हरएक को उसके अंतःकरण में उसकी छुटाई-बड़ाई का ज्ञान हो जाता है । अतएव मानस-शास्त्र के अनुसार हमारे हृदय में किसके लिये कितनी कृतज्ञता है, उसको लेखनी द्वारा प्रकट करना बड़ा कठिन है, तो भी मैं आंतरिक धन्यवाद अपने मित्रवर पं० नाथूराम मुरोठिया और मिस्टर रफ़ी को देता हूँ । जिन्होंने सारी पुस्तक को सुनकर मेरे उत्साह को बढ़ाया ।

आपका अनुचर

रामजीदास वैश्य

दो शब्द

हिंदी-साहित्य में मौलिक पुस्तकों का अभाव है। इसमें संदेह नहीं कि इस अभाव की पूर्ति बड़ी सवेग गति से हो रही है, पर अभी वह समय दूर है, जब हिंदी भी अपने नवीन साहित्य पर गर्व कर सकेगी। इसलिये हमें प्रेमी पाठकों और उपन्यास-रसिकों के सम्मुख यह मौलिक रचना "फूल में काँटा" भेंट लेकर आने में विशेष हर्ष होता है। इस पुस्तक में एक विलासी, धन-मद से मतवाले युवक का चरित्र दिखाया गया है और हम कह सकते हैं कि यह चित्र बहुत अंशों में स्वाभाविक है। पुस्तक की शैली बहुत ही रोचक और सरल है। लेखक ने, इस उपन्यास में शांत और कुतूहल का एक अच्छा सम्मिश्रण किया है कि पढ़कर चित्त प्रफुल्लित हो जाता है। विलासी युवकों के लिये कथा के नायक फूलचंद का जीवन नेत्रोन्मीलक सिद्ध होगा। पाठक इसे पढ़ें और जासूसों की जासूसी के करिश्मे देखें।

प्रकाशक,

समर्पण

श्री ६ तीर्थस्वरूप

श्रीमान् लाला बालकृष्ण महोदय,

पूज्यवर चाचाजी,

यह आप ही की विशाल बुद्धि और उत्तम शिक्षा का फल है कि मैं आज इस योग्य हुआ । अतएव मैं आपके चरण-कमलों में यह प्रथम उद्योग भक्ति-पूर्वक सादर समर्पण करता हूँ । आशा है, आप इसे स्वीकार करेंगे ।

आपका आज्ञाकारी

रामजीदास

फूल में काँटा

पहिला हिस्सा

पहिला परिच्छेद

What's the business.

That such a hideous trumpet calls to parley,
The sleepers of the house ?—Speak,—speak !

संध्या के ६ बजे होंगे, सूर्यनारायण भी अस्ताचल को चल बसे हैं, वर्षा ऋतु होने से मेह भी धीमी-धीमी बूँदों-सहित बरस रहा है। यह दशा कुछ पाँच मिनट भी न रहने पाई थी कि एकदम आकाश निर्मल हो गया। जो-जो बेचारे मनुष्य, महापरिश्रम से 'यह हटा', 'वह हटा', 'भाई यह चीज भीग न जाए', 'मैं तो छत पर धोती सुखा आई थी वह पहले उठा लाऊँ, नहीं तो भीग जावेगी', 'अरे भई नेवार का पलँग दीवार के सहारे खड़ा है वह तो इधर को सरका लो' इत्यादि कहते हुए जल्दी-जल्दी सटर-पटर में लगे हुए थे और यह आशा करते थे कि पानी खूब धड़ाके से गिरेगा, चुपचाप

बैठे ही रहे। लड़के बच्चे जो कि लँगोटी लगाकर मेह में नहाने के इरादे से बाहर सड़क पर "बरसो राम धड़ाके से, बुढ़िया मर गई फाके से" की धूम मचाते हुए सड़क पर इधर-उधर कूद-फाँद रहे थे, अपनी आशा पूर्ण हुई न देखकर चुपचाप घरों में कपड़े टटोलने लगे; बेचारे किसान जो कि पल-पल पर परमेश्वर से बिनती कर रहे थे कि एक बार पानी धड़ाके से पड़ जाय, तो हम बीज बोने के लिये तैयार कर रक्खें, कोई-कोई तो हल लिए तैयार खड़े ही थे। सबके ऊपर वज्र-सा गिरा, सब लोग पानी के न आने से कुलमुला रहे थे, केवल खुशी थी—

(१) नाजवाले बनियों को, जो कि टकटकी लगाए बादल की ओर निहार रहे थे और कभी गुनगुन करके दुकान के भीतर जाकर बैठ जाते और ऐसी बुरी शकल बना लेते थे जानो कोई महाभयानक काम इनके यहाँ हो गया है, और जो कि अपना शोक भीतर ही सहन नहीं कर सकते थे बाहर निकलकर आपस में कहने लगे—"भाई! म्हारो तो रामी मालक छे, डीड हजार पल्ला को कोठो भरो है जो एक दिन भी वर्श ग्यो तो ॥)—पल्ला भी घट जाने से म्हाके तो सात से की ठुकेगी।" इतने में दूसरा बोला "म्हाने तो एसी जचे है कि पानी वरशे ई को ना, ई देखो बादल घट चला—राम राम.........." दलाल भी जो कि १० मिनट पहले कह गए थे कि चार आना पल्ला नाज घट गया, अब वे फिर वही भाव बतलाने लगे, अब नाजवालों की जान में जान आई। अपना-अपना मूढ़ा बाहर निकालकर, धोती जाँघों तक चढ़ाकर, तोंद निकालकर, बाहर बैठे, मुस्कराहट से जो दाँत बाहर

निकल पड़ते थे वह ऐसे मालूम होते थे मानो पहाड़ में कोई दिया चमका हो या बादल में से बिजली दिखाई दी हो। खैर! अब उनकी व्याकुलता तो घट गई, कोई-कोई बोल उठे "राम!—तैने घनी भली करी छे" एक तो खुशी हुई इन्हें—

दूसरे खुशी हुई उन पानी के जुआरियों को जिन्होंने बदान बदी थी कि पानी आज नहीं बरसेगा, बाकी सब ही को क्या अमीर और क्या गरीब पानी के न बरसने से चेहरों पर मुर्दनी छाई, बाजे बाजे गरीब चिल्ला उठे 'यह सब नाजवालों की शरारत है उन्होंने पानी को गाड़ दिया होगा, भाई हम लोग तो मरे, सत्यानाश हो इनका कि रुपए में सेर भर भी नहीं बढ़ने देते' इस तरह से कह-कहकर बेचारे लाचार चुप हो बैठ रहे।

तीसरे, कुछ हँसी की रेखा उन खिलाड़ियों के चेहरे पर भी झलकी जो कि पानी के आने से अलग हटकर कहीं पटे* में जा बैठे थे, फिर टेनिस का नेट (net) लगाने के लिये चार-पाँच लड़के दौड़े और खिलाड़ी भी अपना-अपना रेकिट हाथ में हिलाते आते दिखाई दिए, फिर से फुटबाल निकली और क्रिकेट के विकेट्स गड़ने लगे। यानी नाना प्रकार के खेल शुरू हुए। पानी बंद हुआ देखकर फिर से अँगरेजी ढंग के नायक-नायिका कोई बाइसिकिल पर और कोई हाथ में हाथ डाले छतरी लिए मैदान की तरफ रवाना हुए, फिर भंगेड़ियों की भंग तलैया के किनारे छनने लगी इत्यादि, जो-जो काम पानी बरसने से रुक गए थे, वे फिर ज्यों के त्यों होने लगे।

---

* अथवा छाये हुए मकान।

पाठकगण, निश्चय ही यह कहेंगे कि असली बातों को छोड़कर कहाँ की गप्प-शप्प ले बैठा है, परंतु मेरा यही कर्तव्य है कि जो कुछ लिखूँ ब्योरेवार लिखूँ, परंतु हाँ, पाठकगण घबड़ाइए मत, अभी शुरू करता हूँ—मुझे भी अपने पाठकों को नाराज थोड़े ही करना है ! नहीं, नहीं, आपका कहना भी ठीक है। मुझे पुस्तक कुछ इन्हीं बातों से पूर्ण थोड़े ही करनी है, अच्छा तो अब सुनिए, जब कि पानी इस तरह से बरसता-बरसता रह गया और आकाश निर्मल हो आया, तब लाला घासीरामजी के आदमियों को भी तख्त बाहर निकालने की सूझी।

लाला घासीराम कलकत्ते में एक खुश मिज़ाज, नामी रईस हैं और यहाँ आपकी चलती भी खूब है। शाम होते ही इनकी हवेली के सहन के बीच में तख्त लगा और बिछौना बिछकर तैयार हो गया। इधर-उधर दस-बारह कुर्सियाँ भी बिछा दी गईं। अब मित्रवरों के आने का नम्बर लगा। लालाजी तो पहले ही से आकर लोड़ के सहारे बैठ गए थे। पहलेपहल पं० राधिकादास, फिर सेठ दुर्गादास, बाबू प्यारेलाल, मौलवी वाहिदखाँ और टोल के टोल आदमी आ आकर बैठने लगे, सबके सब रईस थे, उम्दा-उम्दा पोशाकों से सजे हुए—अमीर, गरीब की तो परमेश्वर जानें, मगर हाँ, कपड़ों से तो ठीक वैसे ही मालूम होते थे। जब बहुत से लोग इकट्ठा हो गए, तो फिर गप्पें उड़ने लगीं। पहले मैं पाठकों को इन अपरिचित मनुष्यों का परिचय दूँ फिर कुछ लिखूँगा।

१. पं० राधिकादास, एक नामी लीडर हैं, विलायत से आप बैरिस्टरी पास कर आए हैं।

२. सेठ दुर्गादास, ट्रेजरी ऑफिस के सुपरिंटेंडेंट हैं।

३. बाबू प्यारेलाल, महकमे तालीम के अफ़सर हैं और ऑनरेरी मजिस्ट्रेट भी हैं।

४. मौलवी वाहिदखाँ भी दिखते तो कोई बड़े भलेमानस ही हैं, मगर मैं इनकी तारीफ न जान सका—सूरत से चुस्त, चालाक और फुर्तीले नजर आते हैं।

इस तरह मित्र-समाज जमने पर गप्पें उड़ने लगीं। लाला घासीराम ने भी सेठ दुर्गादास की तरफ मुँह करके पूछा— "कहिए सेठ साहब ट्रेजरी का क्या मामला है?"

दुर्गा०—क्या कहूँ लाला साहब, आज एक अजब ही मामला हो गया है, तीन बजे हम सब ऑफिस में बैठे थे। काम बहुत ज्यादा था कि इतने में एक आदमी ११५७॥=) का चेक भुनाने लाया। चेक एलिसन की तरफ से मिस्टर मार्गन के नाम का था, यह शख्स सूरत से तो बिलकुल अँगरेज ही मालूम होता था, मगर साथ-ही-साथ फुर्ती और चालाकी-सी भी नजर आती थी। इसने आकर गुड मॉर्निंग किया। मैं रुपए निकालने गया, सब रुपए दे चुका और जब वह लेकर चला गया तब मालूम हुआ कि एक टेबिल पर धरा नोट का बंडल जिसमें करीब बीस हजार के नोट थे चोरी चला गया। मैं काम बहुत होने से उनके नम्बर तक भी नहीं टीपने पाया था।

इसके बाद ही खुद मि० एलिसन आए और हिसाब करने को कहा, मैं झट कैशबुक लेकर हिसाब के लिये उनके साथ अलग एक कुर्सी पर जा बैठा। हिसाब करते-करते जब आखिरी आइटिम आई कि साहब ने चिकबुक दिखाकर कहा

कि "मैंने कोई चेक उस नाम का नहीं किया", तब तो मेरे होश उड़ गए, मैंने मन में पक्का ठहरा लिया कि वह चेक जाली था और वह शख्स भी कोई मशहूर जाली आदमी है। उसी ने वह नोट का बंडल भी उड़ा लिया है, सेठ साहब! हम लोग बड़ी दुर्दशा में हैं। पुलीस में भी खबर कर दी है। डिटेक्टिव (जासूस) भी छूटे हैं, देखिए क्या होता है।

घासी०—उहो! बड़ा भयानक शख्स है, इतना माद्दा होना बहुत कठिन है आपने जासूस कौन-सा तजवीज किया है, इसका वगैर किसी बड़े जासूस के पकड़ा जाना कठिन है।

दुर्गा०—हाँ साहब! डिटेक्टिव तो बड़ा मशहूर है। वही मि० मार्टिन (Mr. Abid, Mr. Etherton Martin) हैं। यह अमेरिकन डिटेक्टिव है। सैकड़ों मामले इस तरह के उन्होंने तय किए हैं।

घासी०—खैर तब तो जरूर मि० मार्टिन उसका पता लगा लेवेंगे। बगैर उसका पता लगाए आप लोगों की बदनामी है, इसलिए आपको खूब तलाश करना चाहिए।

दुर्गा०—हाँ साहब, हमारा भले ही हजार-पाँच सौ रुपया बिगड़ जाय, मगर उसका पता लगाना बहुत जरूरी है। ऐसे शख्शों का जोर-शोर अच्छा नहीं। जब वे सरकारी बैंकों में ही ऐसा करते हैं, तो गरीब प्रजा की क्या चलाई।

पंडित राधिकादास के आते ही बड़ी गड़बड़ी मची थी। 'इधर बैठिए', 'इधर आइए' 'अरे वह आराम कुर्सी तो उठा ला' की धूम मच गई थी। आपने भी इस चोरी के मामले का कुछ हाल सुन लिया था, मगर आद्योपांत नहीं सुनने पाए थे। परंतु

थे बैरिस्टर, तुरंत ताड़ गए और कुछ कहना ही चाहते थे कि इतने ही में एक अँगरेज भीतर घुसते हुए नजर आया। सब लोग अपरिचित को आते देखकर चुप हो गये और सबके सब सिर्फ एक ही आदमी पर टकटकी लगाये हुए देखने लगे। हा भगवन्! यह क्या लीला, मार्गन साहब फिर यहाँ।

".."

दुर्गादास के तो होश-हवाश जाते रहे, वे यह सोचने लगे कि मैं जग रहा हूँ या ख्वाब देख रहा हूँ। उनकी नाड़ी जल्द-जल्द चलने लगी और दिल धड़कने लगा। इसी प्रकार और, औरों की भी ऐसी हालत थी। सेठ दुर्गादास सोचने लगे कि यदि यह सचमुच वही मार्गन साहब हैं, तो यहाँ क्यों आए और उन्हें कैसे मालूम हो गया कि हम उन्हीं के बारे में बातचीत कर रहे हैं। अवश्य ही यह सब स्वप्न-लीला है।

खैर, उनके आते ही कुर्सी सरका दी गई, मगर आप बैठते कैसे, लाला घासीराम की भी ब्यालू की बेला आ पहुँची थी और आवाजें भी लग चुकी थीं। मगर वह इस रहस्य से बड़े अचंभित थे। सबके हृदय में कौतूहल हो रहा था, चेहरे बदल गए थे। लालाजी भी उठने लगे, इतने में कहीं से बंदूक की आवाज आई। सब चुप! या परमेश्वर यह भेद भी क्या है, सब अपने-अपने मन में भगवान् को याद करने लगे और यही सोचने लगे कि मौका मिल जाय और टहलें! लालाजी भी जाते-जाते रह गए और जहाँ के तहाँ खड़े रहे। पाठक! आप तो जानते होंगे कि एकाएक चुपचाप गप्पों-शप्पों में ऐसी अनायास घटनाएँ क्या-क्या उपद्रव हृदय में मचाती हैं। सबके हृदय व्याकुल थे, मगर सिर्फ दो ही आदमियों के चेहरे खुश

दिखाई देते थे। इन दो में से एक तो वही पं० राधिकादास और दूसरे मौलवी वाहिदखाँ।

पाठक अवश्य ही यह सोचेंगे कि वाहिदखाँ क्यों खुश थे? मगर जब वह जानेंगे कि वह कौन शख्स है, तब तो कहना ही पड़ेगा कि बेशक वाहिदखाँ हँसे होंगे, तो सुनिए वाहिदखाँ कौन है। वाहिदखाँ बहुत दिनों से हिन्दुस्तानी जासूसों में नंबर पा चुके हैं, इन्होंने जब इस मार्गन ढोंगी को इस तरह आते देखा, तो जोर से खिलखिलाकर हँस पड़े। यदि हमारे पाठकों में से वहाँ पर कोई मौजूद होता, तो बारीकी से देखने से मालूम होता कि ज्यों ही मार्गन और वाहिदखाँ की चार आँखें हुईं (क्योंकि वाहिद के हँसने पर मार्गन की निगाह उस पर पड़ी थी) मार्गन का चेहरा पीला-जर्द पड़ गया था। मगर वह ढंग बदलकर चुपचाप खड़ा रहा। इतने में फिर बंदूक का फैर हुआ, अब तो लोगों को खड़े रहते न बन पड़ा। लाला घांसीराम जी झटपट ऊपर चढ़ गए और बाकी लोग भी धीरे-धीरे खसक गए और उनमें मार्गन भी निकल गया, मगर सबके दिलों में यही सवाल हो रहे थे—

"यह शख्स कौन था, यहाँ क्यों आया, यह बंदूकें कैसी चलीं, मामला बेढब दिखाई देता है।"

———

दूसरा परिच्छेद

Oh! let me live for ever on those lips!
The nectar of the Gods to these is tasteless—

Dryden.

संध्या का समय है, आकाश निर्मल है और सूर्य भगवान् भी लाल-लाल किरणें दिखाकर अंतिम बिदाई ले रहे हैं, संसार के सकल धंधे खूब जोर-शोर से चलकर फिर मंद हो रहे हैं। नर-नारियों के टोल के टोल सड़क पर चले जा रहे हैं, दिन भर के थके-माँदे मजदूर भी छुट्टी पाकर अपने-अपने घरों की तरफ रवाना हो रहे हैं, बाजे-बाजे बेचारे ऑफिस के क्लर्क्स भी इक्का-दुक्का जल्दी-जल्दी घर की तरफ कदम बढ़ाए चले जाते हैं। ऐसे समय में जब कि संसार के सब कामकाज बंद हो गए हैं, देखो! वह देखो, वह अबला नारी खिड़की में बैठी किसकी राह देख रही है? इस रमणी की अवस्था अभी १६ या १७ वर्ष की होगी। काली किनारेदार, रेशमी साड़ी में से चेहरा क्या मालूम होता है मानों शरद् ऋतु का चंद्रमा बादलों को फाड़कर निकल रहा है। मगर अफसोस! न जाने वह इस कदर उदास क्यों है, फिर भी कल नहीं। कभी उठकर मेज पर किताब खोल बैठती है और कभी फिर गुस्से में आकर फेंक देती है। फिर खिड़की की तरफ नजर करती है और फिर वही उदासी चेहरे पर छा जाती है। अब की बेर वह तीन-चार मिनट बराबर खिड़की से देखती रही, फिर जाकर पलँग पर लेट रही। वहाँ भी चैन कहाँ? फिर उठी और फिर

वहीं खिड़की पर निगाह। इस चंचलता को देखकर मालूम होता है कि वह किसी की बाट जोह रही है। एकाएक एक मुसलमान नवयुवक हाथ में पतला बेंत लिए और कलाई पर घड़ी बाँधे जल्दी-जल्दी उस मकान की तरफ बढ़ा। युवक का रंग गोरा, कद बीच का और रूप सुंदर है। उसे देखते ही सुंदरी द्वार पर आ गई, मगर अब की दफा उसका ढंग कुछ और ही था, कपड़े भी बदले हुए थे और चेहरे का रंग बिलकुल ही बदल गया था और गालों पर गुलाबी छा गई थी। नीची गर्दन किए हुए उसने अपने प्यारे प्रेमी को भीतर बुला लिया और प्रेम-संभाषण करने लगी।

हसीना०—आज तो दो घंटे से बाट देख रही हूँ, न जाने तुम इतने बेमुरव्वत क्यों हो गए हो!

अहमद०—क्या करूँ, बहुत चाहा; मगर न जाने क्यों आने में देरी होई गई। मैं न भी आया तो क्या हुआ, मेरा सिर्फ बदन वहाँ था, दिल तो हमेशा तुम्हारे पास ही रहता है। तुम्हारे भाई साहब का क्या हाल है, मुझे तो कुछ शक.....................

इतना भी नहीं कहने पाए थे कि किसी ने किवाड़ पर टक्कर मारी। रंग में भंग पड़ गया। अहमद ने जल्दी-जल्दी उतरकर पिछाड़ी के रास्ते से सड़क का रास्ता लिया। हसीना भी डर के मारे काँपती हुई किवाड़ खोलने नीचे गई, मगर वहाँ जो हुआ उसे देखकर उसने आँखें बंद कर लीं।

तीसरा परिच्छेद

O, that I were a glove upon that hand,

That I might touch that cheek!

Room. Jul.

चंडाल-चौकड़ी

रात्रि के ग्यारह बजे का समय होगा, पानी भी धीमी-धीमी बूँदों से बरस रहा है, रात अँधियारी है, श्रावण का महीना है, सब लोग इस समय घर्राटे की नींद ले रहे हैं, मगर उस मकान में यह कैसी सलाह हो रही है? वाह जी वाह! यह सलाह है, वहाँ तो खूब धड़ाके की महफिल हो रही है। यह देखो उस सफेद चादर के चारों तरफ कितने सफेद पोश डटे हैं, मगर महफिल की जो खास चीज है या कहिए जड़ है, वह तो यहाँ है ही नहीं। शायद यह कुछ और हो? नहीं जी नहीं यह और कुछ नहीं है! देखो वह देखो वह 'बी शरीफ जान' अपनी नायिका के साथ आ रही है, कहिए अब तो सब बातें आई आपके समझ के बीच में—

नाचती परियों के चलकर देखिए वह कुञ्जवन;
जेवरों की शान पेशवाजों की वह बाँकी फबन।
तान पूरे की तरारूँ रूँ वह तबले की ठनक;
साथ सारंगी की चूँचूँ के मजीरों की खनक।
रूप की तेजी निगाहों की वह उस पर मार-मार;
वह समय का ठाट वह परियों के जोबन का निखार।

वेश्या की उम्र इस वक्त तो देखने से शायद सत्रह अठारह वर्ष से ज्यादा मालूम नहीं होती है। रंग भी गोरा नजर आता है, बस आते ही सबकी शकलों पर हँसी की झलझलाहट दीख पड़ी और आपस में कहने लगे—वाह जी वाह! वेश्या भी एक ही है ऐसी खूबसूरत तो दुनिया में शायद दूसरी न होगी। औरत क्या चाँद का टुकड़ा है। वह देखो किस अंदाज से आ रही है, मेरा तो दिल निकला जाता है....यह बातें महफिल में हो रही थीं, बाबू फूलचंद जो कि महफिल में सरपंच मालूम होते हैं और लोढ के सहारे बैठे हैं उनका तो और भी बुरा हाल है, वह तो बिलकुल इश्क में गर्क हुए मालूम पड़ते हैं। वेश्या ने आते ही हाव-भाव दिखाना, मंद-मंद मुस्कराना, बातें करने में कभी कटाक्षपात करना, कभी लज्जा से मुख फेर लेना शुरू किया। वह सब लोगों को सलाम कर भोंदूमल की शिक्षा के अनुसार फूलचंद पर भौओं के दो-एक तीर चलाकर नियत स्थान पर बैठ गई, थोड़ी देर पिसवाज की सजावट और थोड़ी देर पानों के स्वाद चखने में सर्फ कर अब इनका नाच शुरू हो गया। उसने कई एक टप्पे-ठुमरियाँ गाने के बाद नाचकर यह गजल गाना शुरू किया—

"सीने से लगा लो" यह लफ्ज निकलते ही सब लोग शाबाश-शाबाश कहने लगे, बड़ी तारीफ के बाद अब शरीफ जान के चलने की बारी आई, फिर एक कटाक्ष फूलचंद पर किया गया, और बड़ी नर्मी से पूछने लगी "क्यों साहब इजाजत तो है न?" फूलचंद तो बिलकुल उल्लू बन ही चुका था, आँखों से आँसू टपकाकर बोला—"क्या कहूँ साहब लाचार हूँ, दिल तो यह कहता है कि आपको अपने से अलाहिदा न

होने दूँ मगर खैर, फिर जल्द मुलाकात होगी।" शरीफजान भी नखरा दिखलाने से न चूकीं, झट जवाब दिया "अजी साहब, आप इतना क्या कहते हैं, मैं तो पहले ही अपना दिल शाद कर चुकी थी और क्या मेरा दिल आपसे अलाहिदा होने को चाहता है; मगर लाचारी...."

चौथा परिच्छेद

What! do they think me such a milky boy.

To pay my vengeance with a few soft words.

Thomson.

रात के नौ बजे अँधियारी रात में दो आदमी एक मकान में बैठे कुछ बातें कर रहे हैं। एक कह रहा है, "क्या कहें यार, आज तो निशाना साफ चूक गया, खुद ही आफत में पड़ते-पड़ते बच गए। रोजा माफ कराने गए, नमाज गले पड़ी। मगर किसका दम है, जो मेरा मुकाबिला करे, एक वाहिद नहीं सौ वाहिद भी आ जायँ तो मेरा बाल बाँका नहीं कर सकते। खैर, आज नहीं कल, कल नहीं परसों, जाता ही कहाँ है। मगर हाँ, यह तो देखो, यह भी एक अचंभा-सा हुआ। वाहिद यहाँ क्यों आया? रज्जन ने तो कहा था कि उनके यहाँ कोई ऐसा वैसा शख्स नहीं आता, इसीलिये फूलचंद से मिलने चला गया; मगर खुदा की कुदरत कि दुर्गादास भी और

वाहिद भी दोनों मौजूद, मगर वाह री ! तकदीर कैसे बचे खैर यह तो जरूर अब कुछ खटराग करैंहींगे, हमें होशियार होना चाहिए।

इतना नहीं कहने पाया था कि किसी ने कहा—"अरे क्या खबरदार रहेगा देख यही वाहिद तुझे बतला देगा कि तू कौन है। क्या तू समझता है कि मैं तुझे जानता ही नहीं, मैं जब चाहूँ तब तुझे पकड़ सकता हूँ, यह सब तेरी भूल है, मैं एक दिन तेरे सब पापों का भंडाफोड़ करूँगा, होशियार रह।" यह बातें सुनते ही मानो उस पर कुठार गिर पड़ा। सहम कर जैसे तुषार मारा खेत नीचे को लटक आता है, वैसे ही काँप कर झुक गया, उसकी आँखों के सामने वाहिद ही वाहिद फिरने लगा; सोचने लगा क्या करूँ, सब मटियामेट हो गया, यह कम्बख्त यहाँ कैसे आने पाया और क्या सचमुच ही इसे मेरे सब भेद मालूम हो गए, बड़ा गजब हुआ, खैर अब वृथा पछताने से क्या होता है, उसे ढूँढ़ें तो सही, कहाँ गया होगा, शेर की माँद में आकर अब गीदड़ भाग थोड़े ही सकता है। युवक उठा और चिराग लेकर ढूँढ़ने लगा। यह कोठा देख, वह कोठा देख, वह जीना देखा, मगर कहीं पता न चला। तब तो उसे मन में बड़ा ही भय हुआ। सोचने लगा "क्या सचमुच ही सब भंडाफोड़ होनेवाला है।" वाहिद क्या भूत है जो अभी यह कह गया और फिर गायब ? यह बुरा आस्तीन का साँप पैदा हुआ। पहले हमें उसी के पकड़ने की फिक्र करनी चाहिए, फिर कुछ दूसरा काम करेंगे। उन्हें भी इस बात से इत्तिला दे देंगे। अब दो आदमियों का मुकाबिला है, देखें क्या होता है, या तो वह ही नहीं, या हम ही नहीं, देखा जायगा।

वाहिद भी घर पर आए और यह कहते खटिया पर जाकर पड़ रहे—

"मामला बड़ा नाजुक है, इससे अब गाफिल नहीं रहना चाहिए। जाने अब यह जालिम किस-किस पर सितम ढाएगा, खैर, बचा अच्छे के पाले पड़े हो, अब तो जभी इस शहर में मुँह दिखाना है, जब इस पाखंडी का पाखंड दूर करें। मेरी समझ में मार्टिन को भी इसमें मिला लें, क्योंकि वह होशियार डिटेक्टिव है, उसके मिलने से काम में सफलता की पूरी आशा होगी। वह इस मामले में तो पहले ही पढ़ चुके हैं, मगर दूसरी तौर से, उन्हें क्या मालूम कि मामला ऐसा है, खैर, सुबह को वहाँ चलेंगे, एक से दो भले।"

पाँचवाँ परिच्छेद

May sorrow. shame & sickness overtake her

And all her beauties, like my hopes be blasted.

Rome.

हसीना क्या देखती है कि अब्दुलरज्जाक हाथ में नंगा छुरा लिए ऊपर को चढ़ा। वह भी काँपती-काँपती उसके पीछे हो ली। ऊपर पहुँचते ही अब्दुलरज्जाक ने उसकी कलाई जोर से पकड़ कर कहा "क्यों री बेशर्म, तुझे कुछ भी हया नहीं, हाय दिन दहाड़े पराए मर्द से बातें कर रही थी, जल्द बतला वह कौन शख्स था वर्ना अभी इसी छुरे से........

हसीना०—भाई मैं.......

अब्दुल०—चल दूर हो बेहया, बेगैरत।

हसीना०—भाई साहब मुझसे ऐसा कौन सा कुसूर हुआ है जो आप ऐसे नाराज होते हैं।

अब्दुल०—चोरी और सीनाजोरी, गैर शख्स से मिलती है और पूछती है क्या कुसूर हुआ।

हसीना०—(गरदन नीची करके) बेशक कुसूर हुआ; मगर आइंदा.........

अब्दुल०—खैर, जैसा करोगी वैसा भरोगी, बिलफैल यही मुनासिब है कि तू 'आजमगढ़' के किले में रहे और चार आदमी तेरी निगहबानी करें। अब तक मुझे न मालूम था कि तू इस कदर हाथ ही से निकल जायगी।

हसीना०—'यह फरमान मंजूर है मगर.........'

अब्दुल०—बस, चुप रह...............

लाचार हो बेचारी को चुप रहना पड़ा और वह गुस्से में भरा चारपाई पर बैठ गया।

छठवाँ परिच्छेद

Thought lost to sight, to memory dear.

भोंदूमल—सच कहिए लालाजी गाना कैसा है, रंडी क्या है बस आफत है...............

फूलचंद—बस, बस, अब ज्यादा तारीफ करके मुझे और मत सताओ, मैंने तो ऐसी औरत कहीं नहीं देखी। मगर हाँ,

क्यों भोंदूमल, इसे तो कोई सूरत से अपनी बनाना चाहिए, जो माँगे सो दो मगर अब यह दूसरे से बात न करने पावे, मैं तो अब उस पर मर चुका।

"उड़े सर आबरू जाए मिले तन खाक में क्या गम ;
नहीं ताकत कि मैं अब दामे उल्फत से निकल जाऊँ।"

भोंदूमल—अजी लालाजी भला आप भी कैसे कमजोर दिल के आदमी हैं, जरा सी बात से ऐसे परेशान होते हैं, उस जैसी सौ को दस मिनट के अंदर आपके हुकुम से हाजिर कर दूँ तब तो मेरा नाम 'भोंदू' और आप क्या कहते हैं वह तो खुद आपको अपना दिल हवाले कर चुकी है, तब फिर देरी क्या ? मगर यह रंडी जात है इनका भरोसा भी नहीं, ताहम यह बड़ी भलीमानस नजर आती है, बस, मैं अभी जाता हूँ और बात पक्की किए आता हूँ।

फूल०—हाँ जाव मगर..................

भोंदू०—बस, अब अगर मगर काहे की, अब तो काम फतह ही समझिए मैं जाता हूँ।

सातवाँ परिच्छेद

Why stand you thus amaz'd.

Sweetman.

पाठक इस बात की चिंता में होंगे कि वाहिद किस तरह उस युवक के मकान पर पहुँचा और फिर किस तरह वहाँ से भाग आया। जिस समय मार्गन साहब घासीरामजी के

मकान से खिसके थे, उसी समय वाहिद भी उनके साथ हो लिए थे, और जब वह मकान पर पहुँच गए, तब यह अँधेरे में झट दूसरी तरफ से निकल जिस कमरे में वह जाकर लेटे उसके बाजूवाले में खड़ा रहा। जिस समय युवक ने यह बात कही वह फौरन् जवाब देकर भागा, मगर भागने का कोई रास्ता न पाया, लाचार वह भागते-भागते ऐसी कोठरी में पहुँचा जहाँ अंगड़-खंगड़ पड़ा था। मगर मार्गन ने वहाँ भी उसका पीछा न छोड़ा। लाचार वह झट जीने से चढ़कर एक दूसरे कमरे में पहुँचा, वहाँ जाकर देखता क्या है कि एक बहुत हसीन, नाजनी गालों पर हाथ रक्खे बैठी है। इसके आते ही उसने बड़े जोर से चीखना चाहा, वाहिद ने भी समझा कि अब पकड़े गए, पर हिम्मत कर और खुदा का नाम लेकर उसने जेब से पिस्टल निकाल ली और उसके सिर की तरफ निशाना कर, उसे डराना शुरू किया। यह बेचारी और भी सहम गई और धीमी लड़खड़ाती हुई आवाज से पूछा कि "तुम क्या चाहते हो?" उसने कहा कि "एक आदमी नीचे की तरफ से मुझे पकड़ने आता है और पकड़ने पर जिंदा न छोड़ेगा, अगर मुझे आप कहीं छिपा दें, तो बड़ी इनायत हो।" उस अबला ने भी रहम खा उसे परदे की आँड़ में छिप जाने को कहा। मार्गन भी ढूँढ़ता-ढूँढ़ता वहीं आ पहुँचा और उस बेचारी बाला से पूछने लगा "क्या, यहाँ कोई शख्स आया था!" उस बेचारी ने डरती हुई आवाज से जवाब दिया "यहाँ? यहाँ तो कोई नहीं आया।" फिर उस युवक ने कहा 'सच बता' उसने इस बार जरा तेज होकर पूछा तिस पर भी उसने जवाब दिया "अपनी कसम"। यह सुनकर फिर मार्गन जाकर

पलँग पर लेट रहा, और बड़े शशोपंज में पड़ा। सोचा तो था कि अब कहाँ जाता है, मगर अब तो चक्कर में पड़ना ही पड़ा। सोचा, जब अपने घर में ही न पकड़ा गया, तो बाहर तो क्या हाथ आता है। पलँग पर पड़ा-पड़ा काँपने लगा। इधर जब वाहिद ने देखा कि मार्गन गया, तब यह भी परदे से बाहर निकले और उस स्त्री को सराहने लगे। मगर ऐसे मौके पर वक्त खोया नहीं जाता। थोड़ी देर में उठकर निकले, पर जिस तरफ कि दरवाजे से बाहर निकले मार्गन की आँख उस पर पड़ी और इसने झट बंदूक छोड़ी। मगर डिटेक्टिव ऐसे बेखबर नहीं होते, साफ बचकर निकल गए। मार्गन ने सोचा कि जरूर यह वहीं उस स्त्री के पास छिपा होगा, और कहाँ छिप सकता है? "हाय इस वक्त इसने कैसा धोखा दिया!" यह कहता हुआ वह ऊपर चढ़ गया।

यह स्त्री और कोई नहीं हसीना ही है। जिस समय वाहिद इसके पास पहुँचा, यह सब बात समझ गई कि अब्दुल्ला इसे सताएगा। बस, आज इसी की वजह से वाहिद की जान बची।

आठवाँ परिच्छेद

Oh! what perfections must that virgin share,
Who fairest is esteem'd where all are fair.

Prior.

आज हम पाठकों को ऐसी जगह ले जाना चाहते हैं जहाँ जाने से निश्चय ही वे नाराज तो होंगे, मगर

मनुष्य को पहले भले और बुरे दोनों को देख लेना चाहिए और फिर अपना कर्तव्य-पालन करना चाहिए; क्योंकि जब तक बुरी चीज नहीं देख ली जाती, तब तक उसकी बुराई और अच्छी चीज की भलाई नजर नहीं आती—चलिए, पाठक आज हम आपको सोनागाछी की सैर करा लावें। वैसे तो जरूर ही आप जाते हुए झिझकोगे, मगर नहीं चलिए दूर से ही वहाँ का रंग तो देख आइए।

देखिए! वह देखिए!! उस खिड़की के अंदर क्या हो रहा है। एक काली कलोटी स्त्री-जिसके बाल भी भूरे हो गए हैं, कोठे के अंदर क्यों बैठी हुई कंघी चोटी वगैरह कर रही है? देखिए उसने वह शीशी से निकालकर बालों पर क्या पोता— अरे! देखते ही देखते बाल चमकीले स्याह रंग के हो गए, अब कौन कहेगा कि बाल भूरे रंग के हैं। अब उसने दो-तीन बार आइने में देखकर जब इतमीनान कर लिया, तब चेहरे की फिक्र हुई। वह देखिए, वह उस आले में से क्या एक डिबिया सी उठा लाई है! और आटा सा हाथ पर निकाल कर रक्खा है। लो, वह उसे मुँह पर रगड़ने लगी। इसे लगाने के बाद उसने फिर अपना मुँह आइने में देखा, खुशी के चिह्न उसके चेहरे पर मालूम पड़े। अब उसने समझ लिया कि फँसाने का जाल तैयार हो गया या कहिए धोखे की टट्टी तैयार हो गई। अब वह लाल-हरे रंग की चोली पहने और हल्के गुलाबी रंग की साड़ी ओढ़े कैसी भली मालूम होती है। उसने अपनी कलाई बहुत से गहने वगैरह पहनकर ढाँक ली है। पाठक, अब कहिए यह वही बुढ़िया है जिसे आपने कुछ समय पहले यहीं देखा था, या कोई और स्त्री है। बेशक! आप अचंभे में

पड़ेंगे और कहेंगे कि "यह ढंग अजब है।" अच्छा अब सुनिए, उसने कमरे में फर्श और एक कोने में निवाड़ का पलँग बिछवाया और बैठ गई।

अब आप जरा बाजार की तरफ ध्यान करें—देखिए, एक बनिया सिर पर पगड़ी बाँधे कैसा 'मटर-पटर' करता हुआ जल्दी-जल्दी अपनी ओर चला आ रहा है—देखिए, देखिए, वह तो उसी मकान में घुस गया जिसमें आप अपने 'सब कर्म' देख आए हैं। उसने उठकर इनका आदर-सत्कार किया और पलँग पर बैठाया। आते ही इन्होंने कहना शुरू किया "हाँ बीबी साहिबा, कहिए अब क्या इरादे हैं—हम तुम्हारा और लालाजी का मेल कराए देते हैं, मगर हमारा भी कुछ खयाल रहे। आपके ७५) महीना कराये देता हूँ, जिसमें ५०) हमारे और २५) तुम्हारे और जो इनाम-इकराम मिले, उसमें अद्धम-अद्धा। कहिए आप इसमें राजी हैं या नहीं।"

बी जान ने जवाब दिया—"लाला साहब, आप तो बिलकुल घबड़ाए ही जाते हैं, जल्दी काहे की, अभी बैठिए, पान-वान खाइए, फिर जो कुछ होगा, देख लिया जावेगा।"

यह कहकर बी साहिबा ने पान लगाया और लाला भोंदूमल को दिया, मगर देते-देते फिर रुक गईं और आवाज देकर कहने लगीं—"अरी अम्माँ! वह इलायची कहाँ रक्खी है, दे तो दो।" लाला भोंदूमल बोल उठे "अजी रहने दीजिए, इलायची की क्या जरूरत है।" फिर पान और इलायची खाकर बोले—"कहिए क्या मरजी है!" हसीन ने इनका हाथ पकड़-कर कहा—"लालाजी, आप तो बिलकुल ही वह करते हैं (दिल में) भड़ुए को शरम भी नहीं आती, कहता है 'पचास में और

पचीस तुम' मुझे तो कुछ करना भी पड़ेगा तब भी पचीस ही और यह कोरे पचास मुफ्त ले लेगा। खैर, इस वक्त तो जैसे निबटे निबटाओ, पीछे मैं हूँ, या यह है। भला देखिए........ वह कहने भी नहीं पाई थी कि भोंदूमल ने बीच ही में काट दिया और बोले "बस-बस बी साहिबा, ज्यादा नहीं यही होगा, तुम नहीं तुम्हारी बहन और। मैं तो यही लूँगा" कहकर उठने लगा। बीबी ने भी समझा कि मूआ जाता है, झट पैंतरा बदला और हाथ पकड़कर बैठा लिया और बोली "बड़ा गर्म मिजाज है साहब, ओहो" भोंदू ने कहा, "अजी नहीं, मुझे जल्दी जाना ही है। देखो शरीफा. अमीर जान मुझे इससे ज्यादा देने को मुस्तैद हैं, मगर मैं तो तुम्हें ही ले जाना पसंद करता हूँ।"

बी॰शरीफा॰—खैर, जो आप यही कहते हो तो यों सही, पचास मेरे और पचहत्तर आपके, वह तो आपके हाथ में है ही, जैसा हो वैसा कर लेना, इससे मेरे भी बढ़ जायँगे और आपके भी बढ़ जायँगे और उनको कुछ मालूम भी न होगा, रही इनाम-इकराम की सो देखा जायगा।"

भोंदू॰—"नहीं साहब, देखा क्या जावेगा, उसमें भी अपनी जबान से आधा साझा कह दो, फिर देखो मेरी कारस्तानी, किस तरह से तुम्हारा घर रुपयों से भर देता हूँ, लेना तुम्हारे अख्तियार और दिलाना मेरे अख्तियार, जो तुम मुँह से माँगो, वह मिला ही समझो। क्योंकि इसमें मेरा भी तो उतना ही फायदा है जितना तुम्हारा।"

बी शरीफा सोचने लगीं कि किसी सूरत से खुद मिल तो जाऊँ फिर इसको तो अच्छी तरह देख लूँगी, फिलहाल जो यह

कहता है वही सही, क्योंकि यह अपने लालच से मुझे खूब माल दिलाया करेगा और इसलिये उसका साझा जरूरी है।

भोंदू०—"क्यों साहब सोचने क्या लगीं, क्या आपका मंशा है कि मुझे कोरे ही टरकाओ।"

शरीफा०—"अजी नहीं-नहीं, क्या ऐसा हो सकता है; जैसा आप कहते हैं वैसा ही सही, मगर पचास और पचहत्तर और इनाम-इकराम में आधा साझा ही रहेगा।"

भोंदू०—"खैर यही सही, मगर खयाल रहे कि बनावे में किसी किस्म की कमी न रहे।"

शरीफा०—"भला यह आपके कहने की बात है?"

भोंदू०—"अच्छा, तो बस कल ही से आपकी तनख्वाह शुरू हुई, शायद कल मैं उन्हें लाऊँगा—बंदगी—"

शरीफा ने आदाब अर्ज किया और चिराग उठाकर भोंदूमल को नीचे तक उतार आई और फिर पलँग पर लेटकर मन-ही-मन कहने लगी—"वाह! कैसा उल्लू बनाया शाबाश!!"

नवाँ परिच्छेद

हसीना०—या खुदा, यह क्या सितम ढाया है! क्या अब्दुलरज्जाक मेरा भाई है? हरगिज नहीं! भाई होकर क्या वह मुझे ऐसी जगह भेजता। उसने मुझे भेजते वक्त कहा था कि जा तू किले में रह, क्या यह किला है? और जो मुझे किले ही में भेजना था, तो बेहोश करके भेजने का क्या मतलब? न मालूम यह क्या गोरखधंधा है, कुछ समझ में

नहीं आता। यह आदमी जो मुझे बार-बार डराता, धमकाता है और बुरी-बुरी बातें सुनाता है, हिंदू नजर आता है, न मालूम इसकी अब्दुलरज्जाक तक कैसे रसाई हुई, और अब्दुलरज्जाक ने क्यों मुझे इसके पास भेजा है, क्या उसको यह बातें मालूम हैं कि हसीना पर यह जुल्म, यह सितम हो रहे हैं? नहीं! या तो उसको इन बातों की खबर नहीं है और या मेरा भाई नहीं है, मगर क्या ऐसा हो सकता है कि अब्दुलरज्जाक मेरा भाई न हो? अगर ऐसा होता तो क्यों वह मुझे इतना प्यार करता और ऐसे लाड़-चाव से रखता? उसने कल के पेश्तर कभी कड़ी बातें नहीं कहीं——

हसीना इन सब प्रश्नों को अपने दिल से ही पूछती थी और गरौ कर रही थी कि सामने से फूलचंद आता नजर पड़ा। यह जानती थी कि फूलचंद की और मेरे भाई की बहुत ज्यादा मुहब्बत है और अब तक हमेशा वह मुझसे 'बहन' के भाँति बर्ताव करता रहा है, यह क्या मुझे छुड़ाने आया है?

पाठको! यह तो आपको मालूम हो ही गया कि हसीना को अब्दुलरज्जाक ने एक कोठी में रात के वक्त बेहोश करके भेज दिया है और हसीना को इस वक्त तक भोंदूमल ने निहायत दर्जे तंग कर रक्खा था, वह बेचारी अपने हृदय में ऊपर लिखी भाँति बातों को विचार ही रही थी कि किसी के आने की आहट सीढ़ियों पर सुनाई दी। हसीना चुपचाप कोने में जाकर बैठ गई। इतने में न जाने भोंदू भी कहाँ से टपक पड़ा और झपटकर हसीना की कलाई पकड़ ली। और तीन-चार आदमी आ गए और शराब उड़ने लगी। एक गाने लगा——

हाँ चले प्याला दमादम रात जाती है चली ;
गाड़ दो अब सुख के झंडे खोल दो दिल की कली ।
चार दिन की है जवानी घर में है दौलत भरी ;
जो न सुख लूटा तो फिर किस काम की है जिंदगी ।

(हा !) यह क्या कुल-कलंक कुपूत इस कुल में पैदा हुआ कि आज इस तरह निडर हो शराब उड़ा रहा है। इसके पिता को देखो कि यदि शराब उसे छू भी जाय, तो वह बेचारा तीन बार स्नान करे..........

इस तरह जब शराब का जोश फैला, तब इन चांडालों में से एक ने उठकर फिर हसीना का हाथ पकड़ा और कहने लगा—

"दिल में रखना बेवफाई रश्क गुलशन छोड़ दे ;
वस्ल का इकरार कर, इनकार पुरफन छोड़ दे ।"

और हसीना को जबरदस्ती शराब पिलाना चाही—(पाठको ! आपके संतोष के लिये लिखे देते हैं कि यह शख्स फूलचंद ही था) हसीना का खयाल अब तो एकदम बदल गया, उसको चक्कर-से आने लगे तथापि उसने शेरनी की तरह तड़पकर कलाई छुड़ा ली और गरज कर कहा—"चांडालो, दूर रहो मैं तुम्हारा मुँह देखना गुनाह समझती हूँ, हटो दूर रहो !"

मगर इन सब पर शराब ने अपना रंग जमाने में कसर न रक्खी थी, और शर्म-हया तो इस वक्त ताक पर रख ही दी गई थी। वह फिर लड़खड़ाती हुई जबान में यह शेर पढ़ने लगा—

"जमीने चमन गुल खिलाती है क्या-क्या ;
बदलता है रंग आसमाँ कैसे-कैसे ।"

यह सुनकर हसीना का बदन थर-थर काँपने लगा—
"एक आलम पर हमेशा गरदिशे आलम नहीं ;
नेक कामों के लिये दुनिया में वसअत कम नहीं।"

इस पर फिर उस शख्स ने कहा कि देखें अब तू कैसे बचती है, और यह कहकर उसने एक नंगा छुरा निकाला और हसीना को दिखाया, मगर वह इससे कब डरनेवाली थी! नेकनीयत स्त्रियों को तो मौत बुरे कामों के नाम लेने से भी ज्यादा प्यारी होती ही है। उसने छुरा देख सिर झुका कहा—
"बड़ा अहसान हो तेरा कि सर तन से जुदा कर दे ;
कि ऐसी जिंदगानी से बस गारत खुदा कर दे।"

इस पर उस चांडाल की जबान रुक गई और वह गुनगुनाता लड़खड़ाता दूर हट गया। धीरे-धीरे सबके-सब रफूचक्कर हुए, थोड़ी देर बाद फूलचंद फिर बोला "प्यारी! देख तू मेरा कहा मान और मुझसे शादी कर ले, अभी तक तू बिन ब्याही है, कोई हर्ज नहीं, अगर तू मुझे पसंद करे, देख मैं हिंदू होकर किस तरह तेरे वास्ते अपने धर्म को खोता हूँ। आ, आ, प्यारी जरा तो मुँह से बोल, देख! तेरी खुशामद करते-करते मेरा मुँह भी सूख गया।" यह कहकर वह हसीना के पैरों पर गिर पड़ा, हसीना और दूर सरक गई और कहने लगी—

"देखिए आप मुझे छोड़ दीजिए, मैं आपके पाँव पड़ती हूँ मुझे ज्यादा तंग न कीजिए।"

फूल०—"प्यारी क्या मैं कम खूबसूरत हूँ?"

हसीना०—"हाय! हाय!!"

"हम दिल में हसीनों की तमन्ना नहीं रखते ;
यूसुफ भी अगर आये तो परवा नहीं करते।"

फूलचंद—"यह तो सच है, मगर देखो हम तुम पर आशिक हो चुके, जान अपनी दे चुके, ईमान अपना खो चुके।"

हसीना०—"हाय ! ईमान-सी दौलत हाथ से खोना नेक मर्दों का काम नहीं—"

"बदकारों को इस दहर में इज्जत नहीं मिलती ;
सब मिलता है ईमान सी दौलत नहीं मिलती।"

फूलचंद—"खैर, मैं अब समझ गया, मालूम हुआ कि तू अब मेरा कहा नहीं मानेगी, देख इसी जगह सड़-सड़कर मर जायगी, नहीं तो मान ले मेरा कहा।"

हसीना०—"राजी हैं हम उसी में किस्मत में जो लिखा है।"

यह जवाब सुनकर वह वहाँ से चला गया।

दसवाँ परिच्छेद

I pray thee, cease thy counsel,
Which falls into mine ears as profitless,
As water in a sieve.

सेठानी—मुनीमजी, लल्ला का हाल बिगड़ा हुआ नजर आता है, न-जाने उसकी कैसी सोहबत बिगड़ गई है। रात के बारह-बारह बजे आता है, और कभी-कभी रात-रात भर गोते लगाता है, यह बेचारी बहू ऐसी भलीमानस है ! परमेश्वर करे लाख वर्ष जिए, कभी बुराई करना तो अलग रहा,

उल्टे बड़ाई करके बात को टाल देती है, परंतु हरदेई की बेटी ने कहा था कि उनका हाल ठीक नहीं है, आधी-आधी रात बाद आते हैं, जब तक यह बेचारी बैठी-बैठी राह देखे है फिर खाना पीना तो किसका, बस यों ही काम करके लेट जाए है वह बात भी नहीं करता है। अब तुम्हीं इस घर में बड़े बूढ़े हो, बतलाओ तो क्या करना चाहिए, कहीं ऐसा न हो कि छोरा हाथों से निकल जाए।

मुनीम—क्या कहूँ, सेठानीजी, मैं खुद ही इस बात का जिक्र आपसे करना चाहता था, शर्म के मारे कुछ नहीं कहता था। नौकरानियों से इस लल्ली का भी हाल मालूम हुआ कि बेचारी रात-दिन रोया करती है, परमेश्वर इसका भला करे! और उनकी तो आप क्या पूछती हो, दो-एक ऐसे मिले हैं कि राम ही सुधारे तो सुधरे। एक तो वह भोंदू जो उस मोजी का छोकरा है, इनका लँगोटिया यार बना है। कहाँ तक कहूँ, इनका तो बहुत ही बुरा हाल हो गया है। कई बातें सुन चुका हूँ, पर क्या कहूँ, मुझसे तो हद्द से ज्यादा नाराज हैं। एक रोज बातों ही बातों में मना किया था तो उल्टे गाली-गलौज पर आ गए और उस रोज से बात भी नहीं करते, खर्च का भी कुछ ठिकाना नहीं है। पहले सेठजी ने कहा था कि सौ से ज्यादा न बढ़ने पावें, पर अब क्या ठिकाना है, सौ की जगह हजार का भी ठिकाना नहीं है। इसी महीने में कई एक बिल अलग आए पड़े हैं—एक तो कल ही तीन सौ इकहत्तर रुपए नौ आने का (Whitea-way Laidlaw) ह्वाइट अवे लेडला का आया था, पर क्या करूँ, सेठजी से बगैर कहे ही नाम माँड कर दे

दिवा देता हूँ—माल तो उन्हीं का है मगर क्या करूँ अब कई बातें सुनकर बहुत दुःख होता है।

सेठानी—मुनीमजी, जितनी बातें तुमने कहीं मेरे को तीर समान लगीं, क्या वही मोजी जिसको लालाजी ने तोरस के साल निकाल दिया था, जिसने बारकपुरवाली कोठी में से पैंतीस सै की गमन की थी, उसी का बेटा भोंदू अब उसका मित्र बना है—हाय! कोई और दोस्ती को ना मिला। क्या कहूँ, लालाजी जो इन बातों को सुनें, तो ना जानें क्या कहें! अच्छा हुआ उन्हें कुछ खबर नहीं है, परंतु एक बात से बुरा भी हुआ। उनसे कहते तो अभी तक सुधर भी जाता और रुपए-पैसे की तो वह हमेशा तंग ही बतलाया करता है, नरसों को मुफ्त ही से १२५) रु० ले गया है, कहता था कि दुकान से नहीं लेता। क्या करूँ मुनीमजी, समझाते बने तो समझाओ छोरा हाथ से गया, देखो लालाजी से जिक्र न करना। मैं भी आज समझाऊँगी, मान जायगा तो ठीक है।

सेठानी मुनीम को बिदाकर सोचने लगीं कि आज रात को फूलचंद आए तो जरूर समझाऊँगी। बेचारी को रात के ग्यारह बजे तक जागना पड़ा। जब मालूम हुआ कि फूलचंद जी आ गए हैं, तो वह धीरे-धीरे उनके कमरे तक आई और बोलीं—बेटा, फूलचंद! कहो कैसे हो, आज रात बहुत हो गई। इतनी रात तक बाहर ठहरने का अपना क्या मतलब! देखो, अब तुम स्याने हुए, होश सँभालो, कोठी का काम-काज देखो। बेटा, अब हमारा क्या भरोसा, आज हैं कल नहीं। अब सारा काम तुम्हारे ही हाथ है। मैंने कई बातें सुनी हैं, लुच्चे-

लुँगाड़ों का साथ छोड़ दो। जैसी अपनी इज्जत है वैसों ही से मिलें हैं..........

फूल०—बस, भावी तेरी तो अकल बिगड़ गई है, हमही तो एक साहूकार हैं, बाकी तो सब चोट्टे हैं ? और इतनी रात क्या, अभी तो ग्यारह ही बजे होंगे—सामने अब्दुल्ला के यहाँ ताश खेल रहा था, जिस पर इतनी बातें सुना दीं। तुम्हें कुछ मतलब नहीं, जैसा हमारे मन में आवेगा वैसा करेंगे, तुम मुझे बेफायदा के लिये न सताया करो। तुझे उसी बदमाश रिखीदास ने बहकाया होगा, कल ही उसको न निकाला तो नाम नहीं।

पाठकगण समझे, यह बातें किन-किन में हुईं—सेठानीजी इन फूलचंद की चाची हैं, माँ को मरे कई वर्ष हो गए हैं, यही चाची माँ से भी ज्यादा प्यार करती हैं, मुनीमजी भी पुराने और घर के बड़े शुभचिंतक हैं।

लीजिए! बेचारी समझाने गई थीं, वहाँ उल्टे लेने के देने पड़ गए। क्यों नहीं! जो फूलचंद सरीखे सुपूत बेटे पैदा न हों तो माता-पिता को ऐसे मृदु वाक्य कौन सुनावे ? अरे दुष्ट, तुझे इतना ज्ञान नहीं कि इन्हीं की बदौलत इतना बड़ा हुआ है। उन्होंने तेरे लालन-पालन करने में कितना कष्ट उठाया होगा। उन उपकारों का बदला यही कटुवचन है। हा विधाता! तेरी भी माया अपार है।

———

ग्यारहवाँ परिच्छेद

Thou art a traitor and a miscreant;

Too good to be so, and too bad to live.

अहा ! आज क्या सुहावनी रात है। संध्या के सात बजे होंगे, सूर्य देवता के बिदा होते ही चंद्र भगवान् ने अपनी शीतल किरनों से सारे संसार को शीतलमय कर रक्खा है। उस पर भी वर्षा-ऋतु और चंद्रमा का निकलना ! पाठक सोच सकते हैं कि प्रथम तो वर्षाऋतु में चंद्रमा का निकलना ही कितना हर्षदायक होता है, तिस पर पूर्णिमा का पूर्ण चंद्र तो अद्भुत आनंद दे रहा है। इस सुहावनी चाँदनी में उस महाविकट जंगल में देखो वह नव युवा पुरुष जिसको परम सुंदर कहने में कुछ हर्ज न होगा उस पहाड़ के टीले पर बैठा हुआ न जाने किस गुप्त विचार में मग्न है। चेहरे से विदित होता है कि उसकी उम्र २१ साल से कदापि ज्यादा न होगी, बदन पर सुंदर वस्त्र धारण किए हुए है। गौर से देखने से यह भी ज्ञात होता है कि वह मनुष्य हिंदू जाति का ही है। पास ही एक झरना जिसमें से थोड़ा-थोड़ा जल बह रहा है अनुपम छवि दिखा रहा है। इन सब बातों ने उस थोड़े से जंगल के टुकड़े को परम सुंदर और रमणीक बना रक्खा है। यदि हम इस शख्स को अपने मित्रवरों-सहित ऐसे रमणीक स्थान पर बैठे हुए देखते, तो समझते कि यह लोग सैलानी होंगे और यहाँ कोई गोट करने या हवा खाते-खाते आ पहुँचे हैं। इसकी बहार देखकर यहाँ रुक गए हैं और इसकी छवि देख-देखकर आनंद

प्राप्त कर रहे हैं, क्योंकि यह समय ही ऐसा सुहावना है और इस ऋतु में अक्सर सैलानी मनुष्य ऐसे रमणीक स्थानों पर पाए जाते हैं। परंतु यह शख्स यहाँ अकेला क्यों? शायद भंग-वंग पीकर अपने साथियों से बिछुड़ गया होगा! मगर नहीं-नहीं कब तक—क्या उसके मित्रों को उसका बिलकुल खयाल ही न रहा! उसके चेहरे से इस समय पूर्ण रूप से विदित होता है कि वह किसी नशे में भुत्त नहीं है—क्योंकि उसकी झुकी हुई आँखें विदित कर रही हैं कि इसके हृदय में विचार के घोड़े दौड़ रहे हैं। अहा! अब सब भेद खुल गया—देखो-देखो वह थोड़ी दूर पर जो एक बुर्ज-सा नजर आ रहा है, वही शायद इसके रहने का मकान है।

इसी अर्से में एक स्त्री हाथ में नंगा छुरा लिए हुए इस मनुष्य के पिछाड़ी आकर खड़ी हुई—हाय! हाय!! आज मालूम हुआ कि स्त्रियाँ भी ऐसा विकट स्वरूप धारण कर सकती हैं और हथियार बाँधकर मनुष्य के घात करने की भी चेष्टा करती हैं। इस समय तक यह खयाल था कि स्त्रियों का हृदय बड़ा कोमल होता है, परंतु हाय! आज मालूम हुआ कि इनके वाक्य मिश्री की तरह मीठे और मोम की तरह कोमल भी होते हैं और उसके साथ-ही-साथ यह विकट कार्य भी कर सकती हैं। हा! परमेश्वर, तेरी करनी सब अद्भुत है! कहाँ तो बेचारी वह स्त्रियाँ जिनके मुँह से वाक्य भी निकलना कठिन है, और कहाँ यह ढीठ स्त्री जिसने इस भयानक स्वरूप में यहाँ प्रवेश किया है। यह स्त्री उस मनुष्य के पिछाड़ी आन कर खड़ी हो गई, परंतु चंद्र भगवान् की कृपा से ज्यों ही वह खड़ी हुई उसकी परछाहीं उस मनुष्य के सामने पड़ी। शायद

आज अँधेरा होता, तो इस बेचारे के प्राण जा चुके थे, परंतु यह भी कोई अद्भुत प्रकृति का मनुष्य विदित होता है। उसको इस तरह अपने शत्रु के आने से कुछ भय होने के बदले कुछ पर्वाह भी न हुई। लापरवाही से कुछ पिछाड़ी की तरफ मुँह फेर कर हँसा और यह कहने लगा—

कमला, अहा! आज तो बड़ा साहस किया, मुझको मारने चलीं, यह न समझीं कि मारने जाकर कहीं खुद ही न मर जाऊँ। देख, कमला! तू मुझे मारने का विचार छोड़ दे। तू तो स्त्री है, अच्छे-अच्छे बहादुरों की भी मुझसे कोर दबती है। सैकड़ों जासूसों ने चाहा कि मेरा भेद पाएँ, मगर क्या हुआ करीमुल्ला के हवाले किए गए। मैं अगर तुझे मारना चाहता, तो कभी का मार चुका होता, मगर नहीं, मैं अभी तुझे प्यार करता हूँ। न मालूम तू मुझसे क्यों चिढ़ गई है—देख तो सही....

कमला—अरे चांडाल घोर पापी, नरपिशाच! तुझे शरम नहीं आती—हा! भगवन्! मेरे परलोक और इस लोक दोनों का बिगाड़नेवाला यही महापापी है। हाय! न मालूम मैं अपनी युवावस्था के आवेश में क्या-क्या कर गई, हाय! अब मैं किसी तरह मोक्ष के लायक नहीं, इस हत्यारे ने ऐसा बहकाया कि मैंने अपने-पराए किसी की नहीं सुनी, हाय! मैं अपना कुटुम्ब और घरबार छोड़कर इसी के साथ भग आई थी न! मैं नहीं जानती थी कि शैतान के बहकाने से यों मेरे धर्म और कर्म नष्ट हो जायँगे। इस मनुष्य ने उस समय मेरे हृदय में किस प्रकार का उत्पात मचाया कि कुछ भी न सोच सकी। इसने कैसी-कैसी मीठी बातें बनाकर मुझे लुभाया कि मुझे विधवापन की कुछ भी सुध न रही। उस समय मैंने कैसी-

कैसी बातें सनातनधर्मावलम्बियों को सुनाईं कि न विधवा-विवाह जारी होने देते हैं, और न लड़कियों को स्यानी होने देते हैं कि वह युवती बनकर विवाह करें। मगर हाय, अब मालूम हुआ कि इस तरह स्वतंत्र बनकर धर्म और परलोक गँवाने से घर में सास, ननँद, माँ और भावज के अधिकार में रहना कहीं अच्छा है—हाय, अब वह बातें याद आती हैं कि जब मेरे पति ही इस लोक को त्याग गए थे, तो मुझे शृंगार-भाव से मतलब ही क्या था। मैंने अपने को भगवद्भजन में क्यों लवलीन न होने दिया। मगर हाय! जवानी भी परमेश्वर ने कैसी वस्तु बनाई है कि मनुष्य बिलकुल अंधा हो जाता है, उसको बिलकुल नहीं दीखता कि मैं क्या कर रहा हूँ। क्या मैंने इसीलिये पृथ्वी पर जन्म लिया है कि अपनी सारी उम्र पाप-कर्म में बिताऊँ? हाय, परमेश्वर का डर बिलकुल नहीं रहा, हाय! मैं भी न-जाने क्या-क्या कुकर्म कर गई, मगर आज तक इस चाण्डाल को बदनाम न होने दिया। यह खबर किसी को कानोकान न होने पाई कि कमला को भगा ले जानेवाला यही नरकभागी फूलचंद है। फूलचंद यह तेरे ही करतूत हैं—अरे पापी! तू कहता है कि मैं तुझे अब भी वैसे ही चाहता हूँ। क्या समझता है कि मैं यहाँ चुपचाप ही मुँदी रहती हूँ, मुझे तो तेरा रत्ती-रत्ती हाल मालूम हो गया है, अब तू मुझसे क्या छिपाता है, मुझे तेरा सब भेद मालूम है। मैं यह भी जानती हूँ कि तू किसलिये उस मुसलमान बाला को यहाँ ले आया है और अब्दुलरज्जाक कौन है कि जिसको तूने उसका भाई बनाया है और उसकी मदद से तू उसे यहाँ लाकर उसका धर्म नष्ट करना चाहता है—अरे चाण्डाल! तेरे कीड़े पड़ें, हाय! तुझे

किसी का धर्म बिगाड़ने में कुछ कष्ट नहीं मालूम पड़ता, हाय! यही अबला का सर्वस्व है। तू इसे कुछ नहीं जानता। तू तो समझ चुका था मैंने इसको अपने कब्जे में कर ही लिया है, अब फिक्र काहे की। मगर यह सोच ले कि जब तक मैं जिंदा हूँ तेरे दुश्मन की दरकार नहीं, और उस हसीना का कोई बाल बाँका नहीं कर सकता है और मैं ही कोई दिन सारा भेद खोलकर तुझे और तेरे साथियों को सजा न दिलाऊँ तो.......

फूल०—"हे कमला! मैं तेरे अधीन हूँ, जो तेरे मन में आवे सो कर, तू मेरी जैसी है—मैं सच कहता हूँ कभी कम नहीं हो सकती, मेरी प्रीति वैसी ही है; मगर इस बात पर मेहरबानी कर, मैं सदा तेरा..............."

कमला—"हाँ-हाँ, सच है, रे पापात्मा! तू फिर चाहता है कि मुझे अपनी मीठी-मीठी बातों से लुभा ले; मगर अब यह कमला भूलनेवाली नहीं।"

यह कहकर कमला वहाँ से रफूकर हुई।

बारहवाँ परिच्छेद

If evils come not, then our fears are vain
And if they do, fear but augments the pain.

Sir, T. Moore.

फूलचंद—"हसीना, कहो कैसा मिजाज है, कल तो आप हमसे बिलकुल खफा हो गई थीं, देखो मैं फिर तुमसे वही कहता हूँ कि मुझे बहुत न सताओ, सोचो तो मैं तुम्हें कितना

प्यार करता हूँ, पर तुम्हारे दिल पर जरा भी असर नहीं होता। देखो मेरा कहना मानो, तुम्हें किसी तरह की तकलीफ नहीं होगी, मैं तुम्हारी कैसी खुशामद करता हूँ। अगर मुझे कोई अमूल्य चीज देने को कहता, तब भी मैं इतनी खुशामद न करता। क्यों अब तो मैं प्यारी कहने का अधिकारी हुआ, आओ, इधर आओ, भला इतना क्यों रोती हो, देखो आँखों में दर्द हो जायगा................"

यह कहता हुआ यह धूर्त उस बेचारी की तरफ चला, मगर वह डरी हुई भेड़ की भाँति कोने में सिकुड़कर और गिड़गिड़ाकर रोती हुई बोली—"देखो लालाजी, मैं तुम्हारे पाँवों पड़ती हूँ, हाथ जोड़ती हूँ, मुझे मेरे भाई या मामू के पास पहुँचा दो। देखो कल जिस वक्त से उन्होंने सुना होगा कि हसीना गायब है, उनके रंज का क्या ठिकाना है। देखो लालाजी, जब तुम मेरे पिता के सामने हमारी दूकान पर आते थे, तो तुम मुझे सदा बहन-तुल्य समझते थे, और इसी वजह से तुमसे पर्दा न था। अम्माजी को मरे इतने दिन हो गए, मगर मुझे यह न मालूम था कि दुःख किसे कहते हैं; क्योंकि सदा तुम मुझे भाई की भाँति प्यार करते रहे हो, अब्बा के मरने पर मैंने सब्र किया और सारा गम भाई अब्दुलरज्जाक के आने से जाता रहा। इस बात की गवाही भी आप लोगों ही ने दी थी कि यह बचपन से परदेश चला गया था। बेशक अब्दुल-रज्जाक ने मुझे ऐसे लाड़-चाव से रक्खा कि सिवाय कल के मुझे कभी दुःख का नाम भी सुनाई नहीं दिया। न-जाने कल से आप लोग क्या कर रहे हैं, मुझे तो शक है कि मैं सचमुच ही आपसे बात कर रही हूँ, या ख्वाब में मुझे यकीन नहीं है

कि तुम मुझे बहन बनाकर ऐसी कड़ी-कड़ी बातें कहते और ऐसे-ऐसे वाहियात लफ्ज जबान पर लाते हो। बेशक मैं तुम्हें भाई के तरह प्यार करती, अगर तुम मुझे वही बहन हसीना कहकर बोलते। लालाजी, एक बार फिर कह दो कि बहन हसीना यह बात सब झूठ है, और मुझे घर भेज दो, बड़ी इनायत होगी।"

फूल०—"प्यारी! देख अब मुझे और कुछ ...."

वह इतना कहने भी न पाया था कि एक गर्जती हुई आवाज ने उन्हें दंग कर दिया, यह वही हमारे पाठक-परिचित कमला की आवाज थी। उसने गर्जकर कहा—"अरे कम्बख्त फूलचंद! इस हसीना को तू नहीं सता सकता, मैं इसकी मददगार हूँ।" कमला की आवाज ने फूलचंद को इतना कमजोर कर दिया कि वह थोड़ी देर तक अपने को न सँभाल सका। कमला ने हसीना का हाथ पकड़कर उठाया, और उसे लिए हुए इस फुर्ती से बाहर गई कि फूलचंद को मालूम भी न हुआ। उसने बाहर आकर किवाड़ की कुंडी लगाकर ताला डाल दिया, और कुंजी लेकर चलती हुई। भीतर से फूलचंद कितना ही पुकारा, चिल्लाया; मगर उसने एक न सुनी, बाहर निकलकर उसने हसीना से कहा—"बहन हसीना! आज से तू मेरी धर्म की बहन हुई, तेरा अब कोई कुछ नहीं कर सकता, जल्दी बतला कि तू अब कहाँ जाना चाहती है। अब यहाँ देर तक ठहरना ठीक नहीं।"

हसीना—"बहन! तुम यह बतलाओ कि तुम कौन हो और तुमने मुझे छुड़ाकर क्यों इतनी इनायत की। मेरा तो घर न मालूम कहाँ है, क्योंकि मैं यहाँ अपनी खुशी से नहीं आई थी। न मालूम मैं यहाँ कब और कैसे लाई गई, और यहाँ से

शहर कितनी दूर है। मेरे चचा का मकान तो टालीगंज में है।"

कमला—"बहन! यह मामला बड़ा चक्करदार है। रफ्ता-रफ्ता तुम्हें भी भेद मिल ही जायगा। तुम मेरी तरफ से न घबराओ, यह मेरा कुछ नहीं कर सकते। मैं अब हमेशा तुम्हारी खबर लिया करूँगी, चलो मैं तुम्हें खुद वहाँ तक पहुँचा आऊँ।"

तेरहवाँ परिच्छेद

If I can catch him once upod the hip

I will feed fat the ancient grudge I bear him.

इस घटना के एक घंटे बाद अब्दुलरज्जाक हाँफता हुआ आया। घबराकर बोला—"लाला कहाँ चले गए, इस वक्त मिलने का पूरा वादा था, न मालूम क्या दाल में काला है।" इतने में भीतर से गुनगुनाने की आवाज आई। यह उस तरफ गया, तो कोई वहाँ न था, चिल्लाकर आवाज दी। आवाज का जवाब पाया, फिर पूछा तो कहा कि किवाड़ जल्दी खोलो। रज्जाक ने बड़ी मुशकिल से ताला तोड़ा। देखा तो लाला साहब खुद ही अंदर हैं।

अब्दुल०—"क्यों लालाजी क्या मामला है, यह क्या हाल है, आपको किसने बंद किया, और उसका क्या हुआ, यहाँ कहीं नजर नहीं आती।"

फूल०—"हाय! क्या कहूँ, सब मटियामेट हो गया, हसीना भाग गई और अब उसका पता नहीं।"

अब्दुल०—"हैं! क्या भाग गई? किसने भगाया?"

फूल०—"उसी कमबख्त कमला ने।"

फिर सारा हाल कह सुनाया। अब्दुलरज्जाक ने कहा—"भला आपने यह क्या किया, मैं तो अपना काम पूरा करके आया था। देखो यह क्या लिखा है (उसने लिफाफे में से एक चिट्ठी निकालकर दी), आपने हमारे हक में बट्टा लगाया। अगर कहीं कुछ भेद खुल गया, तो हमारी मिट्टी पलीद हुई, हम सब काम तय कर चुके थे, हमें क्या खबर थी कि आपसे यह जरा-सा काम भी न होगा, अब बतलाइए क्या किया जावे।"

फूल०—"हसीना के छूटने से कई बातों का डर है, अब जब तक वह न आवे, मुझे तो चैन नहीं। कमला सब भंडाफोड़ न कर दे। हाय-हाय बुरा हुआ। मगर देखो तुम जाकर जाब्ते से रिपोर्ट तो कर दो कि न-जाने कैसे हसीना कल से गायब हो गई, बहुत ढूँढ़ा, कहीं पता नहीं चलता और कहीं वह कमला मिल जाय, तो उस राँड़ की चोटी पकड़ कर घसीट लाना, हरामजादी ने गजब किया।"

बस, यही बातें करते दोनों हाथ मलते रह गए।

चौदहवाँ परिच्छेद

Muse not that I thus suddenly proceed;

For, what I will, I will, and there an end.

हसीना के भाग जाने से अब्दुलरज्जाक की तो समझिए कि मौत ही आ गई, वह बहुत ही डरा, परंतु उसका असर बाबू फूलचंद पर भी कम न पड़ा; क्योंकि अब उनके किए हुए पाप-कर्म उनकी आँखों के सामने साँप, बिच्छू बन-बनकर घूमने लगे और उनको सोच-सोचकर वे बड़े बेचैन हुए। उन्होंने सोचा कि अब अब्दुलरज्जाक के पकड़े जाने में किसी तरह का शक ही नहीं, और फिर कहीं उसने सब बातें अदालत में जाने पर कह दीं, तो मेरी भी पूरी बदनामी होगी, और पिताजी जिसका नाम देश-देशांतरों में हो रहा है, मुँह दिखाने के लायक न रहेंगे (हाय ! यह वही फूलचंद है, जिसे पिता का नाम विष समान लगता था। आज वह पिता के नाम पर पश्चात्ताप कर रहा है। सच है, जब तक मनुष्य पर दुःख नहीं पड़ता, उसे चारों तरफ हरा-ही-हरा दिखाई पड़ता है, आज दुःख के समय वह बातें याद आईं) जब वह इस तरह की बातें सोचने लगा, तब कहा कि अब क्या किया जाय। फिर वह अपने उसी दुष्ट सलाहकार से सलाह करने बैठा, परंतु हाय ! इसे इस समय भी न सूझा कि यह सम्मति कैसी है, इसे मानना चाहिए या नहीं, अंधे की तरह टूट पड़ा। फिर मोजीलाल से पूछा, तो उसने भी वही कहा; क्योंकि ऐसे समय में वह भी इनका टल जाना पसंद करता था।

आखिर यही सलाह ठहरी कि "विलायत" की सैर कीजिए। इन्होंने भी कुछ आगा-पीछा सोचे बगैर ही, हद से ज्यादा पसंद किया; क्योंकि यह थोड़ी-थोड़ी अँगरेजी पढ़कर 'जेंटिलमेन' तो बन ही गये थे; बस लंडन (London) जाना पक्का ठहरा। परंतु समस्या यह थी कि रुपया कहाँ से आए? बाबू साहब के पास तो इतना रुपया था ही नहीं, और बाप से भी माँग नहीं सकते (क्योंकि आप लोग जानते हैं कि आजकल उच्च कुल के पुरानी चाल चलनेवाले हिंदुओं में विलायत जाना कैसा घृणित कार्य है), और तिस पर भी यह जेठे पुत्र; और यह कुछ वहाँ विद्या उपार्जन, बैरिस्टर अथवा डॉक्टर बनने तो जाते ही न थे, सिर्फ सैर का इरादा था। भला माँ-बाप कैसे इजाजत दे देते, उनसे जिक्र करने से फिर जाना कदापि संभव न था। फिर यदि यह कहीं तीर्थ वगैरह जाने का बहाना भी करें तो वह इन्हें अकेले कैसे जाने देंगे, और यकायक इस बात के कहने से शक भी बढ़ जायगा। बस, इससे तो बगैर कहे जाना ही ठीक होगा। फिर वही प्रश्न कि रुपया कहाँ से आवे? सोचते-सोचते एक बात दिल में आई, यदि वह ठीक उतरी, तब तो सब मामला तय है। अच्छा! परसों जाना अवश्य ही निश्चय हुआ, भला कोई बात बाबू साहब के दिल में आवे पूरी न हो? ऐसा कभी हो सकता है।

लाला भोंदूमल पहले ही से तैयारी करने के लिये बंबई भेजे गये, और अब्दुलरज्जाक ने इनका पोर्टमेंटो स्टेशन तक पहुँचाने का जिम्मा लिया।

आइए बाबू साहब! पधारिए! और वहाँ से लौटने पर

हमें भी वहाँ का हाल बतलाना, हम सब आपके लौटने की बाट सदैव देखते रहेंगे। आप कुशलपूर्वक विलायत की सैर करके लौट आवें, बस, यही हम सबों की ईश्वर से प्रार्थना है!

पंद्रहवाँ परिच्छेद

Custom, 'tis true, a venerable tyrant
O'er servilc man extends her blind dominion.

कलकत्ते से बंबई तक रेलवे यात्रा

पाठकगण! क्या देख रहे हैं—यह एक हिंदुस्तानी लड़का अँगरेजी ढंग की पोशाक पहने आज हावड़ा स्टेशन पर क्यों सिटपिटाता हुआ फिर रहा है? वह देखिए उसके हाव-भाव से विदित होता है कि वह किसी की बाट जोह रहा है। भला साधारण बातों में इतना झमेला काहे को, जब कि वह स्टेशन पर आया है। तब और किस बात की जल्दी होगी, परंतु एक साधारण ट्रेन के लिये इतना चञ्चल होना, यह तो नहीं हो सकता। शायद और किसी प्रकार की घटना उसके हृदय में उत्पात मचा रही हो—होने दीजिए अपने को इन सब सांसारिक झगड़ों से क्या मतलब! सैकड़ों हजारों रोज स्टेशन पर आते हैं। जाने किसके मन में क्या है? अपने काम से काम! कुछ उसके देश से बुरी खबर आई होगी, इसी से जाने की जल्दी कर रहा है, या शायद किसी

मित्र से मिलने का इंतजार हो। पाठक! आप इतने अधीर क्यों होते हैं, देखिए जिसके चरित्र को जानने का यत्न किया जाय, उसमें सफलता प्राप्ति करने का उद्योग करना चाहिए—देखिए वह नौजवान लड़का अब बुकस्टाल पर गया, और वहाँ किताबों की छानबीन कर रहा है—भाई दूर से तो कोई बात जानने की आशा छोड़ो, चलिए तो, जब इस बात पर कमर ही कसी है, तो पास चलकर इस बात का पता लगाएँ—लीजिए आपको वहाँ तक जाने का परिश्रम भी न उठाना पड़ा, वह खुद ही हाथ में कोई पेपर लिए हुए इधर तशरीफ ला रहे हैं। उनके हाव-भाव से तो यही विदित होता है कि वह ट्रेन की बाट देख रहे हैं—आगे परमेश्वर जाने। अजी बस रहने दो, अब तो कलई खुल गई; कहिए, समझे कि नहीं, आप कौन? अजी साहब वही अपने उपन्यास के नायक बाबू फूलचन्द साहब हैं। उफ्फोह! आज यह हिंदू वैश्य-कुल के सपूत इस ढंग से स्टेशन पर घूम रहे हैं कि हम लोग रात-दिन के जानने-पहचाननेवालों को भी पहचानने में कष्ट होता है। खैर, भई कुछ परवा नहीं! आजकल ऐसा ही समय है—'जैसा देस वैसा भेष' इसमें इन्हीं ने क्या अनुचित किया—आजकल के नवशिक्षित सैकड़ों इसी प्रकार साहब बहादुर बने फिरते हैं। कहिए अब क्या इच्छा है? अब तो सब बातें मालूम ही हो जायँगी—चलिए खुद ही उनसे चलकर मिलें।

यह कहते हुए हमारे पं० राधिकादास उधर की तरफ बढ़ने लगे। ज्यों ही बाबू फूलचंद इधर जल्दी-जल्दी आ रहे थे, उन्होंने ठहरकर पूछा—"बाबू साहब! किधर, आप तो बिलकुल ही भूल गए—जब सामने आ गए, तब तो दो-चार

बातें कर लिया कीजिए, कहिए ! कहाँ तशरीफ ले चले"—इन शब्दों ने फूलचंद पर बिजली का-सा असर किया—देखते ही सूरत उतर गई—परंतु चेहरे की आकृति को न बिगाड़ के झट बोल उठे "अहा ! पंडितजी पालागन ! कृपा तो है ! कहिए आज आप कैसे आए ? क्या खबर है ?" इतना कहकर एकदम उनकी जबान रुक गई।

पं० राधि०—"कुछ नहीं, मैं तो आज भाई साहब को पहुँचाने चला आया था। वह बर्दवान जायँगे। कहिए पिताजी तो प्रसन्न हैं न ? आप किधर जा रहे हैं ?"

फूल०—"मैं तो कहीं नहीं जाता। मेरे एक दोस्त आनेवाले हैं, उन्हें लेने के लिये आया था। और सब क्षेम-कुशल है।"

इतनी बात हो ही रही थी कि टन-टन करके पोर्टर ने घंटा बजाया, और बड़े जोर से यह पुकार होने लगी—"गाड़ी छोड़ा, गाड़ी छोड़ा।" सब मुसाफिरों में गड़बड़ पड़ी। कोई गठरी उठाने लगा, कोई इधर-उधर दौड़ने लगा और कोई-कोई जाकर अपने असबाब के पास खड़े हो गए। यानी गाड़ी में बैठने को तैयार हो गए। हमारे बाबू साहब भी झटपट आगे बढ़ गए और निगाह बचाकर First class refreshment room (फर्स्ट क्लास रिफ्रेशमेंट रूम) में घुस गए। वहाँ जाकर सिर की हैट उतारकर रख दी, और सोचने लगे—'कहीं यह पं० तो पिता से यह खबर न कह देंगे—यदि ऐसा हुआ, तो सब खेल बनाया-बनाया बिगड़ जायगा—मगर मैंने तो ऐसा बहाना बनाया है कि उन्हें कदापि झूठ नहीं मालूम हो सकता'—हमारे बाबू साहब ये सब बातें

विचार ही रहे थे कि गाड़ी झट धक्-धक् करती हुई स्टेशन पर आ पहुँची। लाचार बाबू साहब को उठना पड़ा, और हाथ में बेग लिए निगाह बचाते पहले दर्जे में जा बैठे। मेल ट्रेन तो थी ही, दो-चार मिनट की गड़बड़ होकर फिर एंजिन ने सीटी दी और गार्ड झटपट उधर स्टेशनमास्टर के रूम से आता हुआ नजर पड़ा। देखते-ही-देखते गाड़ी प्लेटफार्म से निकलकर सपाटे से चलती बनी। तब बाबू साहब को कुछ संतोष हुआ—इस समय तक वह मामूली सूट ही पहने हुए थे, क्योंकि यदि वह नया सूट पहनकर स्टेशन पर जाते, तो घर में शायद पूछताछ होती, और मामला खुल जाने का भय था। इसलिए मामूली सूट पहने ही आप सवार हो गए थे, और वह भी आते-आते गाड़ी में इधर-उधर फिरने से मैला-सा हो गया। आप स्टेशन पर पहुँचकर सूट बदलने की फिक्र में थे, परंतु समय न मिला; और इसलिये इन्होंने गाड़ी ही में सूट बदलने का विचार किया। ठीक ही है, जहाँ के लिये जा रहे हैं, वहाँ पर सब दोस्तों के सामने इन मैले कपड़ों में थोड़े ही जा सकते हैं। सौभाग्य से जिस डिब्बे में यह बैठे थे, उसमें और कोई मुसाफिर भी न था। इन्होंने सब खिड़कियाँ बंद कर सूट बदलना आरम्भ किया। झटपट सब कपड़े उतारकर पटक दिए, और एक उम्दा स्त्री के कलफ में जकड़ा हुआ सूट निकाला (जिन्होंने अँगरेजी कपड़े यानी कोट-पतलून पहनने का मजा चख लिया है, वे सहज ही समझ सकते हैं कि उनके पहनने के पहले बिलकुल दिगम्बर भेष धारण करना पड़ता है); परंतु ज्यों ही उन्होंने सूट उठाया, गाड़ी की चाल (रफ्तार) कम होने लगी और सीटी बजी, ज्ञात हुआ कि

स्टेशन आ गया। अब तो बाबू साहब बड़ी चिंता में पड़े, होश-हवास उड़ गए और ठीक ही है—बड़े अचरज की बात है कि पहले दर्जे में यात्री नंगे बैठें ? यदि डिब्बा रिजर्व होता, तो शायद खिड़कियाँ भी न खोलते—इसी विचार में थे कि क्या करें ! इतने में "कुली चाहिए, कुली" की ध्वनि ने उन्हें और भी तंग कर दिया। जब कुछ न सूझा, तब पास में पड़ा हुआ एक विलायती कंबल को उठाकर बदन ढक लिया, और सिकुड़कर बैठ गए कि खैर हाल तो जिल्लत से बचे ! इतने ही में क्या देखते हैं, एक अँगरेज और मेम इसी गाड़ी की तरफ आ रहे हैं। इस बेचारे की जान और भी खुश्क हो गई, समझा कि फिर बला आई, नाहीं कर नहीं सकते थे कि इसमें न बैठो। वे दोनों आकर इसमें बैठ गए, और हमारे बाबू साहब भी चुपचाप बैठे रहे। दुर्भाग्य ! कि इतने पर भी चैन नहीं ! मेम साहिबा कुछ बीमार-सी थीं, और जिस समय वे आकर गाड़ी में बैठीं, उन्हें बड़े जोर से ठंड लगने लगी। साहब ने बहुत कुछ उपाय किया, अपना ओवर कोट भी उढ़ा दिया, तब भी मेम साहिबा की कँपकँपी दूर न हुई। साहब ने अपने पास बैठे हुए हिंदुस्तानी बाबू साहब की तरफ देख बड़े विनीत भाव से कहा—

"Gentleman, will you kiddly give me your blanket, as my wife is sufferi n g from cold."

यानी, "महाशय, क्या आप कृपा कर मुझे अपना कंबल देंगे; क्योंकि मेरी स्त्री सर्दी से काँप रही है।"

पाठकगण, समझिए कि एक अँगरेज के कहे हुए ऐसे

मीठे वचन हिंदुस्तानी जेंटिलमैनों पर कैसे असर करते हैं। बाबू फूलचंद का हृदय भर आया, बोल न सके, एक वक्त तो दिल में यही आया कि झट कंबल उतारकर साहब बहादुर को दे दें। मगर वही मसल हुई कि "भैंस मरे या लाठी टूटे।" ऐसी ही दशा हमारे बाबू साहब की थी, जो देते तो और भी ज्यादा फजीहत होती, और जो नहीं देते, तो सभ्यता में फर्क आता है—क्या करें, दें या न दें! बड़ी देर तक यही सोचते रहे, परंतु कुछ ठीक न कर सके—जब फिर साहब ने सवाल किया, तब तो फिर इन्होंने कुछ ऊटपटाँग जवाब देना शुरू किया, जिससे कि साहब कंबल माँगना छोड़ दे। साहब ने समझा कि यह शख्स कोई पागल है, और दिल में बहुत घबराया कि कहीं कुछ उत्पात न मचावे—दूसरे स्टेशन पर पहुँचते ही वह चुपके-से गाड़ी से उतरा, और स्टेशनमास्टर से रिपोर्ट कर फिर वहीं आ बैठा। अब यह इस फिराक में थे कि अपनी गाड़ी के 'वाथ रूम' में जाकर कपड़े बदल डालें, और कंबल साहब को दे देवें, इसलिये यह बार-बार साहब की तरफ और लेटरीन के दर्वाजे की तरफ देखते थे। इनकी निगाहों को देखकर साहब को पूरा विश्वास हो गया कि यह यथार्थ में पागल है। जरा देर बाद स्टेशनमास्टर रेलवे पुलिस को लेकर इनके पास आए, और पूछा "आपका नाम? आप कहाँ को जाते हैं? आपका टिकट कहाँ है?" यह इस घबराहट में सोचे कि हाय पं० राधिकादास ने जाकर कहीं बाप से कह दिया, और उन्होंने तार दिया होगा कि रास्ते में जहाँ कहीं होवे उतार लिया जाय! इन्हें यह क्या खबर थी कि साहब बहादुर ने जाकर मेरी रिपोर्ट कर दी है। बस, इन्होंने उसके

सवालों का कुछ जवाब न देकर अपनी अँगूठी उतार देने लगे, सोचा कि वह रिशवत लेकर पूछताछ न करेगा। यहाँ उसने उल्टा ही रंग जमाया! स्टेशनमास्टर को भी इस बात से बिलकुल यकीन हो गया कि यह शख्स पागल है, और वह झट मय असबाब के गाड़ी से उतार लिए गए। रेलवे पुलिस में उसी रोज इनका चालान हुआ। जब साहब इंसपेक्टर के यहाँ गए और उसने लगातार कई सवाल इनसे किए और इनने एक का भी जवाब न दिया, तब तो वह चिढ़ गए, और झट पुलिसमैन को आगे बढ़ने का इशारा किया। इस समय तक वह खूब अच्छी तरह से कंबल को ओढ़े हुए थे—पुलिसमैन ने एक झटका कंबल का कोना पकड़कर दिया, और कहा कि 'चल अगाड़ी बढ़' बस, जो होना था, वह तो हो गया! कंबल गिरते ही यह भी शर्म के मारे नीचे बैठ गए, और सब इजलास के लोग खिलखिलाकर हँसने लगे। हमारे बाबू साहब ने भी इस दुर्दशा से शरमाकर सिर नीचा कर लिया। साहब यह देखकर और भी झल्लाया, और डाँट कर कहा—"क्यों बडमाश, टुम लोग इस गाड़ी में आकर क्या इराडा किया ठा। टुमने जरूर कोई बुरा बाट सोचा होगा, मेम साहब को छेड़ा होगा, सच बोलो नंगा क्यों फर्स्ट क्लास में बैठा।" मगर शर्म और अचंभे ने इसे तंग कर दिया था। कुछ जवाब ही न दिया। साहब बहादुर ने पागलखाने में भेजने का हुक्म दिया। बस, आज ही के दिन से बाबू साहब की दशा पलट गई। गाड़ी पर पैर रखते ही बुरे दिनों ने आ घेरा! बेचारा बेकसूर फँसा जाता है। आखिर जब दारोगा उसे पागलखाने में ले जाने को आया, तो उसने अपनी दुर्दशा का वर्णन किया।

दारोगा भी बड़ा भलामानस था, झट साहब से आकर सारा हाल कह दिया, और उसका तथा उसके पिता का नाम भी बतलाया। फिर समय बदला, इंसपेक्टर ने सोचा कि एक इतने बड़े रईस के लड़के के साथ ऐसा बर्ताव किया, कहीं ऐसा न हो कि बड़े अफसर तक शिकायत पहुँचे। जाकर खुद माफी माँगी, और (I beg your pardon) कहा। फिर बाबू साहब क्यों न फूलते ! दूसरी ट्रेन से बंबई पहुँचे। भोंदूमल वगैरह पहले ही से चकोर की भाँति टकटकी लगाए खड़े थे। गाड़ी से उतरते ही झट हाथ मिलाए गए, और दुआ-सलाम के बाद भोंदू ने पूछा कि आपका तार कल शाम की गाड़ी से आने को था, एक दिन की देरी कैसे हुई ? बेचारे ने सारी कहानी विस्तारपूर्वक कह सुनाई—सब लोग इस कहानी को सुन अचंभा-सा करने लगे ! खैर, जो हुआ सो हुआ, अब क्या करना चाहिए "बीती ताहि बिसारि दे आगे की सुधि लेय।" आज शनिवार का दिन था, सुबह के दस तो बज ही चुके थे, स्टीमर के जाने में सिर्फ डेढ़ घंटे की देर थी। इन्होंने एक दिन बंबई में रहने का विचार किया था, परंतु वह दिन रेलवे-यात्रा ही ने लिया, अब तो स्टीमर पर चढ़ने का समय निकट आ गया ! हाय ! जिस भूमि पर पैदा हुए, और जिस पर से जाने का वर्षों से विचार हो रहा है, उसके भली भाँति दर्शन भी न कर सके ! यह सोचकर उन्हें जरा शोक हुआ—इधर भोंदूमल जल्दी कर रहा था कि मैं सीट भाड़ा ले चुका, अब आप चलिए और बैठिए, सब जरूरत की चीजें वहाँ पर लाकर रख दी हैं। बस, ट्रेन से उतरे गाड़ी (Victoria) विक्टोरिया में बैठकर अपोलो (Appolo port) का रास्ता

लिया। स्टीमर तैयार था, बाबू साहब झट स्टीमर पर चढ़ गए, और भोंदूमल किनारे पर खड़े लंगर छोड़ने की बाट देखने लगे। देखते-देखते हमारे बाबू साहब सहित स्टीमर चल दिया। हृदय में चलते समय नाना प्रकार के विचार आते थे, आखिर "हे भारतभूमि, हे माता, तुझे प्रणाम है" कहकर बाबू साहब ने क्रिश्चियन (Christian) भूमि की ओर प्रस्थान किया। हे भारत! तेरा ऐसा दुर्भाग्य कि तेरी संतान तुझमें रहना पसंद नहीं करती! गोकि संसार की सारी जातियाँ तुझे देखकर ललचाती हैं और तेरी यात्रा करना धन्य समझती हैं। फिर कहिए कि यह दुर्भाग्य किसका? हमारा या भारत का?

सोलहवाँ परिच्छेद

You shall be as a father to my youth.
My voice shall sound as you do prompt mine ear;
And I will stoop and humble my intents
To your well practis'd wise directions.

पाठकगण! बेशक एक बात रह ही गई, वह यह कि आप लोग कहें कि रुपया विलायत जाने को कहाँ से आया, और क्या भोंदूमल ने अपने पास से रुपए देकर जहाज किराए किया और सामान वगैरह खरीदा? नहीं! साहब सुनिए "चिड़िया के पिंजरे से उड़ जानेवाली" रात को फूलचंद ने अपनी बहू को आ दबाया, और वही मीठी बातें करने

लगे—आज यह पहला ही दिन है कि बाबू साहब ने इतनी प्यार की बातें कीं। यह स्त्री जिसका कि नाम चम्पा था—बेशक चम्पा ही थी, परंतु बेचारी का भाग्य चम्पा न था। जिस प्रकार वह खूबसूरत थी, उसी तरह विद्या भी जानती थी, सदा रामायण, महाभारत चित्त लगाकर पढ़ती, और पढ़कर प्रसन्न होती। आज तक (ब्याह हुए करीब ६ वर्ष हुए थे) बेचारी को इतना सौभाग्य नहीं हुआ था कि पति की मीठी-मीठी बातें भी सुने। फूलचंद सदा कड़े वचन कहकर उसे कष्ट दिया करता था, सदा दुतकारा करता था। जब शयनघर में सोने को जाती, तो सदा डाँटा करता था। रात-रात भर जगते कट जाती थी—जब फूलचंद आ जाता, तब सोती, तो भी उसे किसी प्रकार का शोक न था। वह पति का मुँह निहारकर ही अपने को धन्य समझती थी। जब कभी वह पति की निंदा सुनती, अपने कान बंद कर लिया करती थी। परंतु हाय ! तकदीर को क्या करती—सच है "पेश आनी है वही जो कुछ कि पेशानी में है" कुछ भी हो, वह अपने हृदय में संतुष्ट थी—आज यह पति की नई प्रवृत्ति देखकर उसे अति आनंद हुआ ! सच है पतिव्रता को सदा स्वर्ग मौजूद है। उसने बहुत यत्न कर जानना चाहा कि पति आज इस प्रकार दयालु क्यों हैं ? क्या मेरा भाग्य पल्टा है। अवश्य ही उन्हें अपने कुकर्मों से ग्लानि हुई होगी। धन्य है भाग्य ! परंतु वह बेचारी क्या जानती थी कि फूलचंद काला साँप है, जो कुछ कह रहा है, सब झूठ है।

फूल०—"प्रिये ! अब मुझे भली भाँति विदित हो गया कि इस भाँति मारे-मारे फिरने से सदा हानि ही होती है, मुझसे

पिता, माता, मुनीम सब अप्रसन्न हैं। इसीलिये मैं अब आज से सब बुरे कामों को त्यागता हूँ और अब मेरी व्यापार करने की इच्छा है। जो तू कहे वह करूँ। परंतु जब तक मैं कुछ कमा कर न दिखा दूँ, पिता से किसी प्रकार की सहायता न माँगूँगा! तू कुछ रुपए का इंतजाम कर दे, तो थोड़े रोज बंबई में जाकर वहाँ ढंग जमाऊँ। फिर पिता से भी कह देंगे—इससे वे भी खुश होंगे, और हम सबों का कल्याण होगा।"

चम्पा—"प्राणाधार! आप ही मेरे माता, पिता, परमेश्वर जो कुछ हैं सो हैं—मेरे लायक जो सेवा हो उससे कभी नाहीं नहीं कर सकती—यह २०००) के नोट पिताजी ने गौने के समय हाथखर्च को दिए थे, सो लीजिए और १५००) रुपए के करीब यह और मेरे पास खेरीज है, सो वह भी आपके आधीन है। यह कुछ गहना भी है, जिसे ससुरजी नहीं जानते हैं, सो आप यह सब लीजिए, और अपने काम में कृतकार्य हूजिए। मुझे आज अति हर्ष है कि आपने ऐसी बात सोची—परमेश्वर कुशल करेगा, परंतु अपने साथ इस दासी को भी ले चलते, तो कोई हानि न थी।"

फूल०—नहीं प्यारी! ऐसा अभी नहीं करेंगे, जब पिताजी को यह सब मालूम हो जायगा तब वह भेजेंहीगे। तुम किसी प्रकार का सोच न करो, मैं बहुत जल्द लौटूँगा, यह बात किसी से न कहना।..........चंपा चरण छू, कहने लगी—"प्राणप्रिये! अच्छे रहिएगा", और फूलचंद भी रकम हथिया मुस्कराता हुआ रवाना हुआ।

सत्रहवाँ परिच्छेद

Custom calls me to't;—
What custom wills, in all things should we do't?

जहाज की यात्रा

बाबू फूलचंद "मे फ्लावर" (May Flower) में बैठकर विलायत रवाना हुए। जहाज पानी को चीरता हुआ आगे को बढ़ा। जब जहाज बंदर से बहुत आगे बढ़ गया, और सिवाय जल-ही-जल के कुछ दिखाई न दिया, तब बाबू साहब आकर अपनी सीट पर बैठ गए। इस समय तक आप जहाज के बोर्ड पर खड़े हुए पानी की शोभा निहार रहे थे! कुछ समय तो बैठकर तथा पड़े रहकर बिताया, परंतु दिन भर पड़े रहने से या बैठे रहने से दिल थोड़े ही लगता है, इसलिये कोई और ढंग, दिन व्यतीत करने के लिये सोचने लगे। बहुत सोचा-विचारा; परंतु कोई बात समझ में न आई। आखिर वही पेपर, जो कि इन्होंने बंबई स्टेशन पर लिया था, निकालकर पढ़ने लगे। संध्या का समय हुआ, सपर (भोजन) की बेला हुई, घंटा बजाया गया; पर बाबू साहब इसको न समझ सके। थोड़ी देर बाद एक खेवनहार (Steers man) ने आकर इन्हें रूखी आवाज से बुलाया। बाबू साहब उठकर उसी ड्रेस में खाना खाने चल दिए। वहाँ जाकर एक उम्दा रूम में जहाँ कि बहुत बढ़िया कुर्सी-मेज लगी हुई थी, घुस गए। घुस तो गए, मगर अब बैठें कहाँ! सब लोग (जिनमें सिवाय इनके और कोई देशी न था) चम्मच-छुरी लिए खाने

में मग्न थे। बेचारे की किसी ने सुध न ली। आखिरकार एक कोने में जाकर खड़ा हो गया! वहाँ उसने अँगरेजी स्त्रियों की ऐसी दशा देखी कि उसे बड़ा आश्चर्य हुआ। इसे इस समय तक किसी साहब बहादुर के भोजनालय में जाने का सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ था। जब खड़े हुए पाँच मिनट से ज्यादा हो गए, तब एक साहब बहादुर ने इनकी तरफ निगाह उठाकर देखा। यह देखकर इनके हृदय में और भी विस्मय हुआ। सोचने लगे "कहीं यह मेरे यहाँ आ जाने से नाराज तो नहीं हुआ?" सच है, बेचारा क्यों न डरता—यदि यह किसी साहब के बँगले में खाते समय घुस जाता, तो बगैर घुड़की खाए न लौटने पाता, परंतु इस अँगरेज ने बहुत नम्र भाव से इसे अपने पास बुलाया और भोजन न करने का कारण पूछा। इसे विदित हो गया कि यह कोई सज्जन पुरुष है जिसने एक भारतवासी (जिस नाम को कभी-कभी कोई भारतभक्त अँगरेज "Indian dog" भी कह बैठते हैं) पर इतना उपकार किया। इसने भी साफ-ही-साफ कह दिया कि "मुझे यह नहीं मालूम था कि भोजन की बेला हो गई है, और इसीलिये मैं नियत समय पर न आ सका। जब मुझे एक साहब ने जाकर सूचना दी, तब मैं यहाँ आया; परंतु यहाँ आकर देखा, तो कोई सीट खाली न दिखाई पड़ी, और इसके अलावा मैं यहाँ यह दशा देखकर झिझका कि शायद यहाँ हिंदुस्तानी के आने की इजाज़त है या नहीं।

इतने ही कहने पर साहब समझ गये कि यह अँगरेजी रीति-भाँति से बिलकुल नावाकिफ है, और दया कर बोले—"नहीं-नहीं टुम आ सकटा है, डेखो वह 'चारपाई' जिस पर

उस साहब का टोपी रखा है, उसे उठाने को बोलो और टुम उसमें जाकर बैठो, इस बखट ऐसी ड्रेस पहना जाटा है कोई बाट से मट डरो।"

फूलचन्द को ऐसी जबान सुनने का तो शायद यह प्रथम अवसर न था, क्योंकि उसने कई दफे पहले भी इसी प्रकार अँगरेजों को बातें करते सुना था, परंतु वह इस चारपाई का मतलब न समझ सका, सोचा शायद यहाँ भारतवासियों को चारपाई पर खिलाया जाता हो, और जाने क्या-क्या आपदा उठानी पड़ती हैं, यदि उसने 'चारपाई' के साथ ही उँगली के इशारे से उस चीज को भी न बतला दिया होता तब तो बड़ी आफत होती, खैर, यह समझ गया कि इनका मतलब कुर्सी से है। वह वहाँ गया, और धीरे से टोपी हटाने को कहा, बड़ी देर बाद उस अँगरेज ने इनकी तरफ मुड़कर देखा, और टोपी को हटा लिया। शायद इतना कहने के लिये इसे अपनी सारी शक्ति इकट्ठी करनी पड़ी, और वह इसको 'असभ्यता' भी समझते होंगे। परंतु उस अँगरेज को लेश-मात्र भी बुरा न लगा।

अब जगह पाने का कार्य तो समाप्त हुआ; परंतु एक कठिनाई और पड़ी, जो कि इनके लिये खाली कुर्सी थी, उसके दोनों ओर वही भेष धारण किए मेमें (लेडीज़) बैठी हुई थीं, और कुर्सियों के बीच में बिलकुल जगह निकलने को न थी। लाचार यह कुर्सी को सरकाकर बैठ ही गए, परंतु बहुत सिकुड़कर तथा डरते हुए, और कंपायमान हाथों से भोजन करना प्रारंभ किया। अब एक तो यह बेचारा बड़ी देर बाद आया था, दूसरे छुरी, फोर्क से कभी खाने की आदत न थी,

इसलिये वे सब तो खाकर उठने भी लगे, परंतु यह वैसे ही बैठा रहा। औरों को बड़ा कौतूहल हुआ और जिन-जिनकी निगाह इस पर पड़ी, देख-देखकर हँसने लगे! यह बेचारा इन सब बातों को सोच-सोचकर बहुत ही शर्माया, और पश्चात्ताप करने लगा कि पहले इन लोगों के रीति-व्यवहार सब सीख लेते, तब आते। तब न तो इतनी हँसी होती, और न भूखे रहना पड़ता। पाठको! आपको एक दिन का हाल नमूना-स्वरूप दिखलाया है। इसी प्रकार फूलचंद जहाज में अँगरेजों की रीति न जानने से सैकड़ों बातों के क्लेश पाता हुआ चला जा रहा है।

अठारहवाँ परिच्छेद

Misery acquaints a man with strange bed fellows.

लंडन

बेचारा फूलचंद इसी प्रकार के कष्ट सहन करता हुआ समुद्र-यात्रा का मजा उठा रहा था। जाति-बंधन और धर्म को तो जहाज पर पैर रखते ही तिलाञ्जलि देनी पड़ी थी इसी वजह से और-और बहुत-सी आपत्तियों से बच गये, परंतु सबसे अधिक कष्ट इस अँगरेज जाति के रीति, नीति व्यवहार आदि के न जानने से उठाने पड़े। इसी प्रकार सैकड़ों आपदाएँ झेलता हुआ अपने देश से हजारों कोस दूर वह बढ़ता चला जाता है। एडन, सुएज, दिकेनेल, पोर्टसईद, अल्कजेंड्रिया,

माल्टा, जिबराल्टर, साउथेम्पटन....इत्यादि टापुओं पर होते हुए त्राहि-त्राहि करके जल-यात्रा तो समाप्त हुई, और थोड़ी दूर रेल में जाना बाक़ी रहा। खैर, इतना कष्ट उठाने पर अपना मतलब तो पूरा हुआ, विना किसी शारीरिक या और प्रकार की हानि हुए, लंडन में तो पहुँचे। इसी तरह विचार के घोड़े हृदय में दौड़ा रहा था, और समझता था कि मैं वह विलायत पहुँचा, वह बैंक में गया, इत्यादि; सैकड़ों प्रकार के चित्र इस समय उसके चित्त में खिंच रहे थे, परंतु दैव की गति अपार है, कौन जानता है कि केवल जरा ही दूर में क्या-का-क्या हो जाय, क्या मालूम कि यह प्याला, जिसे 'लबों' तक लगा चुके हैं, हाथ से फिसल पड़े? सच है, विधाता की किसी को नहीं मालूम कि क्या करनेवाला है। ज्यों-त्यों कर बाबू साहब जहाज से उतरकर पोर्ट पर आये, और वहाँ से रेलवे स्टेशन तक पहुँचे। अब केवल रेलवे-यात्रा ही शेष है। इनके साथ ही वह साहब बहादुर भी स्टेशन पर थे, उस भोजन के समय से यह बेचारे पर एक प्रकार की दया-सी सदा किया करते हैं, और अपना परिचय देकर मित्रता-सी कर ली है। अन्य देश में अन्य जाति से इस प्रकार से परिचित होना कुछ छोटी बात नहीं। "डूबते को तिनके का सहारा ही बहुत है।" इस प्रकार स्टेशन पर पहुँचकर फूलचंद को उस स्टेशन के नाम जानने की बड़ी उत्कंठा हुई, परंतु वह इस कार्य में कृत-कार्य न हो सका; क्योंकि बहुत खोजने पर भी सिवाय नोटिस स्लेट्स के कुछ न था। बहुत-सी जगह तो उसे चकराना पड़ा। एक जगह तो उसने सच ही धोखा खाया, एक खूबसूरत-सी स्लेट पर, जो कि स्टेशन के बीच में थी, बड़े-बड़े हरूफों में

लिखा हुआ था 'Danzine'। उसने समझा कि स्टेशन का यहीं नाम है, परंतु जिस समय टिकट लिया, सब भ्रम मिट गया। ऐसी-ऐसी शरमिंदगी तो बेचारे को कई जगह उठानी पड़ी थी, खैर, टिकट लेकर माल लगेज कराया गया। यहाँ यह कायदा है कि माल को अपने साथ-साथ स्टेशन से होटल तक ले जाने की कोई जरूरत नहीं, आप खुद अपना पता बतला दीजिए और आपका माल उसी पते पर पहुँच जायगा। नियमानुसार बाबू साहब का भी लगेज सीधा 'होटल कामोपोलिज' (Hotel caposmopolis) के ही लिये बुक किया गया, और उस पर साफ-साफ लिख दिया गया "Phool Chand a passenger from India" यानी फूलचंद हिंदुस्तानी यात्री। सब सामान लिवरपूल से इस प्रकार रवाना करने पर सिवाय एक पोर्टमेंटो के, जिसमें कुल नकदी थी, उसके हाथ में कुछ न रहा। ट्रेन का इंतजार करने लगा। इस समय उसे एक और विचार सूझा। अब तक आपके बाल जैसे कि अक्सर धनवान् सेठों के हुआ करते हैं थे; परंतु यहाँ पहुँचकर उसने नाई से सब सफाचट्ट करा डाला, और ऐसा करने से उसकी सूरत कुछ और की और ही हो गई। अब इस समय हिंदुस्तानी अखबारों की ओर पाठकों का जरा ध्यान दिलाना चाहता हूँ। जिस रोज वह बंबई से रवाना हुए, उसके दूसरे रोज के 'पायनियर', स्टेट्समेन और 'इंडियन टाइम्स' अखबारों के पहले ही कालम में देखिए मोटे-मोटे हरूफों में क्या छपा है।

गायब—

फूलचंद उर्फ कन्हैयालाल, उम्र २३ साल, रंग गेहुआँ, कद बीच का, हृष्ट-पुष्ट, काले बाल, कुल्ले और पट्टे

सहित, अक्सर अपने हाथ में छतरी या बेंत रखता है, पाजामा उल्टे हुए किनारे का पहनने की आदत है, गायब होने के समय काला सरज का सूट पहने था, पता नहीं लगा कि कहाँ गया, २६ ता० की शाम से लापता है, जो कोई उसका पता नीचे लिखे साहब के पास देगा, अति उपकार होगा।

इंसपेक्टर 'डेन्निस'

बंबई अहाता

परंतु फूलचंद के बाल वगैरह के कतराने से इतना फर्क हो गया था कि कोई कदापि नहीं पहचान सकता था। इतने में एक पोर्टर आया, और उसके हाथ से बेग लेकर और बुकिंग ऑफिस बतलाकर कहने लगा "मैं तुम्हारे लिये कंपार्टमेंट कर रखता हूँ, और गाड़ी आने पर आपसे मिलूँगा, आप मेहरबानी करके टिकट ले आइए।" परंतु जिस समय बाबू साहब टिकट लेकर वापस प्लेटफार्म पर आए, तब न तो इन्हें पोर्टर ही मिला और न इनके बेग का ही पता था। यह समझकर कि शायद पोर्टर ने कोई कंपार्टमेंट इनके लिये तय कर लिया होगा, और उसी में उसने मनीबेग भी रख दिया होगा, वह ट्रेन के इधर-उधर घूमकर तलाश करने लगे, सब पहले दर्जे के कमरों को ढूँढ़ डाला, पर कुछ पता न चला। इतना समय नहीं था कि पोर्टर की तलाश में बाहर जाते, क्योंकि एंजिन जल्दी चल देने के लिये कई एक संकेत कर चुका था, और प्लेटफार्म पर तलाश करना और पता चलाना बिलकुल ही निष्फल था। गड़बड़ में दूसरे पोर्टर इनका कुछ मतलब न समझ सके और

इनमें इतना शक्ति न थी कि अपना अभिप्राय प्रकट कर सकें, लाचार विना कुछ किए ही ट्रेन में सवार होना पड़ा। ऐसा न करने से शायद लगेज में भी कुछ झमेला पड़े, इन्होंने स्टेशन-मास्टर से रिपोर्ट भी कर दी, और उसने पूछताछकर जवाब देने का वादा किया। इस समय इसकी अजब हालत थी। उसे जो कुछ हर्ष था, सब मिट्टी में मिल गया, और अगाड़ी निर्वाह की चिंता पड़ी—आखिरकार ट्रेन धीरे-धीरे चलने लगी। बाबू साहब खोए हुए बेग की याद करके और भविष्यत् में आनेवाली कठिनाइयों को सोच-सोचकर तड़पने लगे। दो-चार बार एंजिन से फक-फक करते हुए धुआँ निकला, और जोर से धक्का देकर गाड़ी चल दी। आगे के स्टेशन पर इन्हें प्यास ने बहुत तंग किया, और बहुत समय तक आप अपनी चिंता में मग्न रहे, और उस समय जब कि गाड़ी के चलने में बहुत कम समय था आपने 'रिफ्रेशमेंट' वाले साहब को पुकार-कर कहा "कृपा कर एक ग्लास ला दीजिए।"

साहब ने जवाब दिया—"जी हाँ साहब! अठारह पेंस।"

बाबू साहब बोले "जल्दी करो।"

बस, उसने इन्हें ग्लास पकड़ा दिया, और कहने लगा—"जल्दी कीजिए साहब। गाड़ी छूटने ही वाली है।" बाबू साहब ने कोट की जेब में हाथ डाला—खाली, फिर दूसरी में वह भी खाली, गार्ड ने सीटी बजाई, तब दोनों हाथ पतलून की जेब में डाले—पर वे भी खाली। क्या करें "क्यों साहब दाम लाइए", 'दाम' कहने लगा और इन्हें पकड़ने लगा। गाड़ी में न बैठने देता था। पर यहाँ यह करें क्या? झपट-झपटाकर इन्होंने गाड़ी में पैर डाल ही दिए! बाद को एक पोर्टर ने

गाड़ी का दर्वाजा बंद कर दिया। वह शख्स इन्हें गालियाँ देता, चिल्लाता ही रह गया। हाय! कितनी जिल्लत उठानी पड़ी, अब गाड़ी में बैठने पर संतोष से एक-एक जेब तलाश करने लगे। उनके पास कुछ कागज, चिट्ठी इत्यादि जो कि किसी मतलब की नहीं थी, एक रूमाल और एक जोड़ा दस्तानों का निकला, परंतु शोक कि नकद एक पेनी (आना) भी न निकली। उसका सब नकद रुपया और अपने बाप के नाम की चेक-बुक जो कि लंडन और न्यूयार्क बैंक पर थी, और जिसे कि वह वक्त जरूरत पर भुनाने की गरज से लेता आया था, वह भी सब उसी बेग में है। हाय! तो क्या आज वह पेनिलेस हैं, जिसके पास एक आना भी नहीं। थोड़ी देर बाद भूख लगी, मगर खाने को कहाँ से लें, पैसा तो पास ही नहीं*। हाय! शोक की बात है कि एक लखपती का लड़का विदेश में भूखा मरे। फूलचंद गुस्से से आग हो गया, कुछ कहते नहीं बना और अगाड़ी के स्टेशन पर जब कि कई आदमी खाना ले-लेकर खा रहे थे, यह बेचारा उनकी तरफ ललचाती हुई आँखों से देखता और हाथ मलता आप एक कोने में जाकर चुपचाप बैठ गया, और सोचने लगे क्या मनुष्य भूख को अपने काबू में नहीं कर सकता; मैंने सुना है कि योगी-संन्यासी महीनों तक विना खाए रह सकते हैं, तो क्या मैं नहीं रह

---

* Note इनकी कोठी का कारोबार इन दिनों बहुत अच्छा चलता था—हिंदोस्तान में कई जगह शाखाएँ थीं, और इनसे हमेशा रुई इत्यादि विलायत भेजी जाती थी। और इसी वजह से विलायती बैंकों में सब जगह इनके नाम से हिसाब थे, और अक्सर काम बहुत पड़ने की वजह से इन सब लोगों की फोटो भी वहाँ रहती थी।

सकता। आखिरकार "Custom" स्टेशन आया। इस समय इन्हें ट्रेन से इतनी घृणा हो गई थी, जितनी शायद कैदी को अपनी कोठरी से भी न हो? शोक में डूबे हुए गाड़ी से उतरे, और प्लेटफार्म पर खड़े हुए।

उन्नीसवाँ परिच्छेद

When one is Past, another care we have,
Thus woe succeeds a woe, as wave a wave.

गाड़ीवान—"गाड़ी चाहिए क्या साहब?"

फूल०—"नहीं।"

गाड़ीवान—"सामान ले चलें साहब?"

फूल०—"नहीं।"

इस समय "नहीं, नहीं" करते कितना बुरा मालूम होता था, न तो पास पैसे थे कि गाड़ी किराया करके जाते और न सामान ही पास रहा था कि जिसके लिये गाड़ी करनी पड़ती। प्रार्थना करने लगे "हे परमेश्वर! अच्छा होता, यदि 'न' न करना पड़ता।" स्टेशन से बाहर आए, दूसरे लोगों को हँसते और खुशी-खुशी गाड़ी में जाते देख इन्हें कितना दुःख हुआ, सो नहीं कह सकते—सोचा यदि गाड़ी होटल कामोपालिस तक कर लें तो अच्छा होगा, वहाँ जाकर सामान में से दे देंगे; परंतु वहाँ कुछ देर सामान लाने में लगेगा और गाड़ीवान हाय-हाय करेगा, इससे तो न करना ही ठीक है। यह पहला

ही समय इनका विलायत में आने का है, इसलिये इन्होंने आगे खड़े हुए पुलिसमैन से 'होटल' का पता पूछा।

पुलिस०—"क्या होटल 'कामोपालिस' पूछते हो ? वह तो चेरिंग क्रास (Charing Cross) के पास है, आप गाड़ी कर लें, तो अच्छा होगा। यह जो गाड़ी आ रही है, यह आपको "टोर्टनहाम कोर्ट रोड" के नुक्कड़ तक पहुँचा देगी, और फिर 'क्रास' तक दूसरी ले जायगी, किराया भी सिर्फ दो पेंस लगेंगे।" हाय ! शोक का विषय है कि आज एक लखपती के लड़के के पास 'आमनिवस' गाड़ी में बैठने के लिये किराए के दो आने भी नहीं !

फूलचंद ने कहा "नहीं ! नहीं ! यह कोई बात नहीं, मैं इस वक्त टहलते-टहलते जाना ही पसंद करता हूँ, आप मेहरबानी करके रास्ता बता दें।"

पुलिस०—"अजी साहब ! पैदल बड़ी दूर पड़ेगा।"

फूल०—"कोई हर्ज नहीं, दूर तक पैदल चलना मुझे इस वक्त अच्छा मालूम होता है।"

पुलिस०—"अजी बहुत दूर है, जितना तुम समझते हो उससे बहुत दूर है।"

फूल०—"बस, माफ कीजिए, अगर बतलाना हो, तो जल्द रास्ता बतला दीजिए।"

पुलिस०—"अच्छा ! बहुत अच्छा साहब ! परंतु मुझे खेद है कि आप इस गाड़ी से भी रह जाइएगा।"

फूल०—"मुझे आमनिवस में बैठना कतई नापसंद है, यदि सिर्फ आप इतना बतला दें कि चेरिंग क्रास किधर को है, तो बड़ी मेहरबानी होगी।"

पुलिस०—"अच्छा, आप सीधे चले जाइए, तब बाईं ओर मुड़ना, फिर थोड़ी दूर सीधे जाकर सड़क पर सीधे हाथ को घूमना, थोड़ी देर बाद आप वहीं पहुँच जाइएगा ; परंतु फिर मैं कहता हूँ आमनित्रस कर लेते, तो अच्छा होता।"

फूल०—"नहीं साहब, बड़ी मेहरबानी हुई, मैं बड़े आराम से जा सकूँगा।"

जल्दी-जल्दी कदम बढ़ाते हुए बाबू साहब चलने लगे। आध घंटे के चलने के बाद उन्होंने सोचा कि शायद अब वह जगह आ गई हो, इस गरज से वह एकदम ठहर गए, और एक खिड़की के काँच में से जाकर देखने लगे। वह मकान एक मामूली रसोईघर था, और टेबिल पर कई प्रकार के खाने बने हुए रक्खे थे। इनको भूख बड़े जोर से लग रही थी। खिड़की में से इस तरह झाँकने लगे, मानो काँच तोड़कर खा जायँगे। मजबूर आगे बढ़े। सहसा पीछे फिरकर देखा कि एक भिखारी, चिथड़े पहने हुए उसी खिड़की की राह देख रहा है, जैसा कि एक मिनट पहले यह देख रहे थे। इतने में वह आदमी भी वहाँ से लौटा, और मोरी में से एक रोटी का टुकड़ा देख उसे उठा लिया, और खाने लगा।

इसी समय उम्दा-उम्दा वस्त्र पहने हुए दो युवक उधर से निकले और उसको रोटी का टुकड़ा उठाते हुए देखकर, उनमें से एक हँसने और कहने लगा "देखा बुड्ढे की बदमाशी।"

हमारे बाबू साहब से यह सुनकर रहा न गया, कहने लगे "अजी साहब यह बदमाश नहीं है मैं कसम खाकर कह सकता हूँ कि यह आदमी बहुत भूखा है, और इसीलिये मजबूर हुआ कि उस टुकड़े को उठाकर खाए।" युवक ने कहा "वह भूखा

है तो उसे काम करना चाहिए, ऐसे टुकड़े बीनता क्यों फिरता है ?" यह कहकर वे हँसते और मजाक करते चले गए। ठीक है, उन्होंने बहुत ठीक कहा और यदि हमारे बाबू साहब भी पहले की हालत में कलकत्ते में होते, तो यही बात कहते "अबे कहीं मजदूरी कर, हट्टा-कट्टा तो है।" पर हाँ, भूखे को भूखा ही पहचानता है।

बाबू साहब को विना किसी दिक्कत के चेरिंग क्रास का रास्ता मिल गया, और जिस समय यह सेंट मारटिन चर्च को जल्दी-जल्दी कदम बढ़ाते हुए पार कर चुके, तब तो समझ लिया कि बस अब होटल कामोपालिस पहुँचने में कुछ देरी नहीं। कई मिनट बाद यह उस जगह पहुँच गए, और एक वर्दी (Livery) पहने हुए मोटे-ताजे आदमी ने इन्हें ऑफिस का रास्ता बतला दिया। वहाँ पहुँचकर इन्होंने एक स्त्री महाशया को, जो कि शायद वहाँ की मालकिन-सी जान पड़ती थी, अपना परिचय इस प्रकार दिया "मेरा नाम फूलचंद है, मैं भारतवर्ष से आया हूँ, मैंने एक कमरे के लिये तार दे दिया था।"

"मालकिन—"जनाब, इसमें मुझे कुछ भूल मालूम होती है। मुझे पूरे तौर से यकीन है कि इस नाम से, कोई कमरा भाड़े पर नहीं दिया गया, और तिस पर भी हमारे यहाँ सब जगह भरी हुई है।"

बाबू फूल०—"मगर मैं तो इसके लिये पहले ही से इंतजाम कर चुका हूँ। मैं 'May Flower' में आया हूँ, और कल के रोज मेरा सारा असबाब लिवरपूल से यहाँ के लिये रवाना हो चुका है।"

परंतु इस पर भी उसने वही उत्तर दिया कि यहाँ कोई कमरा उस नाम से भाड़े पर नहीं दिया गया।

बाबू फूल०—"खैर, तो हमारे असबाब का क्या हुआ, वह तो यहाँ को रवाना किया जा चुका है।"

मालकिन—"मैं इस बाबत मैनेजर से पूछती हूँ, मुझको कुल हाल नहीं मालूम है।"

झटपट टेलीफोन खटखटाया गया, और बाद को घंटी बजाकर छोकरे को बुलाया।

मालकिन—"आप इस छोकरे के साथ मैनेजर के पास चले जाइए, वहाँ सब हाल दर्याफ्त कर लीजिए।"

वह छोकरा इन्हें उसके कमरे में ले गया।

बाबू फूल०—"मेरा नाम फूलचंद है, और एक कमरा मेरे वास्ते तार से किराए पर लिया गया था।"

मैनेजर—"हमारे पास सैकड़ों तार आते हैं, और मैं हैरान हूँ कि आप किसका जिक्र करते हैं, हमारे यहाँ फिलहाल एक महीने के वास्ते कोई जगह खाली नहीं है।"

बाबू फूल०—"क्या आपके कहने का यह मतलब है कि आप हमें जगह नहीं दे सकते?"

मैनेजर—"जी हाँ, अफसोस है कि ऐसा कहना पड़ता है।"

बाबू फूल०—"यह तो बड़ी बुराई की बात है, जब आपके पास जगह नहीं थी तो बदले के तार में जवाब क्यों नहीं दिया?"

मैनेजर—"जी हाँ, जी हाँ, यह तो सब ठीक है; मगर होटल सब भरा हुआ है, और जगह बिलकुल नहीं है।"

बाबू फूल०—"(गुस्से से) अच्छा, तो हमारा लगेज कहाँ है ?"

"मैनेजर—"वापस भेज दिया गया होगा।"

बाबू फूल०—"(घबड़ाकर) कहाँ को, क्या इंडिया को ?"

मैनेजर—"जी नहीं रेलवे स्टेशन को, आपको मँगाने में कुछ दिक्कत न होगी, आप किसी दूसरे होटल में ठहर जाइएगा, और वहाँ से आप तार भेजकर मँगा लीजिएगा।"

बाबू साहब पर तो निराशा का पहाड़ टूट ही चुका था, इस समय 'पेनिलेस' थे, बेचारे अपनी मुसीबत का किस्सा मैनेजर से कहने लगे, जिसको उसने बड़े गौर से सुना। बिगड़ कर बोला—"क्या आप समझते हैं कि मैं आपके बनाने से बन जाऊँगा, मैंने सैकड़ों किस्से इस तरह के सुने हैं, भारतवर्ष से इँगलैंड कोई कंगाल भूखा नहीं आता, और यदि ऐसा ही है, तो आप दूसरी जगह तशरीफ ले जाइए।"

बाबू फूल०—"क्या आप मुझको चालबाज समझते हैं ? अफसोस मेरे पास इस समय एक कौड़ी भी नहीं है।"

मैनेजर—"मेरे पास भी आप जैसे शख्सों को देने के लिये एक कौड़ी नहीं है, अब मुझे दूसरा काम करना है, आप तशरीफ........"

बाबू फूल०—"खैर, तो मुझे थोड़ा-सा खाना तो दे दीजिए, मैं बहुत ही भूखा हूँ, आप देख सकते हैं कि मारे भूख के मुझसे बात नहीं की जाती है, दम निकला जाता है।"

मैनेजर ने घंटी पर हाथ रखकर कहा—

"हजारों आदमी गलियों में भूखों मारा-मारा फिरता है, क्या तुम समझते हो कि यह होटल भुक्खड़ों के लिये खुला है,

जो व्यर्थ के जिये आकर मेरा समय नष्ट करते हो! एक वाहियात अलिफलैला (Arabian Nights) का किस्सा बक-बक मगज चाट डाला ?"

इस समय एक चपरासी आता हुआ दिखाई दिया, मैनेजर ने उससे कहा "इस शख्स को बाहर कर दो।"

पोर्टर—"मिस्टर, अब झटपट उठकर घोड़ी बढ़ाइए।"

लाचार बाबू साहब को उठना पड़ा। वह सड़क पर खड़े होकर सोचने लगे कि अब क्या किया जाय। कुछ विचार न सूझा, दिमाग चक्कर खाने लगा। इसी समय इन्हें यों खड़े देखकर एक पुलिसमैन ने डपटकर कहा—"यहाँ क्यों खड़े हो, चल दो यहाँ से!" और इसके साथ ही अपने डंडे से चेताया भी। चेताना भी ऐसा जानते हो मैं कौन हूँ ?

बाबू साहब ने बिगड़कर कहा—"यह क्या करते हो! तुम जानते हो मैं कौन हूँ ?"

पुलिस०—"मारकिस आव सेलिसवरी ?"

यह सुनकर सड़क पर जानेवाले सब हँसने लगे। फिर उसने इनके पास आकर कहा—"अब जल्द रास्ता साफ करो या ठहरो मैं अभी बतलाता हूँ!" इस तरह की डाट पड़ने पर बाबू साहब जल्दी-जल्दी रफूचक्कर ही होते नजर आए, और बराबर उसी तरह कदम बढ़ाए चले गए, जब तक कि उन्हें भीड़ की वजस से रुकना न पड़ा। अब इन्हें अपने सवाल का होश आया "जानते हो मैं कौन हूँ" जितनी बेइज्जती यहाँ आकर उठानी पड़ी, जन्म भर नहीं उठाई थी, बस, यह बातें सोच-सोचकर बदन थर्राने और सिर घूमने लगा।

* * * *

अब क्या करें ? कहाँ जायँ ? क्या 'यूस्टन' जाकर लगेज लाएँ, मगर उसे रक्खेंगे कहाँ ? नहीं ! सेक्रेटरी आँफ् स्टेट के पास जाएँ, बात तो ठीक है, परंतु इससे अच्छा तो यह है कि पहले बैंक में जाएँ और वहाँ से कुछ रुपया लावें, जिससे भूख मिटे और फिर गाड़ी पर जहाँ ठीक हो, वहाँ जावें, या उसी से कोई होटल तजवीज करने को कह देंगे, तब क्या यहाँ से आमनिबस पर बैठ लें—पर नहीं ! यदि मैनेजर न मिला, तो किराया कहाँ से देंगे, ठीक है जरा देर तकलीफ और सही, पैदल ही चलें। इस प्रकार के विचार बाँध हमारे बाबू साहब फिर रास्ता पूछ आगे बढ़े। पुलिसमैन ने रास्ता पूछने पर कहा—

पुलिस०—"यहाँ से बहुत दूर है, अच्छा होगा यदि आप........"

फूल०—"गाड़ी कर लें ? मगर नहीं, मैं गाड़ी में नहीं जाना चाहता।"

पुलिस०—"अच्छा, तब यहाँ से जाओ, और कहीं पूछो।"

खैर, यह बात तो मुशकिल न थी, दूसरे आदमी ने इन्हें रास्ता बतला दिया और इन्हें भी उसके तलाशने में दिक्कत न उठानी पड़ी; क्योंकि पहले जमाने के माफिक बैंक आजकल कोने-कचोनो में नहीं होते, बल्कि बादशाही महलों के माफिक मशहूर होते हैं। वहाँ पहुँचकर यह एक भारी फाटक से होते हुए अंदर गए, और वहाँ एक क्लर्क को जो कुछ काम नहीं कर रहा था, ठाला बैठा देखकर पूछा—

उसने जवाब दिया—"जनाब मैनेजर काम में हैं, उनको जरा भी फुरसत नहीं है।"

फूल०—"तब तो वह यहीं मौजूद हैं।"

क्लर्क—"जी हाँ! वह अंदर ही हैं, मगर इस कदर मशगूल हैं कि किसी से मुलाकात नहीं कर सकते।

फूल०—"मुझे पूरे तौर से यकीन है कि वह मुझसे जरूर मुलाकात करेंगे, मेरा नाम फूलचंद है, भारतवर्ष से आया हूँ।" उसने इन्हें नीचे से ऊपर तक देखा और कहा "मैं जाता हूँ, मगर मुझे डर है कि वह आपसे हरगिज नहीं मिल सकते, आपके पास कार्ड है।"

फूल०—"नहीं! अफसोस कि मैं अपना कार्ड केस भूल आया हूँ, पर हाँ, मैं अपना नाम लिखे देता हूँ।"

बाबू साहब ने एक कागज की चिट पर अपना नाम लिखकर दे दिया, और वह नाक-भौंह सिकोड़ता चला गया। थोड़ी देर बाद एक आफिसर ने इन्हें एक तरफ चलने को कहा मैनेजर इन्हें अपने कमरे में घुसते देख अपनी कुरसी से उठा, और एक पास की कुरसी पर बड़ी इज्जत के साथ बैठने का इशारा किया।

बाबू—(खुशी से तमककर) "तुम्हें मालूम हुआ, मैंने अपना नाम तुम्हारे पास लिखकर भेजा था?"

मैनेजर—"जी हाँ! मैं जानता हूँ कि मैं मिस्टर फूलचंद से बातें कर रहा हूँ, इरशाद फरमाइए, हुजूर का सब काम करने को तैयार हैं।"

बाबू—"आपको कुछ इत्तला मेरे बाबत हिंदोस्तान से आई है?"

पाठकगण! यह आप भी समझ लें कि बाप ने यह जानकर कि शायद लड़का विलायत ही न चला गया हो,

जहाँ-तहाँ सब जगह तार दे दिए थे कि लड़का यहाँ से गायब है, अगर आपके पास आकर खर्च माँगे तो दे देना। उनको इस बात की जरा भी खबर न थी कि हजरत पहले ही बहुत कुछ स्त्री से लेकर यहाँ को चले थे।

मैनेजर—"जी हाँ! हम आपकी खिदमत में हर तरह से हाजिर हैं।"

बस, इस समय बाबू साहब को संतोष से साँस लेने का अवसर मिला। कहने लगे,—"मुझ पर एक बड़ा बुरा हादसा गुजर चुका है, जिससे कि आपके पास मैं एकदम आया, मेरा बेग जिसमें कि नोट थे रास्ते में खो गया है, इसलिए मुझे रुपए की बड़ी जरूरत है।"

मैने०—"जी हाँ, हम दे सकते हैं, आप अपने साथ चेकबुक वहाँ से लेते आए हैं। ऐसी खबर हमको 'India' से आई है, आपको जितने रुपए चाहिए, उसका चेक लिख दीजिएगा।"

फूल०—"यही तो हुआ चेकबुक भी तो खो गई।"

मैनेजर ने इन्हें गौर से देखकर कहा—"ऐसा तो बहुत कम देखने में आया है।"

फूल०—"तो क्या आप मुझ पर शक करते हैं?"

मैने०—"हम ऐसा तो नहीं कह सकते; अच्छा तुम्हारे पास कोई खत वगैरह तो जरूर होंगे, उसी से हम ठीक कर लेंगे।"

फूल०—"वे भी नहीं! मुझे यह खयाल न था कि ऐसा मामला गुजरेगा, और इसलिये मैंने सबको रद्दी समझ फाड़-फाड़ गाड़ी ही में फेंक दिए थे।"

मैने०—"तो आपके पास अपने सबूत की कुछ भी चीज नहीं रही?"

फूल०—"जी हाँ, इस किस्म की तो कोई चीज मेरे पास नहीं है।"

मैने०—"किसी किस्म का सबूत भी नहीं दे सकते ?"

फूल०—"पहले मुझे अपना कुल हाल आपसे कहने दीजिए और फिर देखिए कि मैं सच कहता हूँ या झूठ।"

मैने०—"यह सब फिजूल है। मैं बिलकुल भी शक नहीं कर सकता, और यदि किसी किस्म का भी सबूत हो, तो मैं एक ऐसे इज्जतदार की हर तरह से मदद करने को तैयार हूँ, यहाँ तक कि सेठ साहब के नाम से मैं बीस हज़ार पौंड तक दे सकता हूँ।"

इन बातों से और भी रही सही उम्मेद जाती रही। आखिर मैनेजर ने कहा कि अच्छा हम कुछ रुपए आपके होटल के मैनेजर के पास भेजते हैं, वह तुम्हें पहचान कर दे देगा। इन्होंने कहा कि मैं किसी होटल में नहीं ठहरा हूँ, क्योंकि मैंने होटल कामोपालिस के लिये तार दिया था, मगर वहाँ जगह न होने से सब सामान लौटा दिया गया। मैनेजर को इससे और भी शक बढ़ा। बोला "मुझे अफसोस है कि मैं इस हालत में सच और झूठ नहीं पहचान सकता, और मैं बैंक के मैनेजर की हालत में बगैर तहकीकात किए कुछ नहीं कह सकता। हाँ, यदि ऐसा ही है कि तुम भूखे हो तो इस हालत में मैं निज से आपको यह 'हाफ क्राउन' (वहाँ का सिक्का) देता हूँ, अब आप कल बारह बजे आवें, तब तक हम कुछ तहकीकात कर लेंगे।" बस, अब मैनेजर चिट्ठी लिखने लगा, और यह भी रुपया उठा चलते बने।

———

बीसवाँ परिच्छेद

Let that kiss be the seal of pardon.

'अगर फुरसत मिली हो गैर की बातों के सुनने से;
हमारी अर्ज भी सुन लीजिए सरकार थोड़ी सी।'

पाठकगण, उधर तो फूलचंद विलायत में मजा उठा ही रहे हैं, इधर अपने यहाँ होली का त्योहार आ गया है, तो कुछ यहाँ का हाल भी सुनिए। आज भारत में होली है। जिधर देखो, उधर होली-ही-होली। घर में होली, बाहर होली, शहर में होली और दिल में होली, तो फिर ऐसी कौन-सी जगह बाकी है जहाँ होली नहीं! इसीलिये आइए हम सब लोग मिलकर "होली" खेलें! यदि आपका स्वभाव गंभीर है, तो क्या एक रोज बच्चों में मिलकर "होली" खेलना पसंद नहीं होगा। चलिए तो फिर हाथ में कुमकुमा गुलाल लेकर चलें (हाँ! हम सब ऐसे-वैसे प्रकृति के मनुष्य तो हैं ही नहीं कि धूल-मिट्टी में शामिल हों)। तब किसी मित्र के मकान पर चलें। चलिए तो फिर बैरिस्टर राधिकादास के मकान पर चलें, वहीं होली का रंग जमे। मगर हैं! यह क्या? यहाँ तो कुछ और ही ढंग है, मकान सब उसी तरह पड़ा है, कुछ महफिल वगैरह भी नहीं, यह क्या? पंडितजी ने बिलकुल कंजूसी ही लाद ली है, क्या इनका स्वभाव एकदम ही बदल गया? भई वाह! समय की भी बलिहारी है, पारसाल इन्हीं के यहाँ कैसी महफिल जमी थी, और कैसी होली हुई थी।

हमारे रसिक पाठको! कहिए, आपके दिल का क्या हाल है! क्यों, नाउम्मेद क्यों हुए जाते हो, देखें! मामिला

भी क्या है। नौकरों से पूछने पर मालूम हुआ कि पंडितजी ने सब बंदोबस्त पहले ही कर लिया था, मगर न-जाने शाम को जब से ऑफिस से लौटे हैं क्या हुआ, बाहर ही नहीं आए।

बाबू साहब जिस समय चार बजे ऑफिस से लौट रहे थे सैकड़ों प्रकार के विचार के घोड़े उनके हृदय में "डरबी स्वीप" का मजा दिखा रहे थे। सोचते थे कि बस, अब घर पहुँचे और यार-दोस्तों की महफिल जमी, और बस फिर क्या है। खुशी-खुशी एक कदम की जगह चार-चार रखकर घर लौटे। छतरी कोने में रखकर वैसे ही खटखट जूते की आवाज करते हुए ऊपर चढ़े। मगर हैं! यह क्या!! कमलरूपी हृदय पर तुषार पड़ गया। शांतिमय चेहरा इस प्रकार शोकमय क्यों हुआ? सब तरफ देखभाल कर बोले—

"अरी ओ मटरुआ की अम्मा! आज बाई साहिबा कहाँ गईं?" एक पचपन-छप्पन वर्ष की डुकरिया ने अंदर से आकर जवाब दिया। यह इनके यहाँ बहुत दिनों से चाकरनी का काम करती है।

"जी सरकार हियाँहीं तो थीं, तनके देर हुई कि एक कागद आया हता, बस पढ़ते ही कुछ गुन-गुनाकर अंदर चली गईं हतीं।"

फिर वैसे ही अंदर जाना पड़ा, वहाँ देखा तो एक पलँग पर मुँह फेरे हुए श्रीमती महिला कोपस्वरूप धारण किए पड़ी हुई हैं। बस, अब तो सिट्टी गुम हुई। यह ढंग देखकर मुँह सूख गया, आज होली का दिन, ऐसा सुअवसर, और कोप-भवन, बात भी क्या है (ठीक है! स्त्रियाश्चरित्रं पुरुषस्य भाग्यं देवो न जानाति कुतो मनुष्यः)। उसी सकपकाती हुई आवाज़

से पूछा "क्यों प्यारी, यह क्या बात है? आज तो होली है न!"

पहली दरख्वास्त नामंजूर की गई, या कहिए कि दाखिल दफ्तर हुई, हुक्म नदारद। मगर फिदवी को कब चैन, यदि एक बार नहीं तो फिर सही, किस्मत आजमाई की गई। सब रंग-भंग हुआ जाता है।

"क्यों प्यारी, है भी क्या? कुछ कहो तो सही! जो कहो सो करने को तैयार हूँ, फिर इतना कोप क्यों? देखो आज होली का दिन है, सब यार दोस्त आते होंगे, कैसी खुशी का समय है, भला बरस दिन का त्योहार इस पर इतनी नाराजी, उठो अब ज्यादा क्लेश न करो! उठती हो कि फिर और कुछ...." इतना मुस्कराकर कहते हुए श्रीमतीजी का हाथ पकड़ कर उठाने लगे।

अब जरा कुछ सुनवाई हुई, बाँह झटककर श्रीमतीजी ने कर्कशस्वर में कहा—"यहाँ भी चैन नहीं लेने देते, मरती-मरती तो यहाँ आई हूँ; पर यहाँ भी मैं कुछ तुम्हारा लेती हूँ, जाओ मुझे हैरान मत करो, चूल्हे में जाए ऐसी होली।"

"हैं! हैं! यह क्या कहती हो, प्यारी! तुम तो ऐसी समझदार होकर नादान बन जाया करती हो, कुछ कहो तो सही बात भी क्या है। कुछ माँ जी ने तो नहीं कहा!"

"कहने में क्या कुछ कसर रक्खी है, ऐसे निपूते घर में आग लगे। और तुम्हें क्या कुछ मेरी परवाह है, बस यहाँ या तो दिन भर जेल में बंद रहो, और जो कहीं आने-जाने को कहा, तो बस, वह खंखा खाने को दौड़ती है। अब बतलाओ नाविलों के पढ़ने में क्या हर्ज है, जो हमेशा हमसे निगोड़ी

काँय-काँय किया करती है कि 'अब तो पढ़-पढ़ के सुरग को चढ़ेगी।' कहीं कहती है—'देख तेरी आँखें बिगड़ जायँगी, दिन भर पढ़ना अच्छा नहीं होता' सच है पढ़ने-लिखने में यह बात है, अब ऐसी कुपढ़ में तमीज से बातचीत करना कहाँ। देखो परसों के दिन चमेली यहाँ चली आई थी, सो ऐसी बद-तमीजी की बातें करने लगी कि मैं तो शरम के मारे मर गई। बात यह है कि जनम भर तो चक्की पीसी, चूल्हा फूँका और चरखे निगोड़े को पीटा, एक हरूफ लिखना-पढ़ना सीखा नहीं, अब वह क्या जाने कि भले घर की पढ़ी-लिखी बहू-बेटियों से कैसे बातें करते हैं। बस, उसे देखकर एक तख्ते का टुकड़ा पटक दिया, और कहा 'बैठ जा बेटी' और सब झूठा झगड़ा दुनिया भर का गाना शुरू किया। बेचारी का मगज चाट लिया। वह मुझसे कहने लगी—'बहन! न-जाने तुम यहाँ कैसे रहती होगी, मेरा तो दिमाग बिगड़ गया; अब तीन दिन में मुशकिल से लेवेंडर वगैरह लगाने से सुधरेगा, तुमसे बात भी न करने पाई, इसी ढड्ढो ने तीन घंटे का खून किया।'

"हाँ, एक बात कहना भूल ही गई। वह कहीं लेवेंडर का रूमाल हाथ में लिए थी। उस पर कहने लगी कि तुममें न मालूम काहे की बास आती है, और बेचारी को उलहने-सलहने देकर उल्लू बना दिया। उसने अखबार का नाम लिया, तो कहा कि क्या कोई गहना होता है, और गहने के बारे में तो सारा महाभारत पलट दिया। कहने लगी कि क्या तुम्हारा धनी कोई बड़े घर का नहीं है, जो तुम्हारे पास न तो पाँच गहने पैरों में हैं, न सात गले में हैं और कानों-हाथों में तो नाम-

निशान ही नहीं। पढ़ने पर भी बड़ी-बड़ी कहानी कह डाली, उस बेचारी को पीछा छुड़ाना मुशकिल पड़ गया।

"हा! परमेश्वर, ऐसी-ऐसी कुपढ़ स्त्रियाँ होती हैं। मुझे तो मालूम न था, जब यह इतनी ज्ञान-शून्य है, तो भला विद्वान् ग्रंथकर्ता और उनके रसीले लेखों की बातों को क्या समझ सकती है—उनके लिये तो किताबें पढ़ना, आँखें बिगाड़ना ही हैं। ठीक है, मनुष्य जाति को जब तक शिक्षा न दी जाय, पशु से भी गया बीता है। धन्य है, शिक्षा को भी! राम-राम मैं तो अब ऐसी मूर्खा का मुँह भी नहीं देखूँगी, दिन-भर की टर्र-टर्र कब तक सुनी जायगी, अब की कहा, तो वह सुनाऊँ कि नानी-दादी याद आ जायँ, और देखो, आज "स्त्रीशिक्षा-वर्धिनी सभा" (Female Education Improving Society) का वार्षिकोत्सव था। मैंने वहाँ जाने को गाड़ी को हुक्म भी दे दिया था कि बस इतने में आई, और कहने लगी कि हमारे यहाँ 'होली, दिवाली' को घर से बाहर नहीं निकलते हैं, और एक ढेर गोबर के कंडों का लगाकर लगी पूजा करने। भला तुम्हीं देखो कितनी नामाकूल हरकत है? जब मैंने कहा कि वहाँ जाना मुझे जरूरी है, क्योंकि मैं वहाँ की सेक्रेटरी हूँ, तो सैकड़ों तरह की बातें कह डालीं। अब इन सब बातों का निबटेरा कर दोगे, जब कुछ होगा, नहीं तो बस कल्ह तुम मेरा मुँह नहीं देख सकोगे। क्या तो उस हड़पा को यहाँ से दूर करो या बस मैं ही खुद अपनी जान दे दूँगी।"

"हाय! हाय! भला एक त्योहार के दिन तो बुरी-भली बातें मुँह से न निकाला करो! और भला यह तो देखो, वह तुम्हारी सास है, तुम्हें इस तरह का बर्ताव........................"

"बस-बस मैं समझ गई, तुम तो उसी की हिमायत पर तुले हो। फिर नाहक यहाँ आए हो।"

इस समय तो अच्छा जज भी हो, तो फैसला करना जरा टेढ़ी खीर थी। बैरिस्टर साहब तो बड़े ही शशोपंज में पड़े। इधर देखते हैं, तो 'नवल दुलहनिया' का कोप, और उधर मातृ-भक्ति। कौन-सी प्रबल है? देखें किस तरफ पंडितजी ढुलकते हैं। इस वक्त तो मुद्दई-मुदालेह दोनों बराबर हैं, अब जिसकी तरफ वकील, बैरिस्टर तेज हुए उसी तरफ मुकदमा तय होगा। माता की "प्रीति और भक्ति" उसकी तरफ से वकील बनकर पैरवी करते थे, और इधर "यौवन और तिरछी नजर" बैरिस्टर बनकर, डाँट-डपट कर रहे थे, बस मुकदमा खूब तेजी पर था, देखें किसकी जय होती है। मातृभक्ति यौवन के सामने न ठहर सकी। बैरिस्टर साहब गिड़गिड़ाती आवाज से कहने लगे "बस करो नाहक ज्यादे गुस्से से सिर में दर्द हो जायगा, तो डॉक्टर घोष को बुलाना पड़ेगा, जैसे तुम्हारी तबियत में आवे, वैसे रहो। सिर्फ मेरे ऊपर खयाल करो, दुनिया बका ही करती है।"

"वाह! प्यारे वाह! तुम्हारे ही दम से बस मैं जिंदा हूँ, नहीं तो कभी की मर गई होती, तुम बगैर कौन ऐसा कहे। और कहते हुए गलबाँही डालकर लिपट गई। पंडितजी का भी कंटक मिटा, मगर घबड़ाइए नहीं, अभा थोड़ा-सा अभिनय बाकी है।"

पंडित—"क्या घोष बाबू आए थे? तुम्हारी उस उँगली पर उन्होंने वेंडेज बाँधा या नहीं? देखो तुम चाकू वगैरह से पेंसिल मत बनाया करो, नाहक के लिए उँगली में लग गया, और मुझे तो आज दिन भर इसी का खयाल रहा।"

श्री०—"कुछ भी नहीं! मुझे क्या खबर थी कि निगोड़ी पेंसिल बनाने में उँगली कट जायगी, और हाँ! क्यों साहब आज होली है। बतलाइए वह 'चूड़ीदार घड़ी' (Bracelet wateh) कहाँ, आज ही का तो वादा था न?"

उसने एक तिरछी दृष्टि से उसे देखा।

पंडित—"अच्छा कल ला दूँगा, आज तो उधर से आते वक्त याद नहीं रही।"

श्री०—"हाँ! हाँ! ठीक है, मेरी चीज के लिये क्यों याद रहेगी, जब जानती, जब 'होली' की भी याद न आती, या अपनी बाइसिकिल लाना भूल जाते। और वह मनीआॅर्डर भी काहे को किया होगा?"

फिर बैरिस्टर साहब की सिट्टी गुम हुई, हाव-भाव और लचके ने तो बिलकुल अधमरा कर ही दिया था, भला जब श्रीमती अर्धाङ्गिनी देवी ऐसी नाराज हैं, तो फिर होली में क्या मजा, बस यही सोचते हुए झट उन्होंने ड्रायर में से 'परचेस आॅर्डर बुक' निकालकर एक आॅर्डर मार्कस कंपनी (Marcks & Co.) के नाम लिखकर नौकर को लाने को दिया, और एक १२५) का मनीआॅर्डर अपने छोटे सर सालार जंगबहादुर के नाम लिखकर निपटारा किया। बस, और सब झगड़े निपट गए, और वह चुंबन माफी की निशानी हुआ।

होली के रंग में भंग न पड़ने पाई। कहिए पाठकगण! ज्यादा देर तो नहीं लगी, देखिए, कितनी जल्दी सब खबर लाया हूँ! लीजिए वह पंडितजी साहब भी स्लीपर फटकारते हुए आन पहुँचे, अब देरी क्यों? उड़ने दो गुलाल और मचने दो होली। हम भी आप सब लोगों को ऐसी खुशी में छोड़

और पंडितजी को अपनी श्रीमती के मना लेने पर मुबारकबादी देकर बिदा होते हैं।

इक्कीसवाँ परिच्छेद

Where'ver he turns he meets a stranger's eye,
His suppliants' scorn him his followers fly,

Samuel Johnson.

बस यह बैंक से उसी सिक्के को लिए हुए झटपट बढ़े चले गए और एक होटल में जा बैठकर सोचने लगे कि डेढ़ शिलिंग तो खाने में लगेगा और दो पेंस वेटर को देने पर, दस पेंस फिर भी बचेंगे, यही सोचकर इन्होंने खाना मँगवाया और पाँच मिनट तक खूब दत्तचित्त होकर भोजन किया। मगर होटलवाले ने इनके सामने दो शिलिंग एक पेंस का बिल पेश किया, तो इन्होंने कहा कि बाहर साइनबोर्ड पर डेढ़ शिलिंग लिखा है, बिल में कोई गलती तो नहीं हुई? जवाब मिला कि नहीं, वह उतने ही का खाना है। बेचारे ने लाचार हाफ क्राउन दे दिया और एक बुरा-सा पेपर, जो उस मेज पर पड़ा था, उठाकर देखने लगा। बड़ी देर हुई, मगर वेटर ने बाकी दाम वापस नहीं दिए। तब तो इन्होंने उससे बाकी के दाम माँगे। जवाब पाया कि यहाँ देकर वापस नहीं मिलता। बड़ा झगड़ा हुआ, उसने इन्हें निकल जाने को कहा। बड़ी मुश्किल के बाद उसने पाँच पेंस इनकी मेज पर फेंक दिए और यह

गुस्से में भरे लेकर चले तो सोचने लगे कि हाय-हाय इँगलड में ब्रिटिश राज होकर भी ऐसे-ऐसे बदमाश यहाँ भरे हैं, खैर अभी पाँच पेंस तो हैं ! अब इन्होंने चाहा कि उस जहाजवाले अँगरेज से भेंट करें, वह बड़े दयालु थे, शायद बैंक में इस बात की गवाही दे दें कि मैं फूलचंद हूँ, झट आप पुलिसमेन के पास पहुँचे और कहने लगे कि किस गाड़ी से उन्हें 'सेलिस वरी हाउस लेन' को जाना चाहिए। उसने कहा कि 'लाल ट्राम' से। उसका किराया कुछ ज्यादे तो नहीं है, करीब दो पेंस है, खैर तब भी तीन पेंस तो बचेंगे, गाड़ी भी आती हुई नज़र पड़ी। यह वही गाड़ी है जिसमें बैठने की पुलिसमेन ने सिफारिश की थी। आप जब तक कि वह पास न आ गई ठहरे रहे और तब आप उस गाड़ीवान की तरफ़ देखने लगे जो कि अपनी निगाह केवल सड़क के ही ऊपर रक्खे था। किसी तरह पर 'कंडक्टर' ने इनका अभिप्राय समझ लिया और घंटी बजाई, गाड़ी हल्की कर दी गई, (आपको इस समय तक 'ट्राम' में बैठना नसीब नहीं हुआ था. इससे यह मतलब नहीं कि इन्होंने कलकत्ते में ट्राम गाड़ी न देखी हो, या इस जमाने में ट्राम गाड़ी वहाँ न चलती हो। आजकल तो कलकत्ते में बिजली की ट्राम चलने लगी है, मगर हमारे बाबू साहब मामूली आदमी तो थे ही नहीं, जिस समय आवश्यकता हुई तीन-तीन बग्घी दरवाजे पर खड़ी हैं, फिर ट्राम में किस लिये बैठते।) तत्पश्चात् आप यही सोचते थे कि यह गाड़ी बिलकुल ठहर जाय और मैं उसके पास पहुँच जाऊँ तब बैठूँ, मगर ऐसा नहीं हुआ और यह अचंभे से उसके साथ-साथ दौड़ने लगे। आखिर को कंडक्टर ने चिल्लाकर कहा "आते हो कि नहीं ?" बड़ी दिक्कत के बाद

आप उस पर सवार हो सके। फिर भी एक आफत से बचे कि दूसरी मुस्तैद है। जब कि किराया वसूल किया गया, तब मालूम हुआ कि तीन पेंस लगते हैं, ज्यों-त्यों पास खरीदा और बैठे रहे। अब इनको तो मालूम ही न था कि 'सोलिस्बरी स्ट्रीट' कहाँ है, इसलिये आप बैठे ही चले गए और वह जगह निकल भी गई। जब कंडक्टर ने आकर टिकट देखा तो कहा कि वह जगह तो निकल भी गई, लाचार वहाँ ही उतरना पड़ा, पूछने पर मालूम हुआ कि वह जगह एक मील पीछे रह गई है, जैसे तैसे एक मील लौटकर उसी नंबर के मकान पर पहुँचे। घंटी बजाने से एक दरवाजा खुला और एक मर्द नौकर बाहर आया। इन्होंने भेंट की इच्छा प्रकट की, मगर उसने सिर हिलाकर नाहीं का इशारा किया, मालूम हुआ कि वे सब लोग घर पर नहीं हैं, और करीब एक हफ्ते बाद लौटेंगे, यह सुनकर वज्र भी गिरता, तो सहन कर लेते परन्तु यह सहन न हो सका। बेचारा टकटकी लगाए दीवार की तरफ देखता रहा, सब दिन भर की घटना इसकी आँखों के सामने फिरने लगी, और फिर यही शब्द मुँह से निकल पड़े "हाय ! क्यों बैठे बिठाए अपने पाँव में आप ही कुल्हाड़ी मारी ?"

हमारे बहुत से पाठकगण विलायत की यात्रा का विस्तार सुनते थक गए होंगे, परंतु प्रिय पाठक, जरा थोड़ा-सा तो उस विशाल भूमि का वर्णन और सुनिए जिसको हमारे 'नई रोशनी' (new light) के बाबू साहबान स्वर्ग तुल्य समझते हैं और 'विलायत' का नाम लेते ही उनके कर्ण में मानों अमृत बरसने लगता है, इसी हेतु मेरी भी इच्छा वहाँ का हाल विस्तारपूर्वक ही लिखने की है। वह भूमि कैसी है ? वहाँ जाने से कैसे-कैसे

अपार आनंद मिलते हैं और वहाँ के निवासियों में सभ्यता और स्वतंत्रता के बीजों ने कैसे-कैसे उत्तम फल लगाए हैं और उनमें आदमियत कितनी है ? यह सब आप खुद ही भली प्रकार जान सकेंगे। सुनिए तो, हाँ ! हमारे बाबू साहब उस अँगरेज से मुलाकात न होने से निराश तो हो ही चुके थे, अब क्या करना ? जमा खर्च, हिसाब-किताब सब बराबर है, रोकड़ बाकी बचे हैं हमारे बाबू साहब के पास केवल दो पेंस, अब जिस समय वही सुबह की कैफियत याद आती है तो फिर वही शोक ! शोक !!

हाय ! अभी तो दिन ही का अनुभव प्राप्त हुआ है, न जाने रात्रि, विना गृह की रात्रि, किस प्रकार कटेगी ! फिर कैसा करें ? कहाँ जावें ? इस विपत्ति के समय घर की व्यवस्था क्रम-क्रम से याद आने लगी, इस समय स्त्री के प्रेम ने भी अपना जोर दिखलाया, यानी सूखी-मुरझाई लता फिर हरी-भरी हुई, 'हाय ! मैंने उस बेचारी दीन अबला को कैसा कष्ट दिया, आज तक मैंने अपने व्यभिचार में पड़े रहने के कारण एक दिन भी उस पर कृपाकटाक्ष न किया, एक दिन भी उससे मीठे स्वर से बात न की, सदा झिड़कता और लड़ता ही रहा, कभी बेचारी ने बुरा न माना, मानों अहंकार तो उसे छू ही नहीं गया था, कुछ भी बुरा-भला कहता, पर वह सदा हाथ जोड़कर नम्र और विनीत भाव से ही रहती, हाय ! उस बेचारा निपट बाला से किस प्रकार का विश्वासघात किया, उससे जब रुपया भी लाए, तो कैसे-कैसे झूठे वाक्य कहे, वह बेचारी क्या जानती थी कि मेरे पति का सर्वनाश ही होना है, मैं अधम उसे छूने अथवा वार्तालाप करने लायक भी नहीं। हा ! सत्य_

बधे ! क्षमा करना, पिता का प्रेम भी देखो कि जिस पुत्र ने इतना किया—घर, द्वार, स्त्री, प्रीति, धर्म-कर्म सब छोड़ बैठा तिस पर भी यहाँ तार दे दिया कि जितनी आवश्यकता हो देना। धन्य है, पिता तेरे हृदय को, माताजी तो घंटे भर न जाने से छटपटाया करती थीं अब कैसे होंगी, वह क्या जानें कि यह अधम, नीच बिलकुल बिगड़ बैठा है, हाय कैसे-कैसे कर्म किए..............................

सब मानों सर्प बन-बनकर खाने को दौड़ते हैं, बस तो अब दुनिया में जीकर क्या करना, परंतु नहीं ! नहीं !! ऐसा कभी नहीं हो सकता ! जहाँ तक बने यत्न कर यहाँ से शीघ्र ही लौटें और वहाँ जाकर समस्त जनों से क्षमा माँग माता-पिता के चरणों में दिन काटें जो-जो बुरे कर्म करनेवाले हैं, उनको उचित दंड दिलवाएँ, या जैसे बने तैसे उन नीचों से इस पृथ्वी को हल्का करें। ठीक है, अभी जीना अवश्य है, तो क्या करें ? घर को तार दें ? पर रुपया कहाँ ? यहाँ तो सिर्फ दो ही पेंस हैं, फिर वही याद आया...........

*"खबरदार ! लंदन में यदि तुम विना पैसे के रहोगे, तो कोई मित्र मिलने के पहले तुम भूखों मर जावोगे। सहसा वहाँ से एक आदमी को निकलते देख उन्होंने पूछा "माफ कीजिएगा साहब !" वह मनुष्य ठहर गया, फूलचंद बोले— "मैं एक लखपती का लड़का हूँ, परंतु दुर्भाग्यवश मैं यहाँ बिल्कुल भिखमंगा हो रहा हूँ..........."

"Mind that you never find yourself penniless in London or you'll starve before you can find a friend."

Austin Fryers.

वह मनुष्य हँसता हुआ चल दिया, यह उसकी तरफ अचंभे से देखने लगे। इतने में एक पुलिसमैन ने आकर इनके कंधे पर हाथ रक्खा और कहा "सुनता है! यहाँ यह बात न करना, भीख माँगता है! चल भाग, नहीं तो पकड़ा जायगा, नहीं जानता यहाँ भीख माँगनेवाले पकड़ लिए जाते हैं।"

यह भी सोचते हुए चलने लगे "असबाब लाना तो अभी बिलकुल फिजूल होगा!" यही सोचते-सोचते याद आया कि ठीक है चलो 'मेश परेड लेंबेथ' (Mash Parade Lambeth) में मेरे एक दोस्त का मकान है, जब वह इंडिया आया था, तब उससे बड़ी मुलाकात हो गई थी और उसका हमारा पत्र-व्यवहार भी हुआ करता था, वह अवश्य पहचानेगा और कुछ सहायता करेगा। यह सोचकर उन्होंने वहाँ का रास्ता पूछा, मालूम हुआ कि वह जगह यहाँ से पाँच मील है, खैर एक ट्राम आती हुई मिली और यह निश्चय करके कि उसका भाड़ा दो ही पेंस है, यह उसमें बैठ गए। यहाँ पहुँचकर देखा बड़ा भारी बाजार है, इस गड़बड़ से बचते हुए यह झट "३३" नंबरवाले मकान में पहुँचे। वहाँ जाकर देखा कि वह एक अखबारों की दूकान है। थोड़ी देर में फुरसत होने पर इन्होंने एक हृष्ट-पुष्ट लेडी से दरियाफ्त किया, उसने जवाब दिया कि "न मालूम वह पंद्रह रोज से कहाँ है?"

फूलचंद—"क्या वह इसी मकान में रहते हैं?"

लेडी—"अह! नहीं! खत यहाँ आते हैं, वह रोज आकर उनको ले जाया करते हैं, वह तो किसी 'स्टेज' में नौकर है।"

"स्टेज का नाम सुनते ही यह अवाक् रह गए, जो

अँगरेज कि भारतवर्ष में इतने रोब-दाब से रहता था और जिसकी इतनी इज्जत होती थी, यहाँ एक स्टेज में नौकर है !"

बाबू—"आप जानती हैं, वह कहाँ रहते हैं ?"

लेडी ने जवाब दिया "मुझे उनका घर तो नहीं मालूम, क्योंकि सैकड़ों मनुष्यों के पत्र इस जगह रोज आते हैं, सबके मकान भला कैसे मालूम हो सकते हैं, परंतु आपकी हालत ठीक नहीं मालूम होती। कहिए क्या मामला है।"

बाबू—"क्या कहूँ बहुत ही बुरी दशा है।"

लेडी—"आप कोई 'जासूस' तो नहीं हैं ?"

बाबू—"नहीं, साहब, मैं जासूस नहीं हूँ, बड़ी मुसीबत में पड़ा हूँ, यदि हो सके तो आप मुझे उचित सलाह दीजिए, जिससे मैं इस आफत से बचूँ। क्या आप मेरी कथा ध्यानपूर्वक सुन सकेंगी ?"

लेडी—"हाँ, हाँ, क्यों नहीं, मैं बहुत खुशी से अपनी राय दूँगी और आपकी सहायता करूँगी, चलिए आप उस कमरे में चलिए और वहाँ सब हाल कहिए।"

बाबू साहब 'धन्यवाद' कहते हुए उठे और एक उम्दा सजे-सजाए कमरे में ले जाए गए, जहाँ कि यह एक 'सोफा' पर बैठकर अपनी दुःख-कथा कहने लगे।

बाबू—"मेडम साहिबा, मैं कल हिंदोस्तान से यहाँ आया हूँ, मैं सीधा लंडन न आकर लिवरपूल उतरा था, और मेरा सब लगेज वहाँ से होटल कामोपालिस को रवाना कर दिया गया था।"

लेडी—"ठीक !"

बाबू—"परंतु जब मैं सुबह को गया तो मालूम हुआ

कि वह बिलकुल भरा हुआ है, और सामान स्टेशन को वापस भेज दिया गया। सबसे ज्यादा मुसीबत यह हुई कि एक कैश-बेग जो कि मैंने अपने पास रख लिया था, वह भी चोरी गया। शायद ढूँढ़ने तलाशने पर उसके पा जाने की उम्मेद होती, परंतु मेरे पास इस समय एक पेंस भी नहीं है।"

लेडी—"हाय, परमेश्वर!"

बाबू—"मैंने सोचा था कि मेरा दोस्त यहाँ रहता है, मुझे न मालूम था कि यह केवल पता-ही-पता है, यदि वह मुझे मिल जाता, तो विश्वास था कि वह मेरी सहायता अवश्य करता। अब आप बतलाइए कि मैं क्या करूँ, इस समय कोई तदबीर हो सकती है?"

लेडी—"हाँ, हाँ, क्यों नहीं!"

बाबू—"तो शीघ्र बतलाइए।"

लेडी—"यहाँ बहुत-सी दूकाने हैं, जहाँ कि चीजें गिरवी रक्खी जाती हैं। जब कि पास नकद कुछ न रहे, तो बस यही एक तरीका रुपया वसूल करने का है। क्या तुम्हारे पास गिरवी रखने लायक भी चीज नहीं है? घड़ी भी नहीं है?"

बाबू—"नहीं, मैं घड़ी नहीं रखता।"

लेडी—"बटन, अटन कफ वगैरह कुछ भी नहीं है?"

बाबू—"वह बिलकुल सादा है, करीब-करीब बिलकुल बे कीमत के हैं। मैं हमेशा सादगी पसंद करता हूँ, क्या और कोई तरकीब नहीं है!"

लेडी—"मेरी समझ में बस एक ही तरकीब और है?"

बाबू—"ओह! शीघ्र कहिए, वह क्या है, मैं जरूर करूँगा, कुछ भी हो।"

लेडी—"आप कपड़े उम्दा पहने हुए हैं, तो बस अपना लिबास गिरवी रखिए, कुछ दाम मिल ही जायँगे। खाने का काम तो चलेगा। भिखारी शौकीन थोड़े ही होते हैं। माफ कीजिएगा।"

बाबू—"ओह! मैं कपड़े बेशक गिरवी रख सकता था, मगर बगैर कपड़ों के मैं कैसे निर्वाह कर सकूँगा।"

लेडी—"नहीं जी! तुम्हें एक बुरा सादा-सा सूट भी मिल जायगा, और बाकी के रुपए भी मिल सकते हैं।"

बाबू—"मगर बाजार में कपड़े कैसे बेच सकूँगा, यह काम तो मैंने कभी किया नहीं।"

लेडी—"कुछ हर्ज नहीं, तुम मेरे कमरे में कपड़े उतार डालो, मैं इतना काम तुम्हारा कर दूँगी, मैं तुम्हारे कपड़े ले जाऊँगी और मुझे वे जानते हैं, इसलिए शायद दाम भी कुछ ज्यादे मिल जायँ।"

बाबू—"धन्य है! आज तुमने मुझे भूखों मरने से...."

लेडी—"बस, बस, ज्यादा तारीफ रहने दीजिए, जल्दी कीजिएगा, मैं अपनी दूकान के बारे में किसी को देखने को कह आऊँ।"

जैसे-तैसे बाबू साहब सूट के कपड़े उतार-उतारकर पलँग पर रखने लगे, सब कपड़े उतर चुके थे, सिर्फ शर्ट रह गई, सोचा कि इसे भी रख दें, क्योंकि यह उम्दा कपड़े की बनी हुई है, रुपया इतना तो मिले कि इस वक्त खाने को खा लें और रात को कहीं पड़ने का इंतजाम हो जाय और 'इंडिया' को तार दे सकें, मगर फिर सोचा कि हाँ! उसके कालर पर P. C, यह हरूफ बने हुए हैं, जो कि एकमात्र चीज इनके पहचाने जाने

के निमित्त बची रह गई थी। इन्होंने जल्दी से अपने कपड़े लपेटकर दे दिए। कपड़े लेकर मेडम चली गई, जाते समय ठंड से बचने के लिये अपना कम्बल ओढ़ लेने को भी कहती गई।

फूलचंद अकेले बैठे बस्ती की शोभा निहार रहे थे; उन्होंने देखा कि वहाँ एक घटना हो गई। दो आदमियों में खूब लड़ाई हुई, मार-पीट, गाली-जूता, सब कुछ हुआ। तब एक थाने में खबर करने गया, दूसरा जल्दी-जल्दी इसी मकान की ओर मुड़ा। इतने में एक आदमी और मिला और कहने लगा—

"कहाँ-कहाँ टोनी लेंप किन, यहाँ आओ इधर।"

"हालो, विली, अच्छे मिले, गुड इवनिंग।"

"जल्दी करो, पहले मुझे इस मकान में छिप जाने दो।"

यह कहते हुए वे दोनों इस मकान के अंदर आ गए। एक ने लेंप किन से कम्बल ओढ़कर लेट रहने को कहा। अब तो बाबू साहब बहुत डरे। अकेले एक मकान में और फिर उसी पलँग पर और वही कंबल ओढ़ने को उसने कहा! डरकर बोल उठे "यहाँ मैं हूँ।"

लड़नेवाला—"यू बदमाश, काला आदमी, दूसरे के मकान में चला आया है। बदमाश! जिस समय मैं मजदूरी को बाहर गया उस वक्त से तू मेरी वाइफ के उड़ाने के घात में बैठा है, ठहर जा रे दुष्ट, तुझे मैं अभी बतलाता हूँ, अभी सब हड्डे-गुड्डे तोड़े डालता हूँ, टोनी यहाँ आना।"

एक बला टली नहीं कि दूसरी आ पहुँची। अब और कुछ उपाय न देख बाबू साहब ने कहा "यह सब गलती है साहब! मेरे यहाँ आने से आपकी कुछ विशेष हानि नहीं हुई, मैं यहाँ...... ..."

लड़ने०—"कुछ नुकसान हुआ नहीं, बोलता है—बतला जल्दी मेरी मिसस कहाँ है ? बोल !"

और यह कहता हुआ वह मुट्ठी बाँधकर मारने को टूटा। खूब गुत्थमगुत्था होने लगी। फिर लड़नेवाले ने कहा "अरे बदमाश ! नंगा बैठा है।"

बाबू—"(बिलकुल थर्राते हुए) वह कपड़े, मैंने गिरवी रखने भेजे हैं।"

इसके बाद उसने इनके दो-चार ठूँसे और जमाए। इसी समय ऊपर आते हुए उसे एक आवाज सुनाई दी, जो कि उसी दयालु लेडी की थी। बाबू साहब गिर पड़े थे, उठकर बैठ गए, लेडी यह देखकर कि उसका पति बिलकुल गुस्से में भरा हुआ है और चेहरा सुर्ख हो रहा है, समझी कि इस आदमी से कुछ कहा-सुनी हो गई होगी और इसी की वजह से यह सब कुछ हुआ। वह बोल उठी "अरे नीच, पाजी, मैं तुझ पर कृपा करने गई और तूने मेरे बुड्ढे खाविंद को मारकर उसका बदला दिया।"

लड़ने०—"क्या तुम समझती हो कि यह मुझे मार सकेगा ?" जब सब बातें खुलीं, तो उसने इनसे माफी माँगी और लेडी ने उसे एक बुरा-सा मैला सूट और एक सावरेन (सिक्का) दिया। सूट पहनकर और लेडी को धन्यवाद देकर जितना शीघ्र हो सका, फूलचंद वहाँ से चलता बना।"

....

वहाँ से चलते चलते फिर होटल की तरफ से निकल पड़ा। रुपए पाकर फिर दिल में उमंग आई, तार देना ही चाहिए।

"वेस्टमिंटर टॉवर" (Westminister Tower) की घड़ी ने टन-टन दस बजाए। सोचा कि अब तो रात ज्यादा चली गई है, कहीं चलकर खाने और सोने का इंतिजाम करें, सुबह तार देंगे। होटल की तरफ से निकलने से फिर मैनेजर पर बदला लेने का खयाल हुआ, सोचा कि यदि रुपया पा जाऊँ तो होटल भर को खरीद लूँ और फिर ठोकरें मार-मारकर सब आदमियों को निकाल दूँ और सब सामान फिकवा दूँ।

इसी विचार में मग्न चले जाते थे कि इन्हें एक छोटा-सा होटल दिखाई पड़ा। पास जाने पर सब संदेह मिट गया क्योंकि उसके तख्ते पर लिखा था—"ब्राउंस टेंपरेंस होस्टल" (Browns Temperance Hostel) दर्वाजे पर धक्का देकर अंदर गए, एक औरत खाने की रकाबियाँ ले जाती हुई नजर पड़ी, झटपट पूछा कोई बिस्तर खाली हो, तो मुझे बतला दिया जाय।

औरत—"क्या तुम्हारे लिये ?"

बाबू—"हाँ, बेशक, हमारे वास्ते।"

इस पर वह बड़े जोर से हँसी और यह कहती हुई जाने लगी—"मुझे यकीन है कि तुम्हारे वास्ते कोई जगह नहं है, पर खैर ! मैं मिस्ट्रेस को भेजती हूँ।" बाबू साहब सोचने लगे कि इसने 'तुम्हारे वास्ते' इन लफ्जों पर जोर क्यों दिया ! क्या किस्मत बिलकुल ही उलट गई है ! यहाँ भी बेइज्जत होगी क्या ?

इतने ही में किसी के आने की आहट सुनाई दी, बेइज्जती पर एक काली पोशाक पहने, डाँट-फाँट की स्त्री आई। उसने इन पर एक तेज निगाह डाली और कहने लगी—"मुझे

अफसस है कि यहाँ कोई जगह खाली नहीं है, जो तुम्हें भाड़े पर दी जाए।"

बाबू—"क्या बिलकुल जगह नहीं है, सब भरा है ?"

लेडी—"जी हाँ ! मैं कोई जगह नहीं दे सकती।"

इतने ही में क्या देखते हैं कि दो जवान एक फिटन पर बैठे हुए आए और सब सामान उतरवाकर एक जगह रक्खा और उसी स्त्री से कहा "मिसेज ब्राउन ! हमें दो उम्दा कमरों की जरूरत है।" उसने जवाब दिया—'बहुत खूब साहब ! और फिर एक छोकरे की तरफ मुड़कर बोली, यहाँ आओ, इस लगेज को १० और ११ नंबरवाले रूम्स में ले जाओ।" नए आए हुए काफी रूम में घुसकर काफी उड़ाने लगे। कुछ देर के लिये बाबू साहब के हवास पैंतरे हुए। मुझमें ऐसी कौन-सी बात है जिससे कहीं जगह नहीं मिलती ?

बाबू—मैं समझता था तुम्हारे यहाँ कोई जगह खाली नहीं है ?

मिसस—मैंने कह दिया—आपके लिये कोई जगह खाली नहीं है, साफ-साफ अगर आप सुनना चाहते हैं, तब तो यह बात है—

एक छोकरी ने आकर कहा कि कहीं सरायँ तलाश करो, यह काफी शाप है, यहाँ तुम सरीखे नहीं ठहर सकते। अब बाबू साहब की स्वप्न-निद्रा टूटी। सोचा ठीक है, हमारे सरीखों के लिये यह जगह नहीं है, क्योंकि इस समय हमारी ड्रेस ऐसा बुरी और मैली है तिस पर भी कोहनियों पर फटी हुई। यह सोचकर झटपट वहाँ से भी रवाना हुए। अब तो और भी आफत आई। अब किसी के पास जाने-आने या बातचीत करने

के लायक भी न रहे, तब तो सफल मनोरथ के होने की आशा और भी दूर हुई।

परंतु इस समय एक सावरेन तो था, जिसकी उसे बहुत ही जरूरत थी। यही सोचते हुए अपने हाथ में लिये चला जाता था, जैसे कोई सिक्के को पहचानता हो। फिर हथेली पर रख लालटेन के खंभे के पास खड़ा होकर देखने लगा और कहने लगा "क्या अच्छा होता, यदि मैं इसे इस दिन की यादगार के तौर पर रख छोड़ता।"

फिर सोचा कि तीन शिलिंग इस वक्त सपर में लगेंगे, बाकी बचेंगे 'सेविंटीन' (यानी सत्रह)........यह मन में 'बूर के लड्डू' खा रहे थे कि एक लड़का फटे चिथड़े पहने हुए चुपके से इनके पास खिसकता-खिसकता आया और कहने लगा एक पैसा दो। इसी समय उसने बाबू के हाथ पर सिक्के को ताड़ लिया। बस, फिर क्या था, झपट्टा मारा और भाग गया। बाबू साहब चीखने लगे, पर देखा कि लड़का खूब तेजी से दौड़ा चला जाता है और सावरेन को उसने हिफाजत से रख लिया है। यह उसके पीछे 'चोर, चोर, पकड़ो' कहकर दौड़ने लगे, बस मोड़ पर आकर लड़का नजरों से गायब हो गया और यह थके-माँदे पीछे-पीछे जाते थे। लड़के को बिलकुल गायब पाकर यह एक पुलिसमैन को खड़े देख कहने लगे "क्या तुमने कोई लड़के को अभी इधर से भागते देखा है? उसने अभी हाल मेरा सावरेन चुरा लिया है।"

पुलिस—"(इनके कंधे पर हाथ धर कर क्योंकि इस समय यह बिलकुल गिरने को ही थे) मैंने अभी-अभी दो-तीन लड़कों को शायद चार को दौड़ते देखा है, कहो किसने चार

में से तुम्हारा सावरेन चुराया है, और सावरेन तुम्हें मिला कहाँ से ?"

बाबू—"मैं आपसे सच कहता हूँ कि मैं अपने हाथ पर रखे उसे देख रहा था कि वह छीनकर भाग गया।"

पुलिस—"वाह ! क्या खूब साहब ! एक बड़ी भारी प्रदर्शिनी के लायक चीज थी जो आप उसे इस तरह देख रहे थे ! या कोई खिलौना था, तुमने उसे जेब में क्यों नहीं रक्खा ?"

बाबू—"अफसोस ! क्या करूँ ! बस, इस दुनिया में मेरे पास सिवाय उसके और कुछ न था।"

पुलिस—"अच्छा, अगर तुम उसे पकड़ पाओ, तो हमारे पास लाना, हम थाने में भेज देंगे, बस इतना ही हम तुम्हारे लिये कर सकते हैं।"

बाबू साहब ने और ज्यादा बातचीत करना व्यर्थ समझा और थोड़ी दूर जाकर दोनों हाथ गालों पर रखकर बच्चों की तरह रोने लगे।

* * * *

इसी अवस्था में बैठे कुछ देर हुई, पेड़ों की सुहावनी, मधुर, ठंडी-ठंडी हवा लगने से चित्त को कुछ शांति हुई। कई प्रकार की बातों से हृदय उमड़ आया। इसी समय किसी स्त्री ने आकर इनके कंधे पर हाथ रक्खा, जैसे कोई स्वप्न देखता हो, उसी प्रकार यह एकाएक ऐसा व्यवहार देख स्वप्न-निद्रा में अपनी माता समझे, परंतु ! हे भाग्य ! भला ऐसे कर्म कहाँ जो माता के दर्शन होते, और फिर इस लंडनपुरी में ! जैसे-तैसे इन्होंने निहारा, तो उसने बड़े मधुर भाव से इनकी सुश्रूषा की और फिर बहुत मलीन अवस्था देखकर भोजन दिया। चलते

समय पूछने पर कि ऐसे अहसान करनेवाले का मकान कहाँ है? उत्तर मिला कि वह एक "गृहहीन भिखारिन" है।

अब तो इनके निद्रा-कपाट खट से खुल गए, ज्ञात हुआ कि एक वही ऐसी हीन अवस्था को नहीं पहुँचा है, वरन् वहाँ बहुत से निवासी इसी प्रकार से रहते हैं, और यह जानकर भी बहुत कुछ विस्मय हुआ कि दीन-दरिद्रों को इतनी दया है, मगर जो कुबेरसम धन-संपत्ति के मालिक हैं, उनके महल के दर्वाजे के दर्शन भी दुर्लभ हैं !!

——

फूल में काँटा

दूसरा हिस्सा

पहिला परिच्छेद

Whoever loved that loved not at first sight?

इश्क ! सुनते थे जिसे हम, वह यही है शायद ;
खुद बखुद दिल में है एक शख्स समाया जाता ।

रमेश—"रुगन, भाई आज तुम्हारा चेहरा बहुत उदास जान पड़ता है, क्या बात है ?"

रुगन—"अजी कुछ भी नहीं, मैं जरा देर न हँसा तो आप फौरन् कहने लगते हैं कि आज उदास क्यों हो, भला उदासी काहे की होने लगी ।"

रमेश—"यह कभी नहीं हो सकता, कुछ बात तो जरूर है, नहीं भला आज 'हाकी टूर्नामेंट' के दिन तुम वह हँसी-मजाक की सब बातें भूल जाते । क्यों रुगन, जब तुम एक बार यह कह हीं चुके हो कि मैं तुम्हें बड़े भाई के तुल्य मानता हूँ, तो यह छुपाव कैसा ? क्या दुःख की बात मित्र को नहीं बताई जाती ? या मैं उन मित्रों में गिने जाने लायक नहीं हूँ ।"

रुगन—"रमेश ! रमेश ! बस, अब ज्यादे मत कहो। मैं तो कह चुका कि तुम भाई से भी ज्यादा हो, फिर इतना उछाड़-पछाड़ क्यों ? आज दो एक दिन से चित्त में ऐसी खिन्नता सी रहती है कि मेरा चित्त किसी काम के करने में नहीं लगता। मैंने इसीलिये आपसे भी नहीं कहा कि अपना रोना रोकर क्यों तुम्हारे दिल को भी उदासीन करूँ, बस यही सबब है। जिस तरह समझ में आवे समझ लीजिए।"

रमेश—"अच्छा कैसे भी सही, कहो मैंने भी कैसे ताड़ा, अब सारा हाल साफ-साफ कहो कि क्यों उदास हो, चलो अपने कमरे में चलें।"

रुगन—"क्या कहें रमेश, कुछ कहते नहीं बनता, क्यों नाहक सुनकर अपना जी भी बिगाड़ोगे।"

रमेश—"हाँ, हाँ, ठीक है ! 'कहे से कुम्हार गधे पर थोड़े ही चढ़ता है' छिः, छिः, रुगन तुम्हें यह कहते भी शर्म नहीं आती ? तुम्हारा जी और हमारा जी क्या दो हैं, अब कहते हो कि कुछ और भी नखरे बाकी हैं।"

रुगन—"अच्छा भाई साहब, सुनिए—जब आप जिद्द ही करते हैं तो सुनिए। मगर मैं फिर भी कहे देता हूँ कि सिवाय दुःख के और कुछ न होगा। पर हाँ ! मेरा दिल भी हलका हो जायगा और शायद आप कोई ऐसी बात ही बतला दें जिससे कुछ सहारा हो जाय।"

रमेश—"खैर अब लेक्चर तो हो चुका, मतलब पर आइए।"

रुगन—"मैंने शायद आपसे पहले भी कहा था कि अपनी शादी से मुझे कुछ भी खुशी नहीं।"

रमेश—"खैर ! यह बात तो कोई नई नहीं तुमने पहले भी मुझसे यह बात कही थी कि तुम्हारी स्त्री तुम्हारी तबियत के मुवाफ़िक नहीं। फिर क्या कोई नई बात हुई ?"

रुगन—"अजी बस, नई बात क्या, बात तो वही पुरानी है, परन्तु क्या आप सोचते हैं कि मुझे किसी पल चैन है। आपसे मैं सारा हाल साफ-साफ कहता हूँ—सुनिए, सारी रामकहानी सुनिए—

जिस समय मेरा ब्याह हुआ, मैं निपट अजान था। मेरी माता उस समय जीती थीं। शादी बड़ी खुशी के साथ हुई, मुझे कुछ मालूम भी न होता था। जैसा कि बच्चों को शादी होने का चाव होता है और खुशी से इधर-उधर फूले फिरते हैं, मेरा भी वही हाल था। बहू भी घर पर आने-जाने लगी। उसकी अवस्था यदि मुझसे ज्यादा नहीं तो किसी प्रकार कम भी नहीं थी। माता-पिता व घरबार के लोगों को जिस प्रकार खुशी होना चाहिए वैसी थी, और तब क्या मैं भी खुशी से खाली था ?

स्कूल में पढ़ता ही था, किसी बात की चिंता न थी, दिन भर बाहर स्कुल में पढ़ना और शाम को मित्रों के साथ टहलना और खेलना। रात को घर पर ताश खेलना और सो जाना, सुबह को उठना और पुनः वही काम ! एक बेचारी पड़ोसिन थी जो कि हमको अपने बालकों के समान मानती थी। बेचारी सदा हम लोगों को देख-देखकर प्रसन्न होती थी। माँ-बाप भी बहुत खुश थे, क्योंकि बहू घर के सब कामों में मदद देती थी, (अभी तक हम लोगों में वही कहावत चली आती है)—'बड़ी बहू, बड़े भाग' यानी सब तरफ खुशी-ही-

खुशी थी। एक वर्ष के बाद माँ का देहांत हुआ। सारा बोझ हम ही लोगों पर पड़ा। अब तो बड़ी कठिनाई हुई। हमारी अवस्था भी बढ़ी, परंतु प्रीति!—प्राप्ति का नाम-निशान भी न था। न मालूम क्यों, मुझे स्त्री की सूरत देखकर भी घृणा मालूम होती थी। यह कहना तो बिलकुल फजूल होगा कि मेरी स्त्री सूरत-शक्ल में बिलकुल 'कउआ परी' थी ही, मगर बातों में भी मैंने वैसा ही पाया। बस, तो आप समझिए कि प्रीति कैसी! अब तो पास रहना भी बुरा मालूम होने लगा। रिश्तेदारों में चर्चा फैलने लगी। एक दोस्त ने मुझसे भी ऐसा ही कहा। मैंने उसे कुछ भीतरी हाल न बतलाकर दिखावे को वैसे ही आना-जाना शुरू किया। ज्यों-ज्यों उम्र बढ़ती गई त्यों-त्यों बातचीत कम हुई, क्योंकि दोनों ही के हृदय में ग्लानि थी। उसके नजरों से भी मालूम हुआ कि वह अपने आपको बहुत समझती है और घमंड भी बहुत है। फिर क्या था, आग में घी का पड़ना था, बराबर ऐंचातानी रही, यानी यह समझिए कि एक वर्ष तो बिलकुल बातचीत ही बंद थी। अब आप ही कहिए भला यह जिंदगी किस प्रकार की है। किताबों में देखा होगा कि जिस घर में स्त्री सुखी नहीं उस घर का भगवान् ही मालिक, ऐसे खयालों ने बहुत ही तंग किया, सोचा कि क्या किया जावे। बहुत पश्चात्ताप के बाद, बस अब दिल में यही है कि ऐसे रहने से तो मरना ही भला—

फलक ने तो इतना हँसाया न था;
कि जिसके एवज यों रुलाने लगा।"

रमेश—"बस यही बात है, और मरना भी ठीक है, तो मरो न, तुमने तो सब पढ़ा-लिखा खाक में मिला दिया, मरने

चले ! अरे, यही कोशिश क्यों न करो कि जिससे यह सब झगड़े निपट जायँ और तुम सुखी रहो !"

रुगन—"इससे आपको क्या मतलब, क्या प्रीति भी ऐसी चीज है कि जबरदस्ती हो सकती है ?"

रमेश—"नहीं ! यह तो मैं हरगिज नहीं कह सकता, मगर हाँ, यदि इसी प्रकार रहे, तो जीना मरने के बराबर है।"

"ऐसे दुनियाँ न कभी रंज से खाली देखा ;
जैसे गुलशन में कभी गुल से न हैं खार जुदा।"

यदि तुम प्रीति नहीं कर सकते, तो क्या दिखावे को भी मीठी-मीठी बातें नहीं बना सकते, आज ही से प्रतिज्ञा करो कि हम यदि कोई बात कहेंगे तो जरा हँसकर और जिस समय वहाँ होंगे यह जाहिर नहीं होने देंगे कि घृणा से देख रहे हैं। बस, तुम इतना करो और देखो कि वह भी उसी प्रकार करने का यत्न करेगी। होते-होते तुम्हारा दुःख इस प्रकार सुख से बदल सकता है। वह कुछ पढ़ी भी तो है ?

रुगन—"पत्थर पढ़ी है ! यों ही हरूफ पहचानना जानती है, सो भी ऐसी ही किताबें पढ़ती है जिससे और भी घृणा उपजे, देखो इसी समय 'अलाबख्श का बारहमासा' अलापा जा रहा है।"

रमेश—"देखो, ऐसे काम नहीं चलता, यदि तुम डाँट से काम लेना चाहो, तो यह बिलकुल ना-समझी है, क्योंकि तुम यह तो जानते ही हो कि औरतों में समझ ही कितनी होती है। बस जरा तुम बुरी तरह से पेश आए कि वे बिलकुल ही आपे से बाहर हो जाती हैं। इसलिये ऐसा करो कि जिस समय तुम वहाँ जाओ कोई एक 'स्त्री-शिक्षा' की पुस्तक

अपने साथ लेते जाओ और बड़े मीठे भाव से एकाध बात सुनाकर उसका चित्त अपनी ओर आकर्षित करो। बस, ऐसी-ऐसी किताबें पढ़ते-पढ़ते कुछ समझ भी आ जायगी और फिर देखो तुम्हारे दिन दुःख के एवज सुख में बदल जाते हैं कि नहीं। एक बात मैंने और देखी है, भागलपुर में तुम्हारा कोई मित्र है क्या ?"

रुगन—"हैं ! क्या कहा, भागलपुर में, तुमसे किसने कहा ?"

रमेश—"किसी ने भी नहीं, उस ड्रामावाली रात को जो तुमने मेरा कोट पहना था उसमें एक चिट्ठी मैंने देखी थी। देखो रुगन तुम्हें कोई बात मुझसे छिपानी न थी, खैर अब साफ-साफ कहो कि क्या बात है। मैं जहाँ तक जान सका मालूम हुआ कि वह एक स्त्री के हाथ की लिखी हुई है क्यों, सोचते क्या हो, कहो-कहो।"

रुगन—"भाई ! आज तो तुम मुझे भेद-रहित ही किए देते हो, जरा सोचो तो सही ! तुमने आज जितनी बातें पूछी हैं वह सब मेरा भेद है या कुछ और ?"

रमेश—"अहा ! ठीक है, अभी आप मुझे ऐसा ही समझे हुए हैं, भला क्या मैं विश्वासघात कर सकता हूँ, क्या तुम मुझे ऐसा नीच समझे हुए हो !"

रुगन—"नहीं, ऐसा तो आपका खयाल करना ठीक नहीं ! मगर आप यह भी तो जानते हैं कि दीवारों के भी कान होते हैं।"

रमेश—"खैर, इसका डर मत करो। कोई क्यों किसी की बातें सुनने को खड़ा होगा जिससे उसे कुछ प्रयोजन नहीं !"

रुगन--"देखो, रमेश ! आजकल सब बातें ऐसी ही हो रही हैं कि जिनसे चित्त व्याकुल है। एक तो भाई साहब की खबर लगी है कि विलायत पहुँचे हैं, और वहाँ दुख में हैं। दूसरे भाभी साहिबा का तो कुछ पूछिएगा ही नहीं, जिस रोज से वह गायब हैं उस रोज ही से बेचारी की बुरी दशा है। खाना-पीना सब छोड़ दिया है। केवल एक ढाँचा-ही-ढाँचा बाकी है, बेचारी अपने जीवन के दिन बिता रही है। रात-दिन चिंता की चिता में भस्म होती रहती है। भाई साहब के देखने के लिये बेचैन है, तिस पर मेरी स्त्री तो और भी उसे दुःख दे रही है, रातदिन ताने देती है कि बड़ी पतिव्रता बनी है, लेकिन वह बेचारी ऐसी दयालु है कि उल्टे उससे प्रेम रखती है, और तानों का खयाल न कर उल्टे समझाया करती है। न जाने भाई साहब को क्या सूझी कि ऐसे रत्न को छोड़-कर इधर-उधर भटकते फिरते हैं। लालाजी भी दुख के मारे अधमरे हो रहे हैं ? उधर शहर में ऐसी गड़बड़ हो रही है कि चारों ओर हल्ला हो रहा है।"

रमेश--"हाँ, हाँ, वाहिद अहमद के बारे में न ?"

रुगन--"जी हाँ, उसमें तो बड़े-बड़े गुल खिले हैं, भाई साहब का नाम भी उसमें शामिल था, बड़ी मुश्किल से धब्बा लगने से बचा है।"

रमेश--"हाँ, यह तो सब आजकल के अखबारों में छप ही जावेगा। अब उस चिट्ठी का हाल कहो, उसे उड़ाए क्यों जाते हो।"

रुगन--"भाई साहब ! वह सच्चे प्रेम के सिवा और कुछ भी नहीं है।"

इश्क के मक्तब में मेरी आज बिस्मिल्लाह है ;
मुँह से कहता हूँ अलिफ दिल से निकलती आह है।

रमेश—"प्रेम ! क्या आप भी प्रेम जानते हैं ? प्रेम का नाम ही सुन लिया होगा।"

"रुगन—"अजी नहीं साहब, प्रेम और फिर प्रेम, बस अब तो वही हाल है।"

लगा है रोग अब तो इश्क का इस जाने मुजतर को ;
जो होगी जिंदगी बच जायँगे बिलफेल मरते हैं।

रमेश—"अच्छा तुम भागलपुर कभी गए थे कि यों ही प्रेम हो गया ? मेरे खयाल से तुम सिवाय एक दफे के कभी नहीं गये।"

रुगन—"क्यों साहब, तो प्रेम वहीं होता है जहाँ कि बरसों रहा जाय। अगर यही है तो आप, 'प्रेम क्या चीज है' यह जानते भी नहीं। आप भी तो मेरे साथ वहाँ गए थे।"

रमेश—"अच्छा-अच्छा, तुम्हारा नगेन्द्र के ब्याह से मतलब है।"

रुगन—"जी हाँ, जनाब ! उसी से मतलब है।"

रमेश—"मगर मैंने तो वहाँ कोई ऐसी बात नहीं देखी जिससे आपके प्रेम का ढकोसला जमते देखा हो।"

रुगन—"मैं तो पहले ही जानता था कि तुम मजाक उड़ाओगे और इसी से तो मैंने कुछ कहा सुना नहीं।"

रमेश—"अच्छा भाई, माफ करो, अब मजाक नहीं करेंगे। कहिए, तब फिर क्या हुआ।"

रुगन—"जिस समय नगेन्द्र की पहरावनी हो रही थी, मैंने देखा कि एक लड़की टकटकी लगाए मेरी ओर देख रही है।"

रमेश—"हाँ, उसको तो मैंने भी देखा था। वह तो नगेन्द्र की साली 'मोहिनी' थी?"

रुगन—"जी हाँ, वही मोहिनी, बेशक मोहिनी ही थी!"

रमेश—"तो आप क्या टकटकी लगाए देखने से जान लिया कि उसका तुम पर प्रेम है।"

रुगन—"जी हाँ, वह तो उसकी 'श्रीगणेशाय नमः' थी, क्या तुमने यह नहीं देखा कि जिस समय सारी स्त्रियाँ गाना गाने में मग्न थीं, वह बेचारी क्यों इस प्रकार गुम-सुम अलहदा खड़ी थी।"

रमेश—"अच्छा जी, अब तो मुझे वह पंखेवाली बात भी याद आई।"

रुगन—"जी हाँ! देखिए, उस वक्त भी आपने देखा कि वह बराबर अकेले कमरे में जिसके बाहर हम लोग बैठे थे आकर खड़ी हुई और जिस समय कि मुझे गर्मी मालूम हुई और मैं रूमाल से हवा करने लगा, तो किवाड़ की संद में से पंखा किसने फेंका था और जब वह आपने ले लिया और मैंने दूसरा माँगा, तो जवाब क्या मिला था।"

रमेश—"हाँ, बेशक, वह तो एक बेढब मजाक था और अब मुझे और भी याद आई कि तुमने वहाँ जेवनार में खाना भी नहीं खाया था, सिर्फ वहाँ जाकर बैठे रहे! "तबीयत ठीक नहीं" का बहाना करते रहे। सिवाय छत की तरफ देखने के दूसरा काम न था, मैं तो समझता था कि यह कुछ भी बातें नहीं हैं मगर अब मालूम हुआ कि यह सब बातें आपके दिल पर नक्श हैं।

रुगन—"रमेश, क्या ये बातें भूल जाऊँगा, हाय! जिस

समय इन बातों की याद आती है, और वह चेहरा मेरे सामने फोटो की तरह दिल में खिंचता है तो बस दीन-दुनिया किसी की भी सुध नहीं रहती। इसी से कहते हैं कि प्रेम एक ही बार के देखने से होता है—जब आँखें चार होती हैं, मुहब्बत आ ही जाती है।"

रमेश—"अच्छा उसने भी तुम्हें याद रक्खा, इसका सुबूत?"

रुगन—"इसका सुबूत वही चिट्ठी।"

'तासीर इश्क होती है दोनों तरफ जरूर;
मुमकिन नहीं कि दर्द यहाँ हो वहाँ न हो।'

रमेश—"ठीक है, रुगन ठीक है, बेशक तुम लोगों का सच्चा प्रेम है मगर उसका तो ब्याह होनेवाला था।"

रुगन—"होनेवाला क्या था हो भी गया, वह चिट्ठी बुलावे ही की थी।"

रमेश—"तब फिर प्रेम का नतीजा?"

रुगन—"अच्छा समझे! ब्याह होने से क्या प्रेम न रहा या घट बढ़ गया? ऐसा ख्याल कभी न करना"—

'करेंगे उल्फत न हम कभी कम, इधर की दुनिया अगर उधर हो।'

प्रेम अचल है और वह विना किसी प्रयोजन के होता है, हाँ इतना जरूर है—

समाया है जब से तु नजरों में मेरी;
जिधर देखता हूँ उधर तू ही तू है।

रमेश—"ठीक है, क्यों न हो, मगर यह भी याद है—"

सोचकर चलना मुसाफिर यह ठगों का गाम है;
मिट गया कितनों का इस जा पर हमेशा नाम है।

रुगन—"जनाब, यह तो बन्दे की बात ही नहीं। यहाँ ऐसे कच्चे दिल के आदमी नहीं। यहाँ तो दिल में सब बातें हैं और सदा दिल से भला चाहनेवाले हैं—"

रमेश—"ठीक है! ऐसा ही समझदार मनुष्य को होना चाहिए। प्रेम का नाम लोगों ने बिगाड़ दिया है, और इसी लिए वह बुरा समझा जाता है, पर लोग नहीं जानते कि यह बुरा और भला दोनों हो सकता है। मनुष्य जिस प्रकार का हो वैसा ही उसका प्रेम होता है, जहर को हाथ पर रख दो जो खाएगा वही मरेगा, बिना खाए देखें कैसे मरता है। मगर एक बात है, तुम लोगों में शादी का बहुत बुरा दस्तूर है! नाई, ब्राह्मण ने जहाँ कर दिया बस, वही सही। माँ बाप तो बस रुपया देखते हैं और कुछ नहीं। लड़के और लड़की दोनों को कुएँ में पटक देते हैं, यह नहीं देखते कि यह जिंदगी भर का साथ है, इसे जरा सोच-समझकर करें, तुम भी उस्ताद इसी बात के कायल हो। अभी क्या कह रहे थे।"

रुगन—"हाँ कुछ-कुछ मिल सकता है, मगर सब नहीं। माँ-बाप का शादी करना मैं तो पसंद करता हूँ, क्योंकि जवान आदमी बिलकुल उन्मत्त होते हैं और वे अपना भला-बुरा उतना नहीं सोच सकते, जितना कि अनुभवी माँ-बाप। और गलती तो इन्सान से हुआ ही करती है, इसका क्या। मेरी राय में तो यह बात अच्छी है, मैं अँगरेजी शादी करने का ढंग बिलकुल पसंद नहीं करता। आप लोग तो आजकल खूब रिफार्मर बनते जाते हैं, और सब बातें अँगरेजी ढंग से करना चाहते हैं। मैंने कई एक अँगरेजी नॉविलों में देखा है कि स्वतंत्र बनकर शादी करने से किस प्रकार की हानि होती है। स्त्री को

कभी स्वतंत्र न होने दे, मगर हाँ ! माँ-बाप का भी यही कर्तव्य है कि स्त्री-पुरुष को देखकर भली भाँति शादी करें। आखिर होता वही है—

"जो मंजूर खुदा होता है।"

रमेश—"हाँ भाई ! इस बात में तो मैं बेशक हारा, मगर आप लोगों में भी शादी के दस्तूर बड़े बेढब हैं, क्या यह भी अच्छे हैं ? जैसे—(१) दहेज, (२) आतिशबाजी, (३) रंडी का नाच, (४) ब्याह में खुराफात गालियाँ बकना। क्या इन्हीं कुरीतियों से शादी की शोभा है ?"

रुगन—"हाँ, यह बातें तो बेशक बहुत ही बुरी हैं। आजकल बहुत कोशिश हो रही है कि ये कुरीतियाँ जाति से बन्द कर दी जावें, और परमेश्वर करेगा तो जरूर कोई दिन देख भी लेंगे। चलो अब तो बहुत देर हुई, देखें मैच का क्या फल (Result) रहा। आज की बातों से मेरा सब भ्रम दूर हुआ और दिल बहुत हल्का हो गया। जितनी बातें आज हममें तुममें हुई हैं सब काम उसी रीति से किये जावेंगे, और अलावह इसके मैं इस बात का भी वादा करता हूँ कि कल से जिस समय फुरसत मिलेगी, कोठी का काम भी सँभालूँगा। आजकल भोंदू, मौजी इत्यादि किसी का पता नहीं है। बेचारे मुनीमजी ने बड़ा सहारा दिया, नहीं तो सब कोठियों का मटियामेट हो गया होता। कल से मैं भी कुछ-कुछ काम सँभालूँगा। चलो अब फील्ड को जल्दी चलें।"

पाठकगण यह कहेंगे कि दो अपरिचित मनुष्यों की बातचीत में घंटा बिता दिया, और यह बतलाया भी नहीं कि यह हैं कौन ? हमारे चतुर पाठक तो बीच-बीच के इशारों से समझ

ही गए होंगे कि यह किस बारे में और किन-किन में बातचीत हो रही है, परन्तु फिर भी जो न समझे हों उनके संतोष के लिए कह देते हैं कि यह बाबू रुगनचन्द और कोई नहीं लाला घासीराम के छोटे पुत्र और बाबू फूलचंद के छोटे भाई हैं और रमेश बाबू इस सुपुत्र रुगनचन्द के एक बहुत प्रिय और विश्वासी मित्र हैं। दोनों कालेज में पढ़ते हैं, ग्रेजुएट होने में बहुत कम समय है। इन दोनों की बातचीत से मालूम हुआ होगा कि परमेश्वर की अपार महिमा है। जो पढ़े-लिखे, खूबसूरत और बुद्धिमान् मनुष्य होते हैं उन्हें कुरूपा और निर्बुद्धि स्त्रियाँ मिलती हैं, और जो कुपढ़, मूर्ख और बदचलन होते हैं उन्हें सरला, सुशीला, विदुषी, सर्वांग सुन्दरी नारियाँ मिलती हैं। पाठक ! यहाँ बाबू फूलचंद की चंडाल चौकड़ी और बाबू रुगनचन्द के मित्र से भी मिलान कर सकते हैं, क्यों न हो ! 'जैसी रूह वैसे ही फरिश्ते' वाली मसल ठीक है। यही हमारे बाबू रुगनचन्द अपने वृद्ध पिता के सहारे और कुल का नाम चलानेवाले होनहार सुपुत्र हैं।

पाठकगण, उस चिट्ठी की बड़ी चिन्ता में होंगे कि उसमें क्या लिखा था और कहाँ से आई है, इसीलिये हमें उसकी नकल यहाँ देना पड़ा, आप इसे पढ़ें और अपने दिल की बेचैनी दूर करें—

भागलपुर

ता० ....

मित्रवर !

जिस दिन से आपका बिछुरन हुआ सुबह-शाम, आठों याम आप ही की सुध रहती है। न जाने विधि क्यों वाम हुए कि

आप इस अभागिन की इस तरह सुध भूल गए। यह चकोररूपी नयन आपके चन्द्ररूपी मुखारविन्द की राह देखते-देखते थक गए। हाय! न मालूम इस शुद्ध अंतःकरण की अग्नि शीतल जलरूपी निष्कलंक मोह से कब बुझेगी। प्रियवर! वह बिदा के समय गले में पुष्पमाल डालने की बात को बिलकुल बिसरा दिया। मैं न जानती थी कि यह मनरूपी मक्खी, मोह-रूपी मधु को चूसते समय इस बिछुरनरूपी जाल में फँस जायगी। आपके आनन्दकन्द, पूर्णचन्द मुखारविन्द की बार-बार याद आती है। न जाने आप क्यों इतने कठोर हुए! अब इस दासी का विवाह ज्येष्ठ सुदी २ को निश्चय हुआ है। आशा है कि आप इस सुअवसर पर पधारेंगे और इन प्यासे नेत्रों को अपने सुदर्शन से तृप्त करेंगे, शेष शुभ।

आपकी दर्शनाभिलाषिणी—
मोहिनी।

Sweet, Good night!

This bud of love, by summer's ripening breath,
May prove a beauteous flower, when next we meet.

दूसरा परिच्छेद

I know the action was extremely wrong;
I own it, I deplore it, I condemn it.

फूलचंद विचार में मग्न थे कि इनकी तरफ एक कालदूत (पुलिसमेन) आता हुआ दृष्टि पड़ा। उस स्त्री ने

इन्हें झटपट भाग जाने को कहा और वह भी एक तरफ झट गायब हो गई। यह भी बेचारे जल्दी-जल्दी दूसरी तरफ को चल पड़े। पर जाएँ कहाँ, रात तो कहीं न कहीं व्यतीत करनी ही चाहिए। सड़क पर खड़े रहना तो जुल्म है, फिर वहाँ सोने तो कौन देगा, यही विचारते चले जाते थे कि ठहरने के लिए कोई बाड़ा वगैरह जगह मिल जाय कि एक जगह जङ्गले के सहारे एक अनाथ लड़के के रोने की आवाज सुनाई दी। इस समय दरिद्रता ने इनके हृदय को असीम दया का खजाना बना दिया था और दुखिया के दुःख को पहचानना भी सिखा दिया था। यह उसी तरफ मुड़े और पास जाकर कहने लगे—

"क्यों, भई बच्चे, कहो—रोते क्यों हो?"

बच्चे ने हिचकियाँ लेते हुए जवाब दिया—"कुछ नहीं।"

इन्होंने कहा—"नहीं! नहीं, तब भी बतलाओ इतना रोते क्यों हो?"

बच्चे ने जवाब दिया—"कुछ नहीं! मैं गृहहीन हूँ।"

"हैं! क्या तुम्हारे माँ-बाप नहीं हैं?"

"हाँ हैं तो, पर बाप ने मुझे मारकर निकाल दिया है।"

"और तुम्हारी माँ?"

बच्चा—"न मालूम वह भी कहाँ है। उसको भी उन्होंने मारकर बाहर कर दिया है।"

बाबू—"तो बात क्या थी?"

बच्चा—"कुछ नहीं एक सावरेन के बारे में वे लोग झगड़ते थे..........."

बस, बाबू साहब उसे पकड़कर रोशनी की तरफ ले गए

और कहा—"अरे! कम्बख्त छोकरे तू ही ने मेरा सावरेन चुराया था।"

बच्चा यह देखकर बहुत ही डर गया था। रोते हुए बोला, "मैं क्या करूँ बिलकुल बेबस था।"

बाबू—"बेबस था! अबे तू यह नहीं समझता कि तेरी उस चोरी की वजह से मेरे पास एक कौड़ी भी नहीं बची और मैं यह भी नहीं सोच सकता कि रात को कहाँ पर विश्राम करूँ।"

बच्चा—"कृपा कर मुझे पकड़वाइए न! मैं आइंदा कभी ऐसा न करूँगा।"

हिचकियाँ लेते हुए उस लड़के ने इनसे कहा।

बाबू—"अच्छा, तूने उस (सावरेन) का क्या किया बतला?"

बच्चा—"सुनिए साहब, सुनिए—मैं उसको घर पर ले गया और अपनी माँ को दे दिया, बस यही लड़ाई का कारण हुआ। पिता ने मेरी माँ को खूब ठोका और मुझे मारकर निकाल दिया और कहा कि यदि फिर आया तो जान से मार डालूँगा, क्योंकि मैंने माँ की हिमायत की थी।"

बाबू—"तो मुझे उसके वापिस मिलने की बिलकुल आशा त्याग देना चाहिए, मैं तुम्हें क्षमा करने का वादा करता हूँ मगर यह बतला दो कि मैं किस तरह उसे पा सकता हूँ।"

बच्चा—"क्या तुम पिता से उसे वापिस लाना चाहते हो? ऐसा तो कभी हो ही नहीं सकता, उसके पास गई हुई चीज फिर वापिस नहीं मिल सकती।"

बस, यह पक्का विश्वास करके कि गई चीज अब नहीं मिल सकती, वह निराश होकर एक ओर चल पड़े। रास्ते में

और एक भला मनुष्य इन्हें मिला। उसे देखकर इन्होंने पूछा कि मुझे उचित राय दीजिए और अपना अभिप्राय प्रकट किया। उसने बड़े ध्यान से सुना, परंतु उत्तर में एक निष्फल लेक्चर झाड़ने लगा। कहने लगा, गरीबी की अवस्था में मनुष्य को चाहिए कि दृढ़ बना रहे और किसी प्रकार................

फूलचंद ने बात काटकर कहा, मुझे यह बतलाइए कि मैं आज की रात कहाँ व्यतीत करूँ। इस पर उसने इन्हें 'चैरिटी ओरगेनीजेशन सोसाइटी' को अपना प्रार्थनापत्र देने को कहा, और यह भी कहा कि वह दस बजे सुबह से चार बजे शाम तक खुली रहती है। लाचार होकर इन्होंने किसी प्रकार अपना मतलब पूरा होते न देख उनसे पीछा छुड़ाया और थोड़ी दूर आगे चलकर फिर दूसरे मनुष्य से, जो कंधे पर औजार धरे अपने घर जा रहा था, अपना रोना रोया।

इस मनुष्य ने इन्हें 'वर्क हाउस' में जाने को कहा, जहाँ हर कोई विना रोक-टोक जा सकता है। उसने कृपा कर इन्हें रास्ता भी बतला दिया, और फिर गुडनाइट कर घर का रास्ता लिया। यह भी जल्दी-जल्दी कदम बढ़ाते हुए 'वर्क हाउस' की सड़क का पार करने लगे। चलते-चलते बड़ी मुश्किल से बतलाए हुए ठिकाने पर आए। अब भयावनी दीवारों और उनके परदेदार खिड़कियों की ओर देखने ही से इनके हृदय में संशय उत्पन्न हुआ, परंतु इन्होंने इन सबको कड़वी दवाई की भाँति सहन कर लिया और तब वहाँ पर टहलते हुए पुलिसमैन से अपनी इच्छा प्रकट की। उसने कहा, ठहरो, हम तुम्हारे लिये इजाजत लाते हैं। पुलिसमैन ने जाकर दर्वाजा खटखटाया जिसको एक गुर्राते हुए पोर्टर ने खोल दिया।

पोर्टर—"क्या किसी और को लाए ?"

पु०—"हाँ, हाँ, सो क्या हुआ।"

पोर्टर—"हुआ क्या, हमारे यहाँ अब बिलकुल जगह नहीं।"

पु०—"हाँ, मुझे सब मालूम है, आदमी तो मेरे सामने ही गए हैं न!"

पोर्टर—"तुमने दस बजे के बाद ही देखे हैं न, जब अपनी ड्यूटी पर आए हो; पर यह भी खबर है कि उसके पहले कितने भरे जा चुके हैं, मगर खैर तुम्हारी खातिर है, भेजो जल्दी कौन है, (बाबू की तरफ) आ, आ, जल्दी नहीं तो फाटक बंद कर दूँगा। बाबू साहब झट अंदर घुस गए, फाटक जोर से फिर बंद किया गया। इसके बाद वह इन्हें एक छोटे से दफ्तर में ले गया और एक किताब खोल गरजती हुई आवाज से पूछा—"तुम्हारा नाम।"

बाबू साहब कुछ देर विस्मय में रहे कि अपना नाम क्या बतलावें। यदि सच्चा नाम बतला दिया, तो बाद को सारे यार-दोस्त खाका उड़ाएँगे, और जो झूठा बतलाया, तो अपने सबूत का अपने हाथ से मार्ग ही बंद कर दिया।

इसी सोच में कुछ समय लग गया कि उसने फिर गुस्से में जोर से चिल्लाकर पूछा—"तुम्हारा नाम" और गुस्से से झपटा और किताब मेज पर दे मारी। इस पर इन्होंने कहना शुरू किया, "जरा शराफत से पेश आइए। मैं सीधी तरह कहने से जो कहो करने को तैयार हूँ मगर तुम्हारी बदतमीजी सहन कदापि नहीं होगी।"

उसने घृणा की हँसी हँसी और कहा—"लो आज हमारे

यहाँ 'प्रिंस ऑफ वेल्स' या 'आर्च विशप ऑफ कैंटरबरी' तशरीफ लाए हैं। जरा अदब से मेहमानदारी करनी चाहिए" यह कहकर अपनी कुरसी पर बैठ गया। सच है, तकदीर जो न कराए थोड़ा ही है। जिसने कभी किसी की एक बात नहीं सुनी उसे आज ऐसे-ऐसे मनुष्यों की गालियाँ सहन करना पड़ती हैं। इन वचनों ने हमारे नायक के हृदय पर किस प्रकार का असर पैदा किया, यह पाठकगण उसकी पहिली व्यवस्था देखकर स्वयं ही विचार सकते हैं। इनकी सारी देह गुस्से से थर-थर काँपने लगी और शर्म ने मुँह बंद कर दिया। बहुत कठिनता से वह अपने नाम के अक्षरों का उच्चारण लड़-खड़ाती हुई जबान से कर सका और कहा—"फू-ल-चं-द।"

पोर्टर—"क्या फूल-फूल-वेल नेवर माइंड, ऐसा नाम बहुत कम सुनने में आया है और क्या 'चेंट'? 'वेल' 'फूल' 'विलडू'। यह कहकर उसने अपनी किताब पर "fool" (जिसका अर्थ है मूर्ख) लिख दिया और शक से कई मर्तबा देखता हुआ आगे बढ़ा। फिर कुछ रुककर लौटा और कहा "अच्छा, अपने कपड़े उतार दो।"

अब तो इनके विस्मय का ठिकाना न रहा, रहे सहे-कपड़े भी उतरवा लिए जावेंगे, यह क्यों? खैर इन्होंने उस आदमी से पूछा—"तब फिर मैं कहाँ जाऊँ और क्या करूँ" इस पर उसने एक छोटा-सा कमरा बतलाया, जिसमें कई छोटे-छोटे आले ताक से बने थे। "यह तुम्हारे वास्ते है जल्द कपड़े उतार डालो" कहता हुआ पोर्टर वहाँ से नौ दो ग्यारह हुआ।

कमरे के अंदर जाने पर बाबू साहब ने देखा कि एक मनुष्य बहुत ही मैले-कुचैले चिथड़ों को उतार रहा है। उसने

इन्हें देखते ही कहा—"अहा! तू आज यहाँ नया चंडूल फँसा है, क्यों न—"

फूल०—"हाँ, मैं अभी आया हूँ। क्या तुम बतला सकते हो, यह आदमी कपड़े उतारने को क्यों बोलता था?"

मजदूर—"यहाँ का यही दस्तूर है। काम करने में कपड़े मैले हो जाया करते हैं, इसलिये उतारकर रख देने पड़ते हैं।"

फूल०—"तो क्या, सब कपड़े उतार देना पड़ेंगे, शर्ट तो पहने रह सकूँगा।"

मजदूर—"नहीं, नहीं, ऐसा नहीं हो सकता, सब कपड़े उतारने पड़ेंगे।"

फूल०—"और जो मैं न उतारूँ तब?"

मजदूर—"बस फिर मालिक तुम्हें हुक्म उदूली के कुसूर में जिद्दी ठहराकर एक सप्ताह के लिये कैद करा देगा।"

फूल०—"अच्छा। यहाँ क्या कुछ काम भी करना पड़ेगा?"

मजदूर—"और नहीं तो—रोज ३०० पत्थरों को तोड़ कर गिट्टी करनी पड़ेगी, बस इसी में दिन भर लग जायगा।"

फूल०—"हैं, क्या गिट्टी तोड़ना होगी?"

मजदूर—"हाँ हाँ, यहाँ सिवा इसके और क्या काम है।"

फूल०—"तब तो फिर मैं यहाँ नहीं रहना चाहता! अभी वापिस जाता हूँ। जैसे होगा वैसे रात और ही कहीं काटूँगा।"

मजदूर—"यह तो हर्गिज नहीं हो सकता, यहाँ जो एक मर्तबा आ जाता है फिर वापिस नहीं जा सकता, मर्जी से आना और चले जाना, यह क्या हँसीखेल ही है?"

फूल०—"क्या! इससे क्या तुम्हारा यह मतलब है कि

जब मैं चाहूँ, यहाँ से नहीं जा सकता। मैं तो यहाँ पर रात भर विश्राम करने की नीयत से आया हूँ, न कि रोजाना गिट्टी तोड़कर जिंदगी काटने, सुबह तो मुझको जरूर ही यहाँ से जाना है।"

मजदूर—"यह तुम अपनी खुशी से नहीं कर सकते। हाँ एक तरकीब है, अगर उस पैंतरे से चलो, तो शायद निकल जा सको।"

फूल०—"कहो, वह क्या चाल है ?"

मजदूर—"वह यह है कि तुम चुपचाप "ब्रेक फास्ट" करो और अपनी कोठरी में जाकर पत्थर फोड़ने का बहाना करो। जब दस बजे डाक्टर साहब आवें तब बुरा-सा मुँह बना कर ऐसा ढंग बनाना, जिससे मालूम पड़े, तुम बीमार हो। बस, वह तुम्हें यहाँ से निकालने को कह देगा। सिवाय इसके और कोई तरकीब नहीं हो सकती।"

फूलचंद इन सब बातों को स्वप्न की भाँति निद्रा अवस्था में देख रहे थे, बात करने तक की ताकत न थी। सोचा कि ठीक है, अब तो सिवाय इस मनुष्य की राय पर चलने के और कुछ करना वृथा है। हर पल यही सोचता था कि रात को विश्राम के भरोसे आकर अच्छे जाल में फँसे।

रात भर परमेश्वर से प्रार्थना की कि किसी प्रकार इस फंदे से निकाल। इस प्रकार 'रात-जागन' कर सुबह ही जो कुछ खाना लाया गया खाकर चुपचाप अपनी कोठरी में पत्थर फोड़ने चला। वहाँ पर एक आदमी ने आकर इन्हें हथौड़ा दिया और एक लोहे का टोप मुँह पर बाँधने के लिये, जिससे पत्थर तोड़ते समय चीपें उचटकर मुँह पर न लगें और बतला

दिया कि इतने बड़े तोड़ना चाहिए कि इस छलनी में से निकल जायँ।

फूल०—"मैं बीमार हूँ, काम नहीं कर सकता, खाना भी न खा सका। तिस पर मैं यह काम भी नहीं जानता और बहुत कमजोर हूँ।"

मजदूर—"तो क्या तुम मालिक से मिलना चाहते हो?"

फूल०—"नहीं, नहीं, डॉक्टर साहब से?"

मजदूर—"तब क्या तुम खास उन्हें अपने ही लिये बुलवाते हो, मगर याद रक्खो अगर कुछ बात न निकली, तो बुरी तरह से भुगते जाओगे।"

बेचारा फिर बड़े असमंजस में पड़ा, फिर डरा कि कहीं और कुछ निकला, तो बस यहाँ से निकलना ही दुशवार है, यही सोचकर कहा—"खैर! जिस समय डॉक्टर आवेंगे तब ही देख लेंगे।"

नियमानुसार दस बजे डॉक्टर साहब पधारे और पूछा—"क्या तुम्हें कोई शिकायत है?"

फूल०—"जी हाँ! मैं बहुत बीमार हूँ और कमजोर हो गया हूँ, काम बिलकुल नहीं कर सकता, मैं सुबह को खाना भी नहीं खा सका था।"

डॉक्टर—"अपनी सदरी के बटन खोलो, (फिर देखकर) तुम्हें कुछ नहीं हुआ है, तुम अच्छे हो।"

फूल०—"नहीं! साहब, मैं कुछ काम नहीं कर सकता।"

डॉक्टर—"इसमें हम कुछ नहीं कर सकते, यह तो राजी-खुशी का सौदा है, हमने तुमको खाने को दिया, तुम उसके बदले में काम करो।"

फूल०—"मैंने तो समझा था कि यह कोई 'अनाथालय' होगा और दान के तौर पर यहाँ कुछ भोजन इत्यादि दिया जावेगा। यह मैंने स्वप्न में भी नहीं सोचा था कि यह एक 'सौदागरी' लेन-देन है।"

डॉक्टर—"तुम्हें कोई बात विपरीत समझने की जरूरत नहीं है, रूल (नियम) वहाँ रक्खे हैं, उनके मुताबिक काम करो।"

फूल०—"हाय ! मैंने तो सोचा था कि अँगरेजी राज्य में सब प्रजा स्वतन्त्र है, यहाँ के अफसरों को मुझे इस प्रकार रोकने—नहीं, नहीं, कैद करने का क्या अधिकार है।"

डॉक्टर—"मगर हमने तो इस प्रकार की कोई भी बात नहीं की, तुमने हमसे मदद चाही और उसके एवज में कुछ काम करने पर राजी हुए।"

फूल०—"मैं कभी राजी नहीं हुआ, मुझे कोई शर्तें नहीं दिखलाई गईं, मुझे अपने मित्रों से आज अवश्य मिलना है, मैं एक धनी हिन्दुस्तानी रईस का लड़का हूँ, बस जो कुछ आपने मुझ पर उपकार किया, उसके बदले में तुम्हें उसका खर्च दे दिया जावेगा, तुम्हें इस प्रकार कैद करना कदापि उचित नहीं।"

डॉक्टर—"तुम मालिक से मिलो, वह इन सब बातों का निपटारा करता है।"

फूल०—"मगर मैं तो तुम्हें डॉक्टर मान कर यह सब बातें कहता हूँ, मैं बीमार हूँ और काम नहीं जानता, देखिए मेरे हाथों पर तो जरा मुलाहिजा फरमाइए।"

डॉक्टर—"तुम्हारे अँगूठे में यह क्या हो गया है?"

फूल०—"हथौड़े की चोट लग गई है।"

डॉक्टर--"बस तब इतना काफी है, पहले ही तुमने यह क्यों न कहा, इतनी बकवाद की क्या जरूरत थी? तुम्हारे हाथ में चोट लग गई है और इसलिये तुम "डिस कॉली फाई" (नापास) किए गए। तुम अस्पताल में तो नहीं जाना चाहते?"

फूल०—"जी नहीं, मैं बाहर जाना चाहता हूँ।"

बस यह मनोरथ तो सफल हुआ, इन्होंने जल्दी-जल्दी कदम बढ़ाकर अपना रास्ता लिया।

परंतु इस समय इनकी फिर वही दशा है कि एक कौड़ी पास नहीं है। सोचने लगे कि अब क्या करना चाहिए, बहुत सोच-विचार के पश्चात् यही स्थिर किया कि 'चेरिङ्ग क्रास' यहाँ से बहुत पास है, और इसलिये एक बार अपने बैंकर से फिर मिलना चाहिए। यही सोचकर चल दिए। जिस समय यह बैंक के पास आए, क्लर्क लोग इन्हें देख-देखकर आपस में मजाक उड़ाने लगे।

एक ने कहा—"लो वह आ गया, तुम कहते थे कि अब वह क्या आयगा, एक सावरेन तो बना चुका।"

दूसरा—"अजी नहीं! वह तो अपने को उसी धनी का लड़का साबित करने आया है। शर्म भी तो नहीं आती, कहता है कि मैं 'फूलचंद' ही हूँ।"

तीसरा—"बस, अबके आया कि मैनेजर ने पुलिस के हवाले किया।"

इसी प्रकार लोग आपस में बातें कर रहे थे। फूलचंद ने आकर पूछा 'मैनेजर' हैं? सभों ने समझाया कि "अरे अपना रास्ता लो, यहाँ यह चाल नहीं चलेगी, नाहक पुलिस में भेज दिए जाओगे।"

फूलचंद ने दृढ़ता से कहा—"नहीं मैं उनसे मिलना ही चाहता हूँ।"

आखिर यह मैनेजर के पास पहुँचाए गए। उसने पूछा—"क्या तुम अब भी कहते हो कि मैं 'फूलचंद' ही हूँ? इन बातों में कुछ मजा नहीं है।"

फूल०—"जीहाँ, शायद आप मेरे कपड़ों की वजहसे...."

मैनेजर—"नहीं, नहीं, कपड़ों की कोई बात नहीं, हमें एक फोटो मिला है जो कि उन्होंने हाल ही में कलकत्ते में खिचवाया था, और 'लंडन न्यूज' में उनका हुलिया भी छपा है, आपकी शक्ल उससे बिलकुल नहीं मिलती, आपके गलमुच्छे वगैरह कुछ भी नहीं हैं।"

फूल०—"जी हाँ, वह मैंने सब साफ करा दिए, उसकी एक खास वजह है।"

बैंक का मैनेजर—"अच्छा तुमने अपने घर को तार दिया।"

फूल०—"जी नहीं! आपका सावरेन तो खाने में गया और दूसरा एक और पाया था, उसे लेकर मैं रास्ते में देखता जा रहा था, इतने ही में एक छोकरा आया और छीनकर चम्पत हुआ।"

मैने०—"बस, ऐसे बहुत से किस्से मैंने 'इसप्स फेबलस' में पढ़े हैं आपको ज्यादा कहने की जरूरत नहीं। इन सब बातों से स्पष्ट होता है कि तुम जरूर कोई ठग हो, नहीं तो भला सावरेन को हाथ में लेने की क्या जरूरत थी। खैर, इन सब बातों से मुझे क्या मतलब, तुम इस बात को साबित नहीं कर सकते कि तुम ही फूलचंद हो। लाचार मेरा वक्त खराब न करो,

में हो सकेगा, तो "इंडिया" को तार देकर पूछूँगा, और तहकीकात के बाद सब बात खुल जायगी, गुडमॉर्निङ्ग।"

बाबू साहब कुछ न कह सके, अपने दुःख में लिप्त थे, मगर अपने को सम्हाल कर उन्होंने कुछ कहना चाहा, पेश्तर इसके कि वह कुछ अपनी जबान से निकालें, मैनेजर ने घंटी बजाई और फूलचंद को फिर वहाँ से मजबूरन चले जाना पड़ा। इन सब बातों से बाबू साहब इतने चिढ़ गए कि अब उन्होंने चाहा कि मैं लड़ाई लड़कर अपने आपको साबित करूँ, मगर वे ऐसा करते किससे ? अब तो केवल अपना फूलचंद होने का प्रमाण देना है और फिर सब लोग उनके तलवे चाटने को मुस्तैद होंगे। जो लोग कि इस समय उन्हें इस भाँति धुत्कार रहे हैं, वही फिर आ-आकर इनकी खुशामद करने लगेंगे। तो अब किसी न किसी रीति से अपना नाम ही फूलचंद है, साबित करें। परंतु कौन-सी रीति से ? शायद कोई हिंदुस्तान के रईस—जो कि यहाँ आये हुए हों—मेरे बाप को या मुझे जानते हों और गवाही दे दें, परंतु यह कैसे हो सकता है ? जब कि बैंकवालों ही ने मुझे इस प्रकार से बेइज्जत करके निकाला, जिन पर कि मेरा पूरा-पूरा भरोसा था और जो कि असल में मुझको खूब अच्छी तरह जानते थे, तब फिर इन लोगों से गवाही दिलाने की आशा करना एक मटके में ऊँट का ढूँढ़ना है।

तब फिर क्या करें ? अच्छा तो एक बार और अपनी किस्मत आजमाई करें, चलो 'इयूस्टन' (Euston) स्टेशन पर चलें और वहाँ से अपने लगेज के वापिस लाने का प्रयत्न करें। भूख तो बेशक लग रही थी, परंतु गुस्से ने अब भूख

को बिलकुल उड़ा दिया है। यही सोचते हुए वह ज्यों त्यों करके वहाँ पहुँचे। देखा कि पोर्टर बाहर ही खड़ा है, उससे उन्होंने लगेज किस प्रकार वापिस लिया जाता है उसके नियम पूछे। उसने उत्तर दिया कि "यह बात आपको 'क्लोक रूम' में मालूम होगी", और उँगली के इशारे से उन्हें बतला भी दिया। वहाँ जाकर पूछने पर मालूम हुआ कि वहाँ वह माल मिल सकता है जिसका टिकट उनके पास हो और जो माल होटल को रवाना कर दिया जाता है और फिर वापिस आता है वह 'लॉस्ट प्रॉपरटी' में भेज दिया जाता है। यह भी कहा गया कि आप वहाँ के सुपरिंटेंडेंट से दरियाफ्त कर सकते हैं। फिर उसने उस बेग के बारे में पूछा जो कि एक पोर्टर ने लिवरपूल में गायब कर दिया था। इस पर उसने कहा कि वह भी आप उसी रिपोर्ट में शामिल कर सकते हैं। सुपरिंटेंडेंट के दफ्तर में जाकर फूलचंद ने सब चीजों की लिस्ट (सूची) पेश की जो कि होटल कामोपालिस को भेजी गई थी और उस बेग को भी इसी में शामिल किया। उत्तर मिला "जो लगेज कि होटल से वापिस आया है फिर दूसरे किसी ठिकाने पर जहाँ कि आप ठहरे हों, भेजा जा सकता है। सिर्फ जो कुछ खर्च उसके ऊपर पड़ा होगा, देना पड़ेगा। बेग के बारे में फिलहाल कुछ पता नहीं लगा, तसदीक करके इत्तिला देंगे।"

बाबू साहब 'थैंक्स' (धन्यवाद) देकर बिदा हुए। उन्होंने सोचा कि जो कुछ रेलवेवालों ने कहा, उसमें तनिक भी झूठ नहीं है, क्योंकि बगैर ऐसा किए वह कैसे जान सकते हैं कि माल का मालिक ही लेने को आया है, या कोई जाल-साज उसे लिए जाता है।

घंटा देखने से मालूम हुआ कि इस समय दोपहर का एक बजा है। वह अपना रात का बीता हुआ हाल सोचते हुए दफ्तर से थोड़ी ही दूर बाहर निकले होंगे कि एक अपरिचित मनुष्य ने (जिसको इन्होंने दफ्तर के अन्दर बैठे देखा था) आकर कंधे पर हाथ रक्खा और कहने लगा—"बहुत अच्छे उस्ताद ! अच्छा माल भाँपा, क्या मामला बढ़िया है।"

फूलचंद इसको इस तरह बे सिर-पैर की बातों को इस ढंग से कहते देख बहुत चकित हुआ और कहा, "साहब, मैं आपका मतलब न समझ सका।"

अपरिचित ने बगैर कुछ झिझके जवाब दिया—"मेरा मतलब उस लगेज से है, तुम उस हिंदुस्तानी का माल उकसाने की कोशिश कर रहे थे न ! मेरे ख्याल से माल तो बहुत होगा।"

फूल०—"हाँ, माल तो बहुत है, मगर वह और किसी का नहीं, मेरा ही है और मेरा ही नाम.........."

अपरिचित—"भाई तुम भी खूब हो, अच्छा आओ पहले थोड़ा सा 'रिफ्रेशमेंट' खा लें, तब फिर बातें करेंगे। देखो, ऐसे मुआमलों में एक से दो भले होते हैं।"

यह भूख के मारे बेदम हो ही रहे थे, रिफ्रेशमेंट के नाम ही से कुछ जान में जान आई। वह भी पास के एक मकान में चलने लगा। उसने कहा—'मेरा नाम (Sam Jerret) 'शेम जेरट' है, शायद तुमने सुना होगा।"

फूल०—"जी नहीं, मुझे आपके नाम सुनने का सौभाग्य अब तक नहीं प्राप्त हुआ था। मैं यहाँ किसी से परिचित नहीं हूँ।"

अ० अं०—"बस, यही चाल खूब है, देखो जो बात

मुँह से निकालो उसी पर जमे रहो, यह नहीं कि इससे कुछ कहा, दूसरे से कुछ।"

फूलचंद इस व्यक्ति के ढंग से कुछ न समझ सके कि यह क्यों बीच ही में पैर अड़ाए देता है और सिर ही हुआ चला जाता है। शायद उस मनुष्य ने यह समझा है कि यह कोई बड़ा जाली आदमी है और दूसरे का माल उड़ाने आया है, सो मैं भी उसमें शामिल होऊँ, अगाड़ी सब हाल मालूम हो जायगा।

फूल०—"अजी नहीं, भला मैं सच बात में क्यों लौट-फेर करने लगा।"

अ० अं०—"ठीक है! बस यही पैतरा ठीक है।"

थोड़ी देर बाद एक मकान में पहुँचे, वहाँ जाकर उसने एक ग्लास चढ़ाया और मैंने यह कहकर कि मुझे भूख ज्यादा लगी है कुछ रोटी खाई—इतने में उसने कहा "हाँ, अब लगेज के बारे में क्या बात तय करते हो।"

फूल०—"कुछ नहीं, उसकी क्या बात है, वह होटल कामोपालिस के पते से भेजा गया था, मगर मैनेजर ने गलती से उस तार का, जो कि मैंने अपने लिये कमरा तैयार रखने का दिया था, जवाब नहीं दिया, और माल यह कहकर लौटा दिया गया कि उनके यहाँ जगह खाली नहीं है, अब सुपरिंटेंडेंट कहता है कि तुम किसी दूसरे होटल के पते से मँगा सकते हो।"

अ० अं०—"मगर मैं नहीं समझता कि यह मामला कहाँ तक पूरा हो सकता है, अगर उन्होंने हरूफ मिलाए और दस्तखत कराए तब।"

फूल०—"और मैं यह नहीं समझ सकता कि दो रोज में मेरे हरूफ या दस्तखत बदल गए होंगे।"

अ० अं०—"खूब ख्याल है कि सब हरूफ मिल जायेंगे, कहीं गलती न होगी।"

फूल०—"भला इसमें शक किस बात का।"

अ० अं०—"मगर कपड़ों की कीमत से तो शायद होटल का किराया भी न निकल सकेगा, तुम इसके पीछे इतने क्यों पड़े हो।"

फूल०—"यह बात नहीं है, उसमें सौ पाउंड तो नकद हैं और भी कई एक कीमती चीजें हैं।"

अ० अं०—"भला यह तुम्हें कैसे मालूम हुआ कि उसके अंदर क्या-क्या चीजें हैं?"

फूल०—"जब कि मेरा माल है, तो क्या यह भी मालूम न होगा?"

अ० अं०—"अच्छी बात है कुछ भी हो, सब खर्च-वर्च काटकर आधा-आधा कर लेंगे।"

फूल०—"आधा, आधा!"

अ० अं०—"देखो, तुम यह तो जानते ही हो कि मेरी बगैर मदद तुम माल बरामद नहीं कर सकते, फिर इससे अच्छा हिस्सा तुम्हें कैसे मिल सकता है।"

फूलचंद ने सोचा कि जैसे हो तैसे इससे निबटारा कर लगेज निकाल लें, फिर तो उसमें चेकबुक है ही, सब काम ठीक हो जायगा।

फूल०—"अच्छा, मैं तुम्हें पचास पाउंड दे दूँगा।"

अ० अं०—"लेकिन देखो कपड़े वगैरह तो मेरे काम के हैं ही नहीं, उसके एवज में क्या दोगे?"

फूल०—"अच्छा, यदि तुम मेरा सारा लगेज वापिस दिला दोगे तो मैं तुम्हें पचहत्तर पाउंड दे दूँगा ।"

अ० अं०—"अच्छी बात है, अब हमारी-तुम्हारी सब बातें तय हो गईं, अब एक बड़े होटल में चलना चाहिए और वहाँ मैं मालिक बनूँगा, क्योंकि यदि तुम्हें मालिक बतलाया जायगा, तो शायद कोई अंदर भी न घुसने दे, आपकी पोशाक का और हाल देखकर लोग शक करेंगे और शायद मामला बिगड़ जाए ।"

फूल०—"तब क्या तुम अपने तईं 'फूलचंद' बतलाओगे ?"

अ० अं०—"इस बारे में कुछ फिक्र न करो, वहाँ नाम आम कोई पूछता नहीं है, सिर्फ 'विजिटर बुक' पर दस्तखत कराए जाते हैं, सो मैं बाहर 'हाल' में दस्तखत नहीं करूँगा, किताब कमरे में लाने को कह दूँगा, बस वहाँ तुम दस्तखत कर देना और तुम्हीं वहाँ सुपरिंटेंडेंट के नाम स्टेशन को चिट्ठी लिख देना । होटल में मैं यह जाहिर कर दूँगा कि यह शख्स मेरे संदूक वगैरह के ताले दुरुस्त करने आया है ।"

फूल०—"खैर, इससे मुझे कुछ मतलब नहीं, जैसे बने लगेज जल्दी से लाने का बंदोबस्त करिए ।"

अ० अं—"बस, इससे अच्छी और कोई भी तरकीब नहीं हो सकती, चलो चलें, मैं एक बहुत बड़े और नामवर होटल का पता जानता हूँ ।"

यह दोनों उस मकान के (या कहिए शराबखाने के) बाहर निकले । जाते-जाते उसने कहा—"देखो सब काम फैशन से होना चाहिए ।" उसने एक टमटम भाड़े की और उसके

कोचवान को 'सेलिस्बरी होटल' का नाम बतलाकर चलने को हुक्म दिया। बस, जब टमटम वहाँ होटल के सामने पहुँची, मि० जेरेट ने एक हाफ-क्राउन कोचवान को फेंक दिया। और झट ऊपर की तरफ चढ़ने लगा। फूलचंद भी धीरे-धीरे कदम बढ़ाते उसके पीछे-पीछे चले। दफ्तर में जाकर उसने अपने लिए एक सोने का कमरा तैयार करने का हुक्म दिया और कहा—"हमारा सब लगेज 'इयूस्टन' में है उसे जल्द मँगवाना चाहता हूँ।"

मैने०—"तो क्या छोकरे को बुलाऊँ ?"

उसने कहा—"अगर आप किसी होटल के पोर्टर ही को भेज दें, तो अच्छा हो, क्योंकि मैं अपना लगेज बहुत जल्द चाहता हूँ, वह कोई गाड़ी में बैठकर चला जावे और जल्द सामान ले आए, जो कुछ खर्च पड़ेगा मैं सब दे दूँगा। मैं इस शख्स को भी अपने साथ ही ले आया हूँ, यह ताले वगैरह दुरुस्त कर देगा, रास्ते में कुछ खराब से हो गए हैं।" यह कहकर उसने झट से एक सॉवरेन जेब से निकालकर फेंक दिया। अब क्या था, बड़ी खातिरदारी से इन्हें बैठाया गया। तब इन्होंने कहा—"आदमी को दो-एक मिनट में भेज दो, तब तक मैं रुक्का लिखता हूँ।"

इन्हें एक उम्दा सजा-सजाया कमरा बतला दिया गया। तब उस अँगरेज ने इनसे कहा—"अब तुम होशियारी से एक रुक्का लिख दो, देखो कहीं गलती न हो और दस्तखत भी जरा गौर से करना, कहीं बना-बनाया मामला न बिगड़ जावे।" फूलचंद ने डेस्क पर जाकर एक खत इस मजमून का लिखा—

सेलिस्बरी होटल
ता० ....

प्रिय महाशय !

मेहरबानी करके वह सामान जो होटल कामोपालिस से वापिस आया है, इस आदमी को दे दीजिए, खर्च का बिल भी इसे ही दे दीजिए, मैं सब अभी यहाँ के मैनेजर की मार्फत भिजवा दूँगा।

आपका—फूलचंद (भारतवासी)

फूलचंद ने यह पर्चा लिख मि० जेरेट के हवाले किया। उसने देखकर कहा "मालूम होता है तुमने जल्दी बहुत की, अगर तुम्हारे पास उन दस्तखतों की नकल होती तो अच्छा होता और उसको देख-देखकर लिखते, तो फिर किसी प्रकार का संदेह न रहता। खैर देखा जायगा।"

इतना कहकर उसने घंटी बजाई और एक आदमी ने आकर सलाम किया। उसको रुक्का देकर बोले "यह खत मैनेजर को दो और बोलो कि हमारा लगेज जल्द मँगवा दें।"

वह आदमी खत ले रवाना हुआ और थोड़ी देर बाद आनकर बोला—"मैनेजर ने हुजूर को सलाम कहा है, और एक आदमी स्टेशन पर भेज दिया गया है। यदि देर न लगी तो एक घंटे में लौट आवेगा।"

जिस समय कि वह आदमी चला गया मि० जेरेट ने फूलचंद से कहा (यह लिखने में मशगूल था) "तुम यह क्या कर रहे हो?"

फूल०—"कुछ नहीं ! मैं अपने 'बैंकर' को एक चिट्ठी लिख रहा हूँ। अब होटल का ठिकाना लग ही गया है, वह जरूर आनकर मेरी मदद करेगा।"

जेरेट—"देखो जी ! जिस समय तुम मेरे साथ एक काम कर रहे हो दूसरे में हाथ डालना फ़िजूल है। पहिले इसको निबट लेने दो और मुझे पचहत्तर पाउंड दे दो। फिर जैसी तुम्हारी समझ में आवे वैसा करना।"

फूल०—"खैर ! अब तक जो आपके ख्याल थे वह दिल से दूर कर दीजिए। मैं ही खास 'फूलचंद' हूँ और मैं समझता हूँ आप भी शायद.................."

उसने बात काटकर जवाब दिया "मुझे कहने में जरा भी तकल्लुफ नहीं, मैं तो एक रेलवे का चोर हूँ।"

फूल०—"खैर आप जो हों ! मैं तुम्हें जो कुछ तुमसे वादा कर चुका हूँ दूँगा, क्योंकि तुमने मेरी मदद की है।"

जेरेट—"आप भी चाहे जो हों, मैंने आपके साथ कोई बुराई नहीं की है।"

इतने में 'वेटर' ने आकर इत्तिला दी कि लगेज आ गया है। मि० जेरेट ने कहा—"पहिले दो प्याले काफी और दो रोटी ले आओ, हम नीचे आकर लगेज को देख लेंगे।"

इधर फूलचंद भी इंतजार ही कर रहे थे और चाहते थे कि झट उस पर कब्जा करें। इन्हें वैसी ही खुशी हुई, जैसी किसी को खोए हुए धन मिलने पर होती है।

इतने ही में उस अँगरेज ने कहा—देखो मेरी समझ में इतना उत्सुक होना ठीक नहीं, क्योंकि जो कोई मालिक होता है उसे इतनी जल्दी काहे की। यदि आप कुछ तेजी करेंगे, तो लोगों को शक होगा और फिर गड़बड़ हो जायगा, इसलिये सब काम धीरे-ही-धीरे ठीक होता है।

बस, इसने फिर फूलचंद को दमपट्टी दी और इन्होंने भी सोचा कि माल आ ही गया है, फिर कहाँ जाता है।

एक प्याला काफी पी, फिर उसने कहा "तो अच्छा जब तक आप और थोड़ा-सा खावें और ठहरें, मैं लगेज के ऊपर लाने का बन्दोबस्त करता हूँ।" यह कहकर वह नीचे की तरफ उतर गया। फूलचंद भी धीरे-धीरे खाने लगे और हवा के घोड़े दौड़ाने लगे, सोचा कि अब फिर सब काम बना ही चाहता है। इन्हीं विचारों में करीब २० मिनट गुजर गए, पर मि० जेरेट सामान लेकर नहीं लौटे, खैर १० मिनट और भी ठहरे रहे, तब भी न लौटे, अब तो जरा फिक्र हुई। इतने ही में एक लौंडा नीचे से आया और कहा "मालिक तो सामान लेकर नीचे ही से चले गए हैं और चलते वक्त यह कह गए कि अब तुम्हारी कोई जरूरत नहीं है, क्योंकि ताले सब ठीक थे किसी को सुधरवाना न था, सो तुम अब जा सकते हो!" और फिर जरा ठहरकर कहा "अच्छा ठीक है, उन्होंने चलते वक्त यह चिट्ठी भी दी थी—

मिस्टर लखपती साहब!

बंदगी, मैं अब जाता हूँ और अब आप बैंक से निबटिए। तुम इस प्रश्न का अपने दिल में ही उत्तर सोचो—"जब सौ मिलते हैं तो पचहत्तर क्यों लें?" गुडमॉर्निङ्ग।

तुम्हारा—

एस्. जेरेट.

बस, अब तो शिकार हाथ से जाता रहा, अब क्या होता है, यहाँ कोरे-के-कोरे ही रह गए।

तीसरा परिच्छेद

Foul deeds will rise.
Though all the earth overwhelm them to men's eyes—

संध्या का समय है, ग्रीष्म ऋतु होने से दिन भर बड़ी गर्मी थी। इस समय जरा गर्मी कम हुई। सड़कों पर छिड़काव हो रहा है। इसी समय रसिकजन हवा खाने या टहलने निकलते हैं। बहुत से धनी साहूकार, जो कि बाहर जाना नापसंद करते हैं, अपने मकान के आँगन में ही खूब छिड़काव कराकर बाहर तख्त लगा कर बैठते हैं, या मकान के सबसे ऊपरवाली मंजिल की छत पर छिड़काव कराकर हवा खाते हैं। तात्पर्य यह कि छोटे-बड़े नौकर-चाकर सब इसी समय कलकत्ते की सड़कों पर बिचरते नजर आते हैं। सारी राजधानी अपने-अपने कार्य में मग्न है। कोई दूकानदारों से सौदा ले रहा है, कोई ऊपर की तरफ नजर किए हुए 'मेल ट्रेन' बना चला जा रहा है। ट्राम गाड़ी और फिटन गाड़ियाँ भी दम-दम पर हवा से बातें करती हैं। बाइसिकलों की भी कमी नहीं है। सारे नगरवासी अपने-अपने धंधों में लगे हुए हैं, तो क्या अपने राम घर ही पर पड़े रहेंगे? पाठकगण, आप भी बहुत देर तक खस की टट्टियों में बैठे हुए आराम करते रहे, अब उठिए, जरा पार्क, हाईकोर्ट और किला होते हुए 'एडन गार्डन' वगैरह की चहलकदमी कर आवें। अगर पैदल न सही, तो फिटन ही कसवा लीजिए, देखिए! वह बड़े बाजार के नुक्कड़ पर एक कितना सुंदर मकान अगाड़ी की तरफ निकला हुआ दीखता है। दूर से देखने पर तो यही मालूम होता है

कि यह जरूर किसी रईस का घर है। यदि किसी सौदागर की दूकान या कोठी होती, तो कोई मनुष्य लेता-देता ठहरता या उतरता-चढ़ता तो नजर आता। ठीक है, वही मेरा विचार ठीक निकला। साइनबोर्ड दूर ही से सुनहरे हरूफों से कह रहा है कि यह मकान 'मि० एथर्टन मार्टन' (Mr. Etherton Martin) का दफ्तर है। बस मेरा मन तो न मालूम क्यों इस मकान की सूरत देखते ही आकर्षित हुआ जाता है, तब तो फिर ठहरना ही पड़ा।

अहा! यह तो कोई बहुत ही बड़े आदमी मालूम होते हैं, देखिए! वह सीढ़ियों पर कितना मोटा, उम्दा कालीन बिछा हुआ है। ऊपर चढ़ने से तो सब संदेह दूर हुआ। एक उम्दा सजा-सजाया बहुत बड़ा कमरा है, बीच में एक बड़ी भारी मेज रक्खी हुई है, उसमें तरह-तरह की उम्दा लिखने-पढ़ने की चीजें रक्खी हुई हैं, चारों कोनों में चार बहुत ही खूबसूरत अलमारियाँ लगी हुई हैं। उनमें तरह-तरह की चीजें अलंकृत हैं, यानी एक में तो कई प्रकार के कपड़े मालूम होते हैं, दूसरी में किताबें और बाकी दो पर रेशमी परदे पड़े होने से कुछ अंदर का हाल मालूम नहीं होता। चारों तरफ दीवारों पर बड़ी-बड़ी फोटो की तसवीरें हैं और सारा कमरा उम्दा 'हेंगिंगस और टेपिस्टरी' से सुशोभित है। कुल कमरा जैसा कि एक अमीर अँगरेज का 'ड्राइंग रूम' होना चाहिए, बिलकुल वैसा ही था। टेबिल के पास ही दो कुरसियों पर दो आदमी बैठे हुए थे। उनमें एक तो अँगरेज था जो कि मकान का मालिक मालूम होता है, और दूसरा कोई हिंदुस्तानी है, जिसकी सूरत शकल से मालूम होता है कि यदि यह इन साहब

बहादुर के बराबर नहीं तो बहुत नीचे दरजे के भी नहीं हैं। कमरे के चारों तरफ किवाड़ हैं और उनके ऊपर रेशमी कपड़े पड़े हुए हैं। बहुत कोशिश करने पर भी आदमी यह नहीं देख सकता कि अंदर क्या हो रहा है। कुछ भी हो अपनी तो दिव्य दृष्टि है जहाँ जो चाहें सो देख लें। आप भी अगर पहले से सोचे हुए होते, तो 'साइंस' के जरिए से 'X Ray' का एक्सपेरीमेंट ट्राई करते और देख सकते थे कि कमरे के अंदर क्या हो रहा है।

यह दोनों आदमी चुरुट से धुआँ फक-फक करते हुए बातों के फर्राटे उड़ा रहे थे। मालूम होता था कि कोई गुप्त सलाह में लवलीन हैं। थोड़ी देर के बाद साहब बहादुर ने कहा—

"वेल मिस्टर वाहिद, मालूम होता है कि हमारे-तुम्हारे मामले के करनेवाले हों न हों जरूर एक ही गिरोह के हैं। उधर तुम हसीना की खोज लगाने को तैयार हो, इधर मुझे नोटों का मामला तलाश करना है, नहीं तो बड़ी बदनामी होगी।"

हिंदुस्तानी—"जी हाँ! बेशक अगर हम और आप मिलकर इस काम में हाथ डालें, तो जरूर कामयाबी हासिल हो सकती है, और मिलकर करने में कोई हर्ज भी नहीं, क्योंकि हम और आप कोई एकार्थ अभिलाषी तो हैं ही नहीं। अगर हम और आप एक ही काम के ऊपर मुकर्रर किए गए होते तो मुमकिन था कि अपनी-अपनी नामवरी के लिये ऐसे-ऐसे खयाल पैदा होते। मगर जब कि हम और आप अलहिदा-अलहिदा काम पर मुकर्रर किए गए हैं, यदि हम इन लोगों को पकड़ सकें, तो दोनों ही की नामवरी है, और अलावा इसके आपमें और मुझमें पहले ही से ऐसा दोस्ताना बर्ताव चला आता है।"

अँगरेज—"मि० वाहिद, तुम बहुत ठीक कहते हो, जरूर हम दोनों इस काम के पीछे पड़ेंगे, तब फिर बोलो, कब से काम शुरू करोगे ?"

हिंदुस्तानी—"इस मामले में ज्यादा देर करना ठीक नहीं, क्योंकि जिन आदमियों ने ऐसे-ऐसे काम किए हैं, वह जरूर उस्ताद होंगे। इस मामले में जरूर कोई रहस्य है, इसलिये जितनी जल्दी हो सके उतना ही अच्छा है। मेरी समझ में तो अगर आज ही शुरू कर दिया जावे, तो बेहतर हो।"

अँगरेज—"क्या आज ही से! अच्छी बात है, मगर शुरू किस ढंग से कीजिएगा ? कुछ पता पाया है क्या ?"

हिंदुस्तानी—"जी हाँ, आपके मुआमिलेवाले दोस्त से तो एक मर्तबा मुठभेड़ भी हो चुकी है।"

अँगरेज—"हैं! क्या कहते हो, क्या उसी शख्स से जो अपने तईं मिस्टर मार्गन बतलाता था।"

हिंदुस्तानी—"जी हाँ, उन्हीं हजरत से!"

वाहिद ने सेठ घासीलाल की कोठी में होनेवाली सभी बातें कह सुनाईं। साहब सुनकर कुछ शशोपंज में पड़े, बात बेशक बड़ी टेढ़ी थी कि वही शख्स वहाँ किसलिये गया। खैर, यह बात तो मामला प्रकट होने पर खुल ही जायगी, सोच कर पूछा—

"तो क्या तुमने और भी कुछ पता लगा लिया है ?"

वाहिद—"जी हाँ, वह यह कि वही शख्स बड़ा बाजार लाइब्रेरी में आकर अक्सर कई शख्सों से बात किया करता है।"

अँगरेज—"क्या उसी लिबास में ?"

वाहिद—"भला यह क्या जरूरी बात है कि वही कपड़े

पहने हो और यह तो आप सोच सकते हैं कि जब मामला ऐसा बढ़ गया है, तब क्या वह वही कपड़े पहनकर अपने आपको फँसाने का नुसखा तलाश करेगा।"

अँगरेज—"तो फिर तुमने खूब पहचान लिया कि वह वही है जो यहाँ आता है।"

वाहिद—"भला क्या कोई जासूसी लटके से बच सकता है।"

अँगरेज—"अच्छा तो बस ठीक है, आज ही से कार्रवाई शुरू की जावे, वक्त भी ठीक है। लाइब्रेरी का टाइम ठीक ६॥ से १० तक है, बतलाओ किस ढंग से चलोगे।"

वाहिद—"मैं तो आज बंगाली भेष रखकर जाना चाहता हूँ। आप भी जैसा चाहें, करें।"

अँगरेज—"बस, तो मैं पंजाबी बनता हूँ।"

यह कहकर तीसरे कोनेवाली अलमारी का पर्दा हटाया गया और दोनों ने उसमें से लिबास निकालकर पहने। फिर चौथी अलमारी भी खोली गई, और उसमें से एक-एक लंबा डंडा निकालकर दोनों ने अपने-अपने कपड़ों में छिपा लिया।

....

दोनों लपके हुए लाइब्रेरी की तरफ जाने लगे। थोड़ी दूर जाकर फिर एक दूसरे से बिछुड़ गए। पहले बंगाली महाशय घुसते हुए नजर पड़े। फिर छः-सात मिनट के बाद पठान भी पहुँचे। और सब देखनेवालों को भला क्या मालूम हो सकता है कि यह दो बिलकुल मुख्तलिफ जात के मनुष्य पहले कभी मिले भी थे, फिर उनका यह जानना कि वे कौन हैं, जरा टेढ़ी खीर है। खैर हमारे बंगाली महाशय धोती सकपकाते

हुए एक कुर्सी पर बैठ गए और 'बेंगाल हेरल्ड' की तरफ़ निगाह घुसेड़-घुसेड़कर पढ़ने लगे। फिर थोड़ी देर बाद आप लाइब्रेरियन से 'मेरी कुरेली' (Marie Corellie) का बनाया हुआ 'सोरोज आफ सेटन' (Sorrows of Satan) लेकर एक तरफ मुँह फेर और सिर को हाथों पर टेक पढ़ने में ऐसे लिप्त हुए मानों दीन दुनिया की खबर ही नहीं। इधर पठान साहब ने भी पहले तो 'पैसा', अखबार की तलाशी ली और फिर एक उर्दू नाविल ला पढ़ने में दत्तचित्त हुए। देखनेवालों को ऐसा मालूम होता था कि 'भई बड़े बढ़ने के शौकीन हैं' मगर यह किसी को नहीं मालूम था कि यह किस टोह में हैं।

यहाँ लाइब्रेरियों में सब मनुष्य पढ़ने ही की गरज से नहीं आते, बहुत से सिर्फ एकआध ताजी खबर के ही लिये आते हैं और बहुत से तो इसे शाम के वक्त दोस्तों के मिलने का अड्डा ख्याल करते हैं। ऐसे बहुत कम हैं जो विद्या उपार्जन की ही नीयत से पैर रखते हों। तथापि इस समय हमारे बंगाली और पठान साहिबों को देखकर तो यही कहना पड़ेगा कि ये तो जरूर इसी गरज से आए हैं। लाइब्रेरी जिस मकान में है वह करीब ७० फीट चौड़ा, ९५ फीट लंबा और बहुत ऊँचा कमरा है, बड़ी-बड़ी चौड़ी दोतरफा सीढ़ियाँ घेर खाती हुई ऊपर को चढ़ती हैं और सिरे पर पहुँचते ही इस कमरे का दर्वाजा मिलता है। सामने ही एक बड़ी रंगीन तसवीर मृत महारानी विक्टोरिया की लगी है, और दोनों तरफ अगल-बगल महाराज सप्तम एडवर्ड और महारानी एलेक-जेंडरा की और दोनों कोनों पर लार्ड और लेडी कर्जन की

तसवीरें लटकाई गई हैं। कमरे में खूबसूरत विलायती टाइल्स का फर्श है और दीवारें हल्के गुलाबी पक्के रंग से रँगी हुई हैं। चौतरफा काँचदार बड़ी-बड़ी अलमारियों में किताबें झलक रही हैं, और उनके बहुत ऊपर 'लाइफ' साइज की कई राजाओं और अँगरेज हाकिमों की तसवीरें हैं। एक कोने में लाइब्रेरियन की मेज है और सात-आठ बड़ी-बड़ी गोल मेजें हाल के बीच में रक्खी हुई हैं। उनके चारों तरफ तरह-तरह की कुर्सियाँ लगी हुई हैं। लाइब्रेरियन के सामने ही एक तख्ते पर चिपके हुए वहाँ के रूल्स लटक रहे हैं, और बड़े-बड़े रजिस्टर टाइपों में लिखे हुए रक्खे हैं, बीच की मेज के सामने ही एक दरवाजा और है, वहाँ से छज्जे पर खड़े होकर सड़क की सैर भली भाँति हो सकती है। यह इसलिये है कि पढ़ते-पढ़ते जब किसी को सिगरेट वगैरह पीने की जरूरत हो, तब वहाँ उठकर पी आवें। हमारे बंगाली महाशय भी उठकर वहाँ चले गए और थोड़ी देर बाद आन कर फिर बैठ गए, मगर इतने ही में उसने एक आँख का इशारा पंजाबी को मार दिया। कोई चार ही मिनट हुए होंगे कि दो शख्स हाथ में बेंत लिए और आजकल के विद्यार्थियों का-सा ढंग बनाए हुए आ पहुँचे, यानी बढ़िया रिपन शर्ट, काले किनारे की चुनी हुई धोती, सिल्केन फुल मोजे, और उस पर पंप श्यू चढ़ाए, एक के गले में गुलाबी सिल्क (रेशम) की चद्दर भी लिपटी हुई थी। ये दोनों आकर एक टेबिल के सामने जिस पर कोई मनुष्य न था बैठ गए। भाग्यवश यह टेबिल ऐसी जगह रक्खा था कि बंगाली महाशय जहाँ पर बैठे थे उनके दाएँ हाथ पर और पंजाबी के बाएँ हाथ पर था—अगर यह दोनों बातें करते

तो वहाँ के बैठे हुए मनुष्य भली प्रकार से सुन सकते थे। बस, यह दोनों शख्स पहले से भी ज्यादा पढ़ने में मशगूल हुए। थोड़ी देर इधर-उधर कागज टटोल और सब तरफ देख-भालकर यह नए आए हुए दोनों मनुष्य बातें करने लगे। एक ने कहा—

"कहिए—वहाँ का आजकल क्या हाल है। जरा होशियारी से रक्खा करना। यह तो जानते ही होंगे कि पाला अब की बड़े बेढब से पड़ा है, मगर देखो अपना भी नाम ही क्या जो बेटा वाहिद को मजा न चखाया हो। तुमने बदमाशों को बहुत पकड़ा है, मगर अब की हम तुम्हें चचा बना के छोड़ेंगे।"

दूसरा—"जी हाँ, इसमें क्या शक है। हसीना को वहाँ से अपने ही यहाँ ले आए हैं। और भी मजे की बात देखी? दो मुकद्दमे अलहिदा-अलहिदा दायर हुए हैं—मि० मार्टिन भी अभी तक टटोल ही रहे हैं कि मामला क्या है, मगर सँभलकर रहना चाहिए, दोनों मूजियों के चंगुल से निकलना जरा मुश्किल बात है। मगर ठहरो यहाँ ऐसी जगह आकर भेद की बातें नहीं करना चाहिए, क्या मालूम कोई सुनता ही हो।"

प्रथम—"मगर मुझे आज तुमसे बहुत-सी बातें करना हैं, चलो तो फिर 'बिग बेगरमेन' के होटल में, वहीं सब तय करेंगे।"

ये शब्द निकलने भी न पाए थे कि झट बंगाली महाशय किताब वापिस कर चलते बने और चलते वक्त पंजाबी को आँख का इशारा करते गए। इन्होंने झट अपने पास के स्टेशन में जाकर बंगाली भेष तो उतारकर धर दिया और दस ही मिनट में खासे क्रिशचियन बन गए, ऊपर से नाइटकेप चढ़ा ली और 'बिग बेगरमेन' के होटल की राह ली। ठीक समय पर

यह वहाँ पर पहुँचे। उस वक्त तक वे दोनों शख्स वहाँ नहीं पहुँचे थे, झट जाकर इन्होंने शराबियों का ढंग बनाया और जाकर मालिक से शराब लाने को हुक्म दिया। शराब के दौर चलने लगे। इधर तो इन्होंने कपड़े बदले और यह रंग जमाया, उधर उन लोगों के आने में इतनी देरी क्यों हुई, वे तो उसी समय चलनेवाले थे? सबब सब यह था कि ये लोग लाइब्रेरी से उठने ही वाले थे कि 'पठान' ने आकर इनसे पूछा कि "यहाँ शरबतवाले की भी कोई दूकान है?" यह कहते हुए मनीबेग जेब से निकाला, जिसमें कुछ गिन्नियाँ और नोट थे। उन दोनों ने पूछा कि 'यहाँ आप नए आए हुए मालूम होते हैं?' उसने उत्तर में कहा कि आपका कहना ठीक है। नीचे उतरने पर यह उस पठान को एक सोडावाटरवाले की दूकान पर ले गए, और वहाँ इन्होंने एक बोतल बर्फ के साथ 'रोज़वरी' की उसके खोलने को कहा, तब फिर उसने एक-एक बोतल इन दोनों को भी पिलवाई इन बातों में करीब १५-२० मिनट लग गए होंगे। कीमत देती बेर वह रुपया दूकानदार की ओर फेंककर वह चलने लगा, मगर इन्होंने उससे बाकी दाम ले हवाले किए। पठान बोला—"उह! यहाँ तो बहुत सस्ता बिकता है, तीन बोतल सिर्फ छः आने में, हमारी तरफ अनार शरबत की बोतल एक-एक छः-छः आने से कम नहीं आती, यहाँ चीज बहुत सस्ती है।" इन्होंने देखा कि यह पठान तो बहुत भोलाभाला है, झट चंगुल में फँसा लेंगे। उसके मनीबेग की तरफ देख मुँह में पानी भर आया। ऐसी सोने की चिड़िया भला कौन छोड़े, झट पूछा कि आज शाम को आप खाना किधर खायँगे? आप बहुत भलेमानुस आदमी मालूम होते हैं।

जरा सी देर में अजनबी आदमियों के साथ ऐसी मेहरबानी से पेश आते हैं, आज आप हमारे ही यहाँ खाना खाइए, आज से हमारी आपकी दोस्ती हुई।

पंजाबी—"खाना तो हमारे यहाँ भी बना होगा, मगर कुछ पर्वा नहीं, हमें यहाँ दूसरे मुल्क में आकर दोस्ती की बहुत जरूरत है, आज आप अच्छी खुशकिस्मती से मिले।"

यह कहकर तीनों एक तरफ जाने लगे, तीनों अपने-अपने विचारों में मग्न थे, दो तो कहते थे कि हमने अच्छा उल्लू फाँसा, मगर वह यही सोचता था कि "अच्छा! कैसा उल्लू बनाया।" जरा देर में तीनों नियत स्थान पर पहुँचे जहाँ थोड़ी देर पहले हमारे बंगाली महाशय भेष बदले हुए पहुँच चुके थे। इन्होंने जाकर दरवाजा खटखटाया। एक आदमी आकर इन्हें अंदर ले गया। इन्होंने पूछा "कोई शख्स तो अंदर नहीं है?" उन्होंने कहा, कोई नहीं। एक क्रिश्चियन है सो बड़ी देर हुई शराब पीकर अंटाचित्त पड़ा है, उसे बेंच के नीचे किए देते हैं, पड़ा रहने दो अपना क्या हर्ज है।

यह सुनकर तीनों आदमी अंदर घुसे और शराब और खाने के लिये हुक्म दिया।

खूब खाना और शराब उड़ी। देखने के लिये तो पठान ने भी कई ग्लास स्वाहा किए; मगर सब जासूसी चालों से। इन पर शराब ने कुछ भी असर नहीं किया। तब भी दिखावे के लिये उन्होंने अपने तईं खूब बेहोश जाहिर किया। मौका देख उनमें से एक ने इनके मनीबेग पर हाथ मारा और झट अपने कब्जे में किया। यह भी ऐसे चुप रहे मानों खबर ही नहीं। थोड़ी देर बाद जिसने बटुए को चंपत किया था टरकने

को उद्यत हुआ, यह उसी हालत में पड़े रहे, मानों बेहोशी ने इन्हें बिलकुल जकड़ ही दिया है। इतने में दूसरा आदमी बोला कि "अब जल्दी काहे की है, यह तो उल्लू बना पड़ा ही है, अब चलो अपनी सलाह करें।"

दूसरा—"चलें कहाँ, यहीं सही, यहाँ क्या कोई और सुननेवाला है?"

पहला—"तो बस ठीक है, कहिए क्या करना होगा?"

दूसरा—"कुछ नहीं, पहले तो हसीना को अड्डे पर से उठाकर कल्ह ही किश्ती पर रवाना करो और शायद फिर कोई अड्डे को ताड़ ले, इसलिये धीरे-धीरे अड्डा भी तोड़ना चाहिए।"

पहला—"अच्छा अब नोटों के बारे में तो कुछ फिकर ही नहीं, मालूम हुआ है कि खजानची कंबख्त नंबर भी नहीं उतारने पाया था।"

दूसरा—"तो बस, सब मामला ठीक है, खर्च के माफिक निकालते जाओ और बाकी को जब हल्ला दब जावेगा, तब देखेंगे।"

पहला—"मगर क्यों साहब, फूलचंद की भी कुछ खबर है?"

दूसरा—"अब तुम्हें उससे क्या मतलब? तुम्हारे पास जब रुपया मौजूद है, तो सौ फूलचंद तुम्हारी जेब में पड़े रहेंगे।"

पहला—"मेरा मतलब यह नहीं है, मैं तो योंही पूछता था।"

दूसरा—"बस, यहाँ तो अपने मतलब की बातें करना चाहिए, ऐसी फिजूल बातें तो फुरसत में हुआ करती हैं।"

पहला—"अच्छा, और हाँ, यहाँ आते वक्त मालूम हुआ था कि वह लौंडा भी ठिकाने पर पहुँच गया है।"

दूसरा—"बस, तो यह और भी अच्छा हुआ, अब तीनों को ऐसे ढंग से रखना कि एक दूसरे को न देख सके,

देखो, इसमें गलती न होने पावे, क्योंकि यदि बुड्ढे ने या लड़के ने हसीना को देख लिया, तो बस, फिर सब बना-बनाया काम धूल में मिल जायगा। हाँ, यह तो बतलाओ वह लौंडा किस तरह दाँव में आया?"

पहला—"अजी, उसके आने में भला क्या कुछ करना पड़ा, वह तो हसीना के इश्क में ऐसा मस्त है कि नाम लो वहाँ ही पहुँचे। मैं बस एक पैंतरा चला, उसी में बच्चा फँस गए, मैंने हसीना की तरफ से एक चिट्ठी उसके नाम झूँठ-मूठ लिखकर एक आदमी के हाथ भिजवा दी थी, और संग एक गाड़ी भी भेज दी थी। चिट्ठी इस मजमून की थी।

काल कोठरी

सुबह ७ बजे

प्यारे अहमद!

मैं इस तरह यहाँ जाल में फँसी हूँ कि खुदा ही मालिक है। आज जिन आदमियों ने मुझे छिपाया है, सब किसी काम के लिये बाहर चले गए हैं। मैं दक्खिनवाली कोठरी में बंद हूँ। अगर यह खत किसी तरह आपके पास वक्त तक पहुँच सके, तो आइए और इस बदनसीब को छुड़ाइए, चाबी का कुछ खयाल न करना, यह ताला एक इशारे से खुलता है जो कि मुझे मालूम है, मगर मैं उसे अंदर से किसी तरह नहीं खोल सकती। बस, जल्द तशरीफ लाइए और हो सके, तो मुझे बचाइए, नहीं तो मुलाकात इस जिंदगी में तो दुश्वार है।

आपकी, वही बदनसीब—

हसीना।

बस, इस चिट्ठी के पढ़ते ही मियाँ मिट्ठू झट कपड़े पहन गाड़ी में बैठ रवाना हुए। इतना भी न सूझा कि इस आदमी से तो पूछ लें कि तुझे यह चिट्ठी कहाँ मिली। (इश्क ऐसी ही बला है कि इसमें आदमी बिलकुल अंधा हो जाता है) गाड़ी ठीक जगह पर आई, और हजरत उसी जगह ले जाए गए।"

दूसरा—"अच्छा, अब बहुत रात हो गई, चलो अपने ठिकाने पर चलें, मगर पहले इस मनीबेग की खाना-तलाशी तो ले लें, देखें इसमें कितना माल है। बक नोट सुबह तुम ही भुनाने जाना।"

पहला—"वह काम मेरे जिम्मे छोड़िए। यह कहकर उसने सारा रुपया वगैरह जो कुछ मनीबेग में था उलट दिया। देखने पर मालूम हुआ कि कुल सात गिन्नी और तीन नोट हजार के और चार रुपए नकद हैं कुल मिलाकर करीब ११०९) रुपया निकला।"

मगर हैं! यह नोट के परत में क्या निकल पड़ा? यह विजिटिंग कार्ड जिस पर साफ-साफ हरूफों में लिखा हुआ है "Mr. Etherton Martin" यह क्या? क्या इससे और उससे कोई मेल है? हो-न-हो यह उसका कोई भेदिया है, बस सो अगर यह शख्स बचकर निकल गया तो सब गुड़ गोबर हुआ। यह सब विचार सिर्फ एक सेकेंड ही में उसके हृदय में पैदा हो गए। उसने झट लपककर पंजाबी पठान की कलाई पकड़ना चाही, मगर यह भी गाफिल न थे! झट शेर की तरह झपटकर अलहिदा खड़े हुए, और इसी अर्से में इनकी पिस्तौल जो कि इनके पास थी चल पड़ी। आवाज से सब दंग हुए, और

पकड़े जाने के भय से किवाड़ को खैंच कूदते हुए वहाँ से रवाना हुए। पठान ने भी एक की कलाई झपटकर खूब जोर से पकड़ ली, मगर देखने पर मालूम हुआ कि यह शख्स होटल का मालिक था, जो कि गड़बड़ और पिस्तौल की आवाज सुनकर यहाँ चला आया था। इससे कुछ मतलब न सरा देख पठान साहब भी वहाँ से उठे और सारे कमरे को गौर से देखने लगे। मगर वहाँ उन्हें कोई चीज ऐसी नहीं दिखाई दी जिससे कि मतलब निकलता हो। उन्होंने अपने मनीबेग की रकम जो कि गड़बड़ होने की वजह से टेबिल ही पर पड़ी रह गई थी उसी में फिर भरी। चलते समय इन्होंने उस क्रिश्चियन को देखना चाहा जो कि वहाँ बेंच के नीचे कर दिया गया था और जिसको यह समझते थे कि सिवाय वाहिदखाँ के और कोई नहीं हो सकता। मगर उन्हें वहाँ न पाया, इस ढूँढ़ा-ढकोली में उन्हें कुरसी के नीचे एक गुड़ीमुड़ी किया हुआ कागज का टुकड़ा मिला। जासूसों की तो बस ऐसी ही चीजों पर नजर पड़ती है, और ठीक तो यह है कि ऐसी ही चीजों से उनके काम भी निकलते हैं। झट ताड़कर इन्होंने उस कागज को उठा लिया और पाकेट के हवाले किया। बस और कोई भेद की चीज न पाकर और ठहरना फिजूल समझकर यह वहाँ से चलते बने।

रास्ते में सैकड़ों तरह के खयाल इनके हृदय में उठ रहे थे, एक तो वाहिद की उस्तादी पर वह लट्टू हो रहा था कि शाबाश! हिंदुस्तानी भी ऐसे-ऐसे जासूस होते हैं। मुझे बिलकुल खयाल न था। फिर दूसरा खयाल यह था कि वह 'बुड्ढा' जिसका यह लोग जिक्र कर रहे थे कौन हो सकता है?

बस, इन्हीं बातों पर विचार करते हुए वह मकान को लौटे और इन्हीं खयालों में मग्न होकर चारपाई पर लेटे और सो गए। क्रिश्चियन शराबी उर्फ वाहिद भी चुपचाप इनकी सब बातें सुनता रहा और जिस समय वे लोग भागे उनके पीछे-पीछे यह भी रवाना हुआ। थोड़ी दूर तक तो उसने उनका पीछा किया, मगर ज्यों ही वे लोग गंगा के घाट पर पहुँचे इसने देखा कि एक आदमी नाव लिए तैयार इनकी बाट में खड़ा हुआ है। ज्यों ही वे वहाँ पहुँचे उसने नाव खोली और यह लोग चट उस पर बैठ एक तरफ को रवाना हुए। वाहिदखाँ भी थोड़ी देर तक तो नाव की तरफ देखते रहे, फिर कुछ सोचकर पीछे मुड़े और अपने रहने के स्थान पर पहुँचकर नींद में खर्राटे भरने लगे।

* * * *

सुबह उठते ही मि० मार्टिन ने रात की घटना पर विचार किया। चिट्ठी की याद आते ही इन्होंने उसे पाकेट से निकालकर पढ़ना शुरू किया। वह हिंदी में इस प्रकार थी।

"टालीगंज"

ता० ३१ अगस्त १९०३

प्यारे रफीउद्दीन, शम्सउद्दीन!

आपका खत देवीसिंह की मार्फत आया, हसीना बेशक मेरे यहाँ पहुँचाई गई है, और वह इस वक्त यहाँ ही है, उसकी ममानी और मैं उसे निहायत दर्जे प्यार करते हैं, और उसके मिल जाने पर जो कुछ खुशी हुई थी, वह मैं ही जानता हूँ। मगर आपके खत से यह मालूम हुआ कि आप उसे फिर बुलाना

चाहते हैं, और यह भी कहते हैं कि इसकी खबर किसी को न की जाय। मैं आपके अहसान से इतना लदा पड़ा हूँ कि अगर आप मुझसे अपना सिर काटकर दे देने को कहते तो वह भी थोड़ा था, लिहाजा इसी डोली में जो कि आपके आदमी लाए हैं मैं हसीना को रवाना करता हूँ, और हत्तल मकदूर यह खबर किसी को कानो कान न पहुँचने दूँगा।

आपका—

हमेशाँ वही जो कि आप समझे हुए हैं

P. S. इनायतुल्ला

हाँ, एक बात और है कि अगर आपका सितारा चमके तो बंदे को भूल न जाना, फकत।

खत के पढ़ने पर साहब बहादुर सोचने लगे कि यह खत हसीना के मामूँ साहब ने इन्हीं दो शख्सों को लिखा है और हसीना इन्हीं के यहाँ जरूर गई है। मगर रुपए के लालच से इन्होंने उसे फिर बदमाशों के हवाले कर दिया है—एक बात समझ में न आई कि यह मामूँ साहब कैसे हैं कि जिन्होंने अपनी भानजी को बदमाशों के हवाले करने में बिलकुल उज्र न किया और इन बदमाशों के अहसान इन पर कैसे? बस, यही विचार करते-करते इन्होंने तय किया कि आज इनके मकान पर चलकर यह सब बातें मालूम करें और इन्हीं को डरा-धमकाकर बदमाशों का पता पूछें। मगर यह बातें मिस्टर वाहिद से सलाह करने के बाद की जायँ। इधर तो यह सोच रहे थे उधर मिस्टर वाहिदखाँ भी सुबह ही को उठके अपने विचार बाँध रहे थे। उन्होंने रात की घटना से यह तो तय

कर ही लिया था कि इनका अड्डा "शिवपुर" में है और यह भी मालूम हो ही गया था कि हसीना अभी इन्हीं के कब्जे में है। हाँ, आज वह कहीं दूसरी जगह को हटा दी जायगी और शायद बहुत जल्द अड्डा भी तोड़ ही दिया जावेगा। मगर "बुड्डे" का मतलब इनकी भी समझ में नहीं आया था। खैर, यही सोच-विचारकर आज ही इन्होंने शिवपुर जाना स्थिर किया और चट गंगा किनारे जाकर डोंगी किराए की और घर लौटे। वहाँ थोड़ा खा-पीकर फिर मि० मार्टिन के मकान की राह ली; क्योंकि रात की बातों पर और अब जो करना है उस पर सलाह करना बाकी है—करीब ९ बजे दिन के यह वहाँ पहुँचे। मि० मार्टिन इनकी राह देख ही रहे थे—इनके आने पर साहब बहुत खुश हुए, वे कुर्सी पर से उठ खड़े हुए और उन्हें बैठाकर फिर बैठे और कहने लगे—

"मि० वाहिदखाँ, कल्ह ही देखो कितनी बातों का पता लग गया। यह सब आप ही की अक्लमंदी और होशियारी का नतीजा है, हम तो समझते हैं कि अब दो-एक रोज में ही इन सब बातों का भंडाफोड़ हुआ जाता है।"

इतना कहकर उन्होंने जो चिट्ठी पाई थी, वह दिखाई। इसको पढ़कर वाहिदखाँ बहुत ही खुश हुए और कहने लगे, यह अच्छी मिली, देखो कैसे-कैसे शख्स इस घटना में शामिल हैं।

मि० मार्टिन ने पूछा, "तो क्या तुम इस इनायतुल्ला के बारे में भी कुछ जानते हो ?"

वाहिद०—"जानना क्या ? इनके खत से क्या बाकी रह जाता है। मुझे यह भी मालूम है कि वारिसअली जो कि मशहूर सौदागर थे, उनकी दूसरी शादी हुए करीब ९ वर्ष के

हुए और यह इनायतुल्ला साहब इन्हीं के 'खास' साले थे।"

मि० मार्टिन—"ठीक है, तो क्या इनको काबू में करने से कुछ भेद की उम्मेद हो सकती है ?"

वाहिद०—"जरूर, क्यों नहीं, मैं अब उन लोगों की तलाश में शिवपुर जाता हूँ। नाव भाड़े कर आया हूँ, आप उधर जाइए और काबू में लाने की कोशिश कीजिए। आज शाम को फिर मिलेंगे।"

बस, इतनी सलाह कर दोनों जासूस अपने-अपने धंधे में लगे, मि० वाहिद भी चलते बने।

मि० मार्टिन साहब की रिपोर्ट—

मैंने भी एक उम्दा सूट निकाला और मुँह पर कुछ फेरकर ऊपर से एक मुड़ासा बाँध लिया। मैंने अपनी सूरत देहली के मुसलमानों की सी बनाई और एक गाड़ी किराए करके टालीगंज की तरफ रवाना हुआ। वहाँ जाकर देखा कि टालीगंज एक अच्छा खासा कस्बा है। वहाँ पर कई एक बाजार भी हैं, मगर धूल गर्द से सड़कें भरी हुई हैं मैंने वहाँ जाकर इनका नाम बताया और मकान का पता पूछा। इस काम में बहुत देरी न लगी, क्योंकि झट एक आदमी ने ले जाकर मकान के सामने खड़ा कर दिया। मैंने उस मकान को गौर से देखना शुरू किया, देखा कि मकान जैसा कि एक बीच के दर्जे के मनुष्य के रहने का होना चाहिए वैसा ही था, बीच में बड़ा फाटक, इधर-उधर दो बड़े-बड़े इकदरे और फिर दोनों तरफ दो तिवारे थे। बीच में सहन था और उसके बाद भीतर सामने की तरफ एक उम्दा दुमंजिला मकान था। इधर-उधर दोनों तरफ दीवारें थीं, जिससे मकान का अहाता बँध जाता

था। दीवार में एक तरफ जरा बड़ा-सा दर्वाजा था और उसमें शीशम की लकड़ी के किवाड़ लगे हुए थे, मैं गाड़ी पर से उतर कर सीधा मकान के अंदर चला गया। एक तरफ दो नौकर मुझे दिखाई दिए, जो कि टट्टी छिड़कने के लिए पानी का इंतजाम कर रहे थे। पूछने पर मालूम हुआ कि मालिक घर पर नहीं हैं। मगर आते ही होंगे। उन लोगों ने मुझसे अंदर बैठने को कहा। वहाँ जाकर मैं चुपचाप एक कुरसी पर बैठ गया और वहाँ की चीजों पर नजर फेकना शुरू किया। देखा कि बैठक बहुत बड़ी नहीं है। मगर उम्दा सजी हुई है, किवाड़ों पर सरकने वाले धारीदार परदे पड़े हुए हैं। कोने में एक उम्दा गोल वार्निसदार तीन पाए की मेज रक्खी हुई है और उस पर तीन या चार कलम, दो दावातें और एक 'राइटिंग पेड' रक्खा हुआ है। ऊपर एक ब्राकेट पर कई बड़ी और खूबसूरत जिल्दवाली किताबें चुनी हुई रक्खी हैं। एक किताब मेज पर भी अधखुली रक्खी है, जिससे विदित होता है कि मालिक मकान इस किताब को पढ़ते-पढ़ते छोड़ गया है। मैं चट धीरे-धीरे खसकता हुआ उसी मेज के पास जाकर कुर्सी पर बैठ गया। किताब को उठाकर देखने पर मालूम हुआ कि वह उर्दू का 'इबरत' नावेल है, ज्यों ही उसे खोला तो उसमें से एक खत टपककर जमीन पर गिर गया, उसे खोला तो इस प्रकार था—

जनाब-मन इनायतुल्ला साहब,

बाद तसलीमात के वाजे हो कि आप इस खत के देखते ही 'हसीना' को रवाना कर दीजिए, वहाँ अब उसका रहना ठीक नहीं, कल हम यहाँ से अड्डा तोड़ेंगे। कमला का कुछ

पता लगा हो तो लिखना। उस शैतान की नानी ने तमाम किया कराया खाक में मिला दिया होता! 'बुड्ढे' का भी काम अब बहुत जल्द तमाम हुआ जाता है। अशरफ को अभी बाहर न निकलने देना। एक हजार के नोट इसके साथ ही भेजता हूँ, बाकी हाल मिलने पर कहूँगा, जासूस लोग बहुत पीछा कर रहे हैं, फिलहाल बस, "मामूँ साहब" कहकर खत को खतम करता हूँ, खफा न हूजिएगा, राकिमुलहरूफ शमस-उद्दीन, अज शिवपूर, ता० ३० अगस्त १९०३।

झट मैंने इस खत को पढ़ जेब में रख लिया। थोड़ी देर में घोड़े की टाप सुनाई दी। मैं भी उस किताब को ज्यों-की-त्यों रखकर जहाँ नौकर कुरसी पर बिठा गया फिर वहीं बैठ गया था। जरा देर बाद सवार के चमड़े का जूता चढ़ाए एक खूबसूरत आदमी आकर मेरे सामने खड़ा हो गया, इसका रंग गोरा, बाल काले और दाढ़ी खसखसी थी। चेहरे से बड़े शान-शौकत का आदमी मालूम पड़ता था, मैंने भी इसे देख झुककर आदाब बजाया और फिर दोनों बैठ गये। यह शख्स बड़ी देर तक मेरे चेहरे की तरफ देखता रहा, शायद यह ताड़ना चाहता था कि मैं कोई जासूस तो नहीं हूँ, फिर बोला—"आप कहाँ से तशरीफ लाए हैं।" मैंने जवाब दिया—"साहब मैं शिवपुर से आपका नाम सुनकर आया हूँ, वहाँ मालूम हुआ था कि आपकी भानजी हसीना बहुत दिनों से गायब है, और कुछ पता नहीं चलता। मैंने यह किस तरह जाना कि हसीना आपकी भानजी है, इसका सुबूत सिर्फ इतना ही है कि मेरी "अब्दुलरज्जाक" से बड़ी दोस्ती थी, और मैं अकसर दूकान पर आकर बैठा करता था, तब मैंने उन्हें कई बार कहते सुना

था कि टालीगंज में उनके मामूँ साहब रहते हैं। मैंने कई मर्तबा चाहा कि उनसे खुद मिलूँ, मगर दूकान बंद देखता हूँ, शायद वह कहीं दूसरी जगह चले गए होंगे बेचारे अकेले तो रह ही गए हैं।" जिस समय मैं यह सब बातें कहता जाता था तो उनके चेहरे का उतार-चढ़ाव भी साथ-ही-साथ देखता जाता था। देखा कि कई मर्तबा उनका चेहरा गुस्से से सुर्ख हुआ और फिर वैसा ही हो गया। उन्होंने मुझसे पूछा—"तो क्या आप जासूस हैं?"

मैंने जवाब दिया "जी हाँ! मैं प्राइवेट डिटेक्टिव हूँ। आजकल कोई काम हाथ में न था इसलिये ही आपके पास चला आया हूँ।" उसने ढंग बदल के कहा—"आपको क्या मजाज था कि हमारी बिला इजाजत यहाँ चले आए? हमें जरूरत होती तो हम खुद ही बुला लेते। यह बड़े ताज्जुब की बात है कि किसी के घरेलू मामले में बगैर कहे-सुने आप लोग बीच में पड़ना चाहते हैं। आप तशरीफ ले जाइए, जब जरूरत होगी बुला लेंगे।" मैंने कहा—"अजी साहब आप तो बिलकुल नाराज ही हुए जाते हैं, देखिए मैंने उस मामिले में बहुत कुछ पता भी लगा लिया है।" उसने कहा—"बस जी, हम ज्यादा नहीं सुनना चाहते, आप उठते हैं कि पुलिस को बुलाना पड़ेगा।" मैंने भी यों काम न निकलते देखकर अपनी 'पिस्टल' सँभाली, और उनके शिर की तरफ निशाना करके कहा कि बस अब आप भागने का तो इरादा छोड़ दीजिए, सच बतलाइए कि हसीना को आपने जिनके हवाले किया है वह कौन है और कहाँ रहते हैं। अगर इसमें कुछ भी गड़बड़ हुई तो यह मेरा हाथ घोड़े पर पड़ा और बस फिर क्या होगा सो आप

जानते ही हैं। मैंने देखा कि इससे उसका चेहरा बिलकुल डरे हुए बच्चे का-सा मालूम होता था, मगर उसने फिर साहस करके कहा "क्या आपको—ब्रिटिश गवर्नमेंट' के राज्य में इतना मजाज है कि बिला कसूर एक आदमी का खून कर सकें। इतना कहते-कहते उसने अपने अँगरखे के दामन से कुछ निकालना चाहा, मगर मैं इस बात को ताड़ गया और झट पिस्टल एक हाथ में ले दूसरे से उनके उस हाथ में झटका दिया। फिर क्या था, खनखनाता हुआ एक छुरा जमीन पर गिर पड़ा। अब तो वह काँपने लगे और कुछ कहते नहीं बना। मैंने मौका पा झट से छुरा उठा लिया और बैठक के किवाड़ अंदर से बंद कर दिए। अब मैंने पिस्टल और छुरा दोनों एक तरफ रख लिए और उन्हें दूसरी तरफ बैठने को कहा। वह चुपचाप एक कुर्सी पर बैठ गए, तब मैंने कहना शुरू किया—"देखो इनायतुल्ला, मैं सरकारी जासूस हूँ, और मैंने शम्सउद्दीन से तुम्हारी वह चिट्ठी जिसमें तुमने लिखा है कि हसीना को हम इसी डोली में वापिस भेजते हैं दस्तयाब कर ली है और आज वह चिट्ठी भी जो कि उन्होंने तुमको लिखी है मुझे मिल गई है, इसलिये तुम्हारा यह कहना कि मैं कुछ नहीं जानता बिलकुल फिजूल है, अब या तो तुम सब बातें बतला दो वर्ना मैं तुम्हें सरकार के नाम से गिरफ्तार करता हूँ, क्योंकि हसीना के गायब होने पर जो नोटिस था उसको तुमने न मानकर उसे अपने यहाँ छिपा रक्खा और सरकार को खबर भी न दी। दूसरे तुमने उसे फिर बदमाशों के हवाले किया, इससे साफ जाहिर है कि तुम उनसे मिले हुए हो, बस इन्हीं कसूरों पर मैं तुम्हें गिरफ्तार करता हूँ।

अगर तुम अपना सारा हाल हमसे साफ-साफ कह दोगे और तुम बे कसूर होगे, तो मैं तुम्हें बचाने का वादा करता हूँ। अब जैसा तुम्हारी तबियत में आवे वैसा करो, हाल तो तुम्हें वैसे भी और ऐसे भी बताना ही पड़ेगा। मैंने देखा कि इन बातों ने उस पर कैसा रंग जमा लिया है, तब फिर हथकड़ी जेब से निकाल डाँटकर कहा "हाँ, तब फिर जल्दी कहिए।" वह मेरे पाँवों पर गिर गया और कहने लगा, "देखिए साहब मैं बिला कसूर हूँ, मुझे नाहक न फँसाइए, मैंने तो सारा काम रुपए के लालच में आनकर और उनकी बातों में पड़कर किया है। अगर आप मुझे बचाने का वादा करें तो जो आप पूछें सारा हाल कहने को मौजूद हूँ, मेरा कुछ कसूर नहीं है।"

मैंने कहा—

"बेशक यह बात तुम्हारे इस भोलेपन से जाहिर होती है, इसमें कोई शक नहीं कि उन्हीं बदमाशों के बहकाने से तुमने उनकी मदद की हो, अच्छा पहले यह बतलाओ कि तुम कौन हो और यहाँ कबसे रहते हो? हम लोग जासूस हैं जब तक राई रत्ती बात सब मालूम नहीं कर लेते, किसी का बुरा भला नहीं करते।"

उसने कहा—"तो साहब सुनिए, मैं कौन हूँ, मेरे बाप का नाम समीउल्ला था। उनकी बहुत-सी जमीन शिवपुर में थी, वहाँ वह एक नामी जमींदार थे, हमारा एक मकान भी शिवपुर में ही था। उन्होंने अपने वक्त में बहुत-सा धन कमाया। उनके मैं ही एक औलाद था, इसलिये बहुत प्यार करते थे। मैंने पढ़ने-लिखने में कुछ ध्यान नहीं दिया, सिर्फ मक्तब में थोड़ी-सी उर्दू सीख ली थी, उस वक्त तो यह ख्याल था कि

रुपया बहुत है, जन्म भर खायँगे तब भी नहीं चुकेगा और यही सोचकर बाप भी पढ़ने-लिखने में तंगी नहीं करते थे, मगर हाँ अब मालूम हुआ कि कुछ पढ़ लेते तो काम आता, खैर बाप के मरने पर मैंने जमींदारी सँभाली लेकिन थोड़े ही दिन में जी उकता गया, इसलिये सब छोड़-छाड़कर घर की मालियत खाना शुरू की। इतने में खूब यार-दोस्त जमा होने लगे, लक्ष्मी भी धीरे-धीरे घर से प्रस्थान करने लगी। एक ही बरस में बहुत कुछ चाट गए। उन दोस्तों में से यही दो रफीउद्दीन और शम्सउद्दीन भी शामिल थे। एक रोज इन्होंने मुझसे आकर कहा कि भाई साहब यहाँ तुम एक अच्छे जमींदार गिने जाते थे, अगर यहीं तुम गरीबी हालत में रहोगे तो ठीक नहीं, इसलिए गाँव में हम एक मकान तुम्हारे लिए तजवीज कर आए हैं अगर वहाँ रहो तो ठीक है। उस मकान को जिस ढंग पर बनाना चाहो बना लेना, और उसके एवज में यह मकान हमको दे दो, हम यहीं रहना पसंद करते हैं। मैंने कहा कि पहले वह मकान देख लूँ, इस पर उन्होंने यह मकान दिखला दिया और कुछ रुपया उसकी मरम्मत और तबदीली को भी दिया। मैंने सोचा कि ठीक है, अपने दोस्त के लिए एक मकान का बदलना क्या बड़ी बात है, और तिस पर यह मकान तो उससे बहुत बड़ा है और उसके बराबर बाग भी है। बस यह सोच इस मकान में मैं रहने लगा और वह उन्हें दे दिया।" मैंने इस पर उसे टोककर कहा—"तो तुमसे और वारिसअली से क्या कोई रिश्ता था ?" उसने इतना सुनने पर शर्म से गर्दन नीची कर ली और कहने लगा, "जी हाँ, वह भी सुनिए, करीब आठ-नौ साल हुए कि उनमें से एक

हजरत ने मुझसे कहा, कि लीजिए यह दो हजार रुपए आपकी नजर हैं एक काम हमारा कर दीजिए, मैंने कहा—कहो तुम्हारा क्या काम है।" तब उसने कहा कि "वारिसअली साहब की पहली बीबी फौत हो गई है और वह तीन या चार साल की लड़की छोड़ गई है, आजकल वह उस लड़की के परवरिश के लिये कोशिश कर रहे हैं, अगर उन्हें सलाह दी जाय कि वह दूसरी शादी कर लें तो उन्हें कोई उज्र न होगा, ताहम वह एक ऐसे-वैसे आदमी की लड़की के साथ तो शादी करेंहीगे नहीं, जरूर ही खानदान वगैरह की तलाश करेंगे, इसलिये इस लड़की अशरफ को आप अपनी बहन शनाख्त कराकर उन्हीं से शादी करा दें।" और वह उस लड़की अशरफ को भी अपने साथ लाया था जो कि देखने में हसीन थी और २० साल से ज्यादा नहीं मालूम पड़ती थी। पहले तो मैं इस काम से हिचका मगर फिर मैंने देखा कि मुफ्त में दो हजार रुपए हाथ आते हैं, और मेरी हालत भी उस वक्त बहुत बुरी थी। रुपए से हाथ बहुत तंग था। बुरा ही क्या है, पस सोचकर मैंने उसे अपनी बहन करार दी और उनसे शादी करार दी। हसीना उस वक्त तीन-चार साल की लड़की थी जिसको कि छोड़कर उसकी माँ मर गई थी। बस, इस तरह मुझे वारिसअली का साला और हसीना का मामूँ बनने का मौका मिला। मैं हसीना को शुरू से प्यार करता था और कई मर्तबे उसे बुला भी लिया करता था। शादी के करीब दो बरस बाद फिर वही हजरत मेरे पास आए और कहा यह पाँच सौ रुपये हैं अब अशरफ को तुम अपने यहाँ रखना अब वहाँ उसका रक्खा जाना ठीक नहीं। मैंने कहा कि ऐसा कैसे हो सकता है ? तब उसने कहा,

यह बात कौन मुश्किल है। हम एक रोज सुबह को दवा पिला देंगे, जिससे उसे दो-चार दस्त और उल्टी वगैरह हो जायँगी, बस क्लोरोफार्म या 'लखलखा' सुँघा देंगे, तुम वहाँ एक रोज पहले ही उनसे मिलने पहुँच जाना और बस यह कह देना कि यह तो हैजे से मर गई, उसी बेहोशी की हालत में तुम जल्दी-जल्दी दफन करा देना। फिर हम उसे वैसे ही उठाकर और होश में लाकर तुम्हारे पास पहुँचा देंगे। तुम उसे बाहर न निकलने देना। मैंने सोचा कि यह रकम भी मुफ्त ही हाथ चढ़ती है, कुछ न कहकर उसके सब कामों में मदद दी। चार या पाँच साल इस मुआमिले को गुजरे हुए होंगे कि खुद मियाँ वारिसअली कुछ बीमार से हुए। बीमारी रफ्ते-रफ्ते बढ़ती ही गई। जिस वक्त कि वह खूब बीमार थे; एक रोज फिर यहाँ तशरीफ लाए और कहने लगे कि मेरी मुलाकात आजकल एक लखपती के लड़के से हो गई है और उन्हीं की कोशिश से मैं वारिसअली का लड़का करार पा जाऊँगा, आप भी इसमें मेरी मदद करें। मैं इस गोरखधंधे को बिलकुल समझ नहीं सकता था। अशरफ की जोरू बनाने में तो यह समझा था कि यह शख्स उसका माल मारना चाहते हैं मगर हसीना के भाई बनने से क्या मतलब, कुछ समझ में नहीं आया, बस तीन-चार रोज के बाद सुना कि मियाँ वारिसअली मर गए और उनका लड़का जो कि बचपन से अलहिदा हो गया था वापिस आनकर रहने लगा। मैंने सोचा कि सिवाय शम्सउद्दीन के और कौन हो सकता है। इतना कहते-कहते वह जरा पानी के वास्ते कहने लगा, मैंने उसे खुद सुराही में से पानी लाकर पिलाया और सब बातें सोचने लगा—"कि अब्दुलरज्जाक और कोई नहीं वही

हजरत 'शमसउद्दीन' है और हसीना का भाई भी वह, रहा सहा माल का वारिस बनने को, और हसीना को फूलचंद से मिलाने के लिये बना था। 'बुड्ढे' का मतलब भी कुछ-कुछ समझ में आने लगा कि शायद खुद वारिसअली ही न मरे हों और इन कम्बख्तों के पाले में पड़े हुए दुख भुगत रहे हों। ठीक है, अब सब बातें समझ में आने लगीं, पानी पीकर इनायतुल्ला ने मेरी ओर देखकर कहा—"साहब थोड़ा-सा हाल और बाकी है, वह भी सुन लीजिए और फिर मुझे मेरे बचाने का वादा करके जस लीजिए।" मैंने कहा, "हाँ, हाँ, कहो, इस वक्त तक जितना तुमने कहा है उससे बच सकते हो।" उसने कहना शुरू किया—"आज करीब तीन महीने के हुए हैं कि एक औरत जो कि अपने तईं कमला बतलाती थी, हसीना को लिए हुए अचानक यहाँ आई और उसने मुझसे कहा—"एक शैतान के पाले से इसे बचा लाई हूँ, इसने मुझे आपका पता बतलाया है कि फलाँ जगह मेरे मामूँ साहब रहते हैं, इसलिये लीजिए इसे सँभालिए और मैं जाती हूँ।" यह कहकर वह औरत चल दी, मैंने हसीना को रख लिया और वह बहुत खुशी-खुशी रहने लगी। न मालूम क्या वजह थी जिससे वह दिन-दिन दुबली होती जाती थी और चेहरा जर्द पड़ता जाता था। इस तरह करीब डेढ़ महीने के रही होगी कि फिर शम्सउद्दीन मेरे पास आया और हसीना के बारे में पूछने लगा। पहले तो मैंने आलाटाली की, फिर जब सोचा कि कुछ हर्ज नहीं है, तब कह दिया। बस उसने मुझे पाँच सौ रुपए दिए और कहा कि अभी इसे यहीं रहने दो, जब हम बुलाएँ तब हमारे पास भेज देना।

हाय! उस बेचारी को क्या मालूम था कि मैं लालच में

आकर उसका अब नहीं रहा, गो वह मुझे अपना ही समझे हुए थी। बस परसों के रोज वह डोली लेकर आए और उसे ले गए, मेरे वास्ते भी एक हजार के नोट थे। मैं भी रुपयों में अंधा हो खुदा को भूल गया और हसीना को फिर उनके हवाले किया। बस मेरा तो इतना ही कसूर है, अब जैसी आपकी मर्जी हो वैसा कीजिए।

मैंने भी सोचा कि काम तो बेशक इसने बुरा किया, मगर सिर्फ रुपयों के लोभ में आकर इसने उनकी मदद की और अलावा इसके इसने ऐसी-ऐसी बातें बतलाई हैं कि जिससे सारा भेद खुल जाना संभव है और उसके पकड़ने में बड़ी मदद मिलेगी, तो फिर इसको जरूर बचाना चाहिए। मैंने कहा—"बेशक आपने मदद तो बुरे कामों में की है, मगर खैर मैं तुम्हें बिलकुल बचाने की कोशिश करूँगा, तुम किसी बात से न घबराना।" और मैं उससे उसके पहले मकान का, जहाँ कि इन बदमाशों का अड्डा होने में कोई शक न रहा था, पता पूछ कर चलता बना।

* * * *

पाठक इधर मि० मार्टिन तो यह कह रहे थे उधर कुछ मि० वाहिदखाँ का भी हाल मालूम है कि क्या हुआ? अच्छा सुनिए।

जिस समय कि मि० वाहिदखाँ मि० मार्टिन से मिलकर गंगा के किनारे नाव की टोह में आए तो देखा कि वही नाव-वाला जिससे कि आज सुबह यह ठहरा आए थे नाव लिए तैयार खड़ा हुआ है, यह झट विना कुछ सोचे-विचारे नाव पर जा चढ़े। मगर इधर तो इनका चढ़ना था, उधर एक आदमी जो कि

पहले ही से नाव में बैठा था इनके ऊपर झपटा और झट एक रूमाल सुँघाया जिससे यह बेहोश होकर गिर गये।

मल्लाह किश्ती को वहीं ले गया जहाँ उस आदमी ने बतलाया। वाहिदखाँ उसी बेहोशी हालत में वहाँ ले जाए गए। जिस समय इनकी बेहोशी दूर हुई तो इन्होंने अपने को एक छोटी-सी कोठरी में जिसमें सारियों का बड़ा दरवाजा लगा था बंद पाया। बाहर एक बड़ा ताला लटक रहा था इन्होंने सोचा कि हाय, आज तो अच्छे फँसे! यह इसी दशा में साँझ तक रहे, शाम को एक आदमी खाना लाया, मगर इन्होंने भूख न होने की वजह से खाया तो नहीं लेकिन इधर-उधर फेंक दिया ताकि यह शक न हो कि इन्होंने खाना नहीं खाया है।

चिराग जलने के थोड़ी देर बाद किवाड़ में चाबी फिरती हुई सुनाई दी, और एक शख्स अंदर इनके पास आया और दूसरे ने ताला बंदकर चाबी हाथ में ली और कोने में दीवार के सहारे बैठ गया, यह इसलिये किया गया था कि कहीं जासूस उसे मारकर गिरा न दे और खुद खुले किवाड़ों से भाग जावे, क्योंकि जासूस मुक़ाबिला पड़ने पर तीन-तीन चार-चार को भारी होते हैं। वह आदमी अंदर गया और कहने लगा "कहो मिस्टर वाहिदखाँ, तुम तो हमारा भेद लेने शिवपुर आए थे न! कहो, अब इस वक्त कहाँ हो, पकड़ो हमें, हम ही सब कामों की जड़ हैं, कहो, पकड़ते क्यों नहीं, तुम तो समझते थे कि हम निरे गधे ही हैं, बच्चों की तरह पकड़ लेंगे, इस बात का जरा खयाल न किया कि पकड़ने जाते हैं कहीं खुद ही न धोखा खा जायँ। खैर उस्ताद अब तो हमारे काबू में हो खूब नाच नचावेंगे। हाँ, अगर एक बात मानो तो बेशक रिहाई

मिल सकती है, नहीं तो कल तुम और अहमद एक ही जगह मारे जाओगे, खयाल रखना, वह बात और कुछ नहीं, यही है कि अब तुम हमारा पीछा छोड़ो और मि० मार्टिन को भी यही बात पढ़ा दो, तब बस यह ३०००) के नोट तुम्हारी भेंट हैं, नहीं मानोगे तो तुम तो हमारे कब्जे में हो ही, मार्टिन का भी ऐसा ही हाल होगा, और फिर नाहक तुम्हें अपनी-अपनी जान से हाथ धोना पड़ेगा। हम तुम्हारी जबान पर हैं, जैसा कहोगे वैसा ही करेंगे, क्योंकि जासूस लोग अपने वादे के बड़े पक्के होते हैं, अब कहिए क्या इरादा है।"

वाहिद की गुस्से और शर्म से बुरी हालत थी, उसने कहा "अरे बदमाशो! क्या तुम मुझे कैद समझते हो, मैं तो यहाँ आना ही चाहता था वैसे न आया ऐसे सही, और जासूसों को रिश्वत! वाह क्या अच्छी सूझी। तुम क्या समझते हो, मैं तो वैसे ही तुम लोगों को फाँसी पर लटकवाऊँगा, अब भला इसी में है कि तुम यहाँ से जाओ और मुझे सोने दो।" यह सब बातें तो उन्होंने अपने जासूसी जोश में आकर कह डालीं, मगर जब देखा कि यह बदमाशों का घर है, तब तो कुछ होश आया। तिस पर टटोलने पर मालूम हुआ कि पिस्तौल भी पास नहीं है जिससे कुछ बचाव कर सकें। बस यही सोच-विचारकर वाहिद ने चुप रहना ही अच्छा समझा।

वह बदमाश भी इनसे यह कहता हुआ वहाँ से चला गया, "अच्छा, अच्छा, आज नहीं कल सही, जरा नशा उतर जावे, जब कहना। नहीं तो बच्चा यह जानते ही हो, यह गंगा है और तुम हो, पता भी नहीं चलेगा।"

इस समय तो बहुत कुछ सोचने पर भी वाहिदखाँ कुछ न

सोच सके, पर फिर भी इनका दिल न टूटा, अंदर से दिल ने सहारा दिया, इन्हें वहाँ नींद आ गई और यह सो गए। थोड़ी देर बाद एकाएक यह सोते से जाग पड़े। देखा कि धीरे-धीरे इनके पाँव के तलुवे पर कुछ गुदगुदी-सी होती है। यह देखकर उठ बैठे और फिर क्या देखते हैं कि एक स्त्री पाँव में खुजला रही है, उसने इनकी तरफ देखकर चुप रहने का इशारा किया, और एक चिट्ठी फेंक कर अलहिदा हट गई, चिट्ठी इस प्रकार थी।

"तुम तो जासूस होकर भी चक्कर खा ही गए, मगर फिर भी तुम्हारी मदद के लिये यहाँ एक शख्स मौजूद है, किसी बात से घबड़ाना नहीं, मैं जब तक जिंदा हूँ तब तक तुम्हारा, अहमद का, और हसीना का कोई बाल बाँका नहीं कर सकता। एक बात जरा नई सुनाती हूँ कि हसीना का बाप अब तक तो जिंदा है, मगर कल नहीं बच सकता। यह न समझिए कि कल कोई उसका खून करेगा, बल्कि यह बात है कि बेचारा बीमारी की वजह से इतना कमजोर हो गया है कि अब आज रात ही को उसका बचना जरा मुश्किल है। खैर इस वक्त तुम्हें एक सलाह देने आई हूँ कि कल सुबह को यह शख्स यहाँ से अपना अड्डा तोड़नेवाले हैं। तुम्हें भी बेहोश करके एक गाड़ी में ले जायँगे। यहाँ के पुलिसवाले सब इनसे मिले हुए हैं, इसलिये अगर तुम्हारा कोई दोस्त जासूस हो तो उनका पता लिखकर मुझे दे दीजिए, ताकि मैं उनसे जाकर आपका हाल कहूँ और वह यहाँ पुलिस को लेकर तुम्हारी मदद को आवें, फकत (इसको पढ़ने के बाद खत के टुकड़े करके फेंक देना)

तुम्हारी एक सहायिका।"

डूबते हुए को तिनके का ही सहारा बहुत होता है। इनको इस बात से बहुत उम्मेद बँधी और जेब से पेंसिल, कागज निकालकर जासूसी लालटेन की मदद से लिखा।

Dear Mr. Martin,

Come sharp to my help at 3-30 with police. Am entrapped.

Yours—Wahid.

उधर मि० मार्टिन जो-जो भेद मालूम कर लाए थे, उनको बार-बार हृदय में विचार रहे थे, और यही सोच रहे थे कि बस ज्यों ही मि० वाहिद आया त्यों ही सारा हाल कहा और फिर कल ही बदमाशों को पकड़ने की कोशिश करेंगे।

इसी विचार में ६ बजे से आठ बजे तक मि० मार्टिन बराबर उनके आने का इंतिजार करते रहे, फिर सोचा कि शायद खाना खाने में देर लग गई होगी इससे जरा देर और बाट देखी। नौ बजे की तोप भी चल गई, तब तो चित्त चंचल हुआ। और ज्यों-ज्यों देरी होती गई उनकी घबड़ाहट बढ़ती गई। दस बज जाने के बाद मि० मार्टिन लेटने के लिये पलँग पर गए, मगर उनसे पलँग पर लेटे न रहा गया। क्योंकि एक तो जासूस, दूसरे उनके मित्र जासूस का पता नहीं, बस सोचा कि जरूर ही कुछ मामिला टेढ़ा पेश आया है। सुबह वह कहते थे कि एक बदमाश की टोह में शिवपुर जाते हैं, जरूर हो न हो यह वहाँ ही पकड़ लिए गए, तब फिर मैं क्या इसी तरह पड़ा रहूँगा, बड़े शर्म की बात है। इसी तरह अपने आपको लानत-मलामत कर वे वहाँ से चलने को तैयार हुए, सिर पर नाइटकेप रखी और हाथ में बेंत लेकर उतरने को ही थे कि

इतने ही में घंटी बजी। मालूम हुआ कि कोई मिलने आया है, झट सोच बैठे कि हो न हो मि० वाहिद ही है, नहीं तो उन्होंने कुछ खबर ही भेजी होती कि मैं नहीं आ सकता, बस घंटी के जवाब में उन्होंने उसको आने को कहा। दो ही मिनट में उनके सामने एक स्त्री हाथ में गुड़ीमुड़ी किया हुआ एक कागज लेकर हाजिर हुई। मि० मार्टिन ने पढ़कर दिल में कहा कि देखो वही बात हुई, फिर जरा सोचकर स्त्री की तरफ एक तेज निगाह से देखा, क्योंकि जासूस हैं बहुत झाड़ फूँक के पैर रखते हैं, कहीं बदमाशों ने पैंतरा ही न चला हो (जैसा कि अहमद के साथ कर चुके थे) मगर उस स्त्री के चेहरे पर कुछ ऐसे चिह्न दिखाई नहीं दिए जिससे कुछ शक हो। स्त्री ने भी ताड़ लिया कि मि० मार्टिन के दिल में कुछ शक रह गया है बस फौरन् बोली, "आप मुझ पर बिलकुल शक न कीजिए, मैं बेशक नौकर तो बदमाशों की हूँ, मगर दिल से आपका भला चाहनेवाली हूँ, मैं आपके पास खास उन्हीं की लिखी हुई चिट्ठी लाई हूँ, आप उनके दस्तखत पहचान सकते हैं, गोकि उन्होंने इसको बड़ी घबराहट में लिखा है, और मैं आपको अकेले तो अपने साथ ले जाना ही नहीं चाहती हूँ कि जिससे आप डरें, मैं तो आपको उनके बचाने की खबर देने आई हूँ, अब जैसा आप चाहें वैसा करें।"

मि० मार्टिन ने कहा—'नहीं! कुछ शक की बात नहीं है, मैं तुम्हारा बहुत अहसानमंद हूँ कि तुमने ऐसी खबर हमको दी, मगर एक बात समझ में नहीं आई कि तुम ऐसी दयालु होकर बदमाशों के यहाँ नौकर क्यों हो, और कुछ हर्ज न हो तो यह भी बतलाओ कि मि० वाहिद उनके पंजे में

कैसे फँसे ?" औरत ने जवाब दिया, "मैं यह बात तो अभी नहीं बताना चाहती कि मैं कौन हूँ और किस प्रयोजन से वहाँ नौकर हूँ, क्योंकि मेरा हाल ऐसा-वैसा नहीं जरा टेढ़ा है, बाद को मालूम हो ही जायगा। हाँ, मि० वाहिद किस तरह फँसे इस बात के बताने में कुछ हर्ज नहीं है। सुनिए, वह एक बड़े धोखे में फँसे। कल होटल में जिस वक्त आप लोगों से मुठभेड़ हुई थी वह तो मालूम हो ही गया था कि आप और वाहिद उन लोगों के पकड़ने पर उतारू हो गए हैं, तो बस सोच लेना था कि वह भी अब चुपचाप नहीं बैठे रहेंगे। उनके भेदिये ने भी इधर-उधर से खबर लाना शुरू की, करीब सात बजे एक आदमी यह खबर लेकर पहुँचा कि मि० वाहिद आज सुबह छः बजे गंगा किनारे किश्ती किराए करने की गरज से आए थे और दस बजे शिवपुर जाने के लिये एक से भाड़ा भी तय कर गए हैं, बस मालूम हो गया कि वह उन्हीं लोगों की फिराक में शिवपुर आ रहे हैं। इन लोगों ने क्या काम किया कि किश्तीवाले को डबल किराया देकर मिला लिया और कहा कि "उनसे कुछ मत कहना और एक आदमी हमारा नाव में छिपा रहने देना, नाव को इसी जगह लगा रहने दो, जिस वक्त वह यहाँ आवें नाव को किनारे लगा उन्हें बैठाल लेना।" नाववाले को भला क्या उज्र, उन्हें तो किराए से मतलब; और जब दूना मिलता है तो उनका क्या हर्ज, बस नाव नियत ठिकाने पर लगा दी गई और जब मि० वाहिद बैठ गए और नाव चल दी तब उस छिपे हुए आदमी ने झट 'क्लोरोफार्म' वाला रूमाल इनकी नाक से रगड़ दिया और जब वह बेहोश हो गए फिर क्या था जैसे चाहा पकड़ ले गए।

मिस्टर मार्टिन चिल्ला उठे—"ठीक है, ठीक है, बहुत चालबाजी से पकड़ा, मगर क्या ठीक इसी वक्त यह लोग जगह छोड़ेंगे।" स्त्री ने कहा—"इसमें आप रत्ती भर गलती न समझें, उनको मैंने खुद यह सलाह करते सुना है कि वह ३॥ बजे अड्डा तोड़ेंगे और उसी समय वाहिदखाँ को भी बेहोश करके ले जायँगे।"

"अच्छा-अच्छा कल अड्डा तोड़ने का हाल तो मैंने भी सुना था, ठीक है, आपने बड़ा काम किया, तब आप यहाँ ही ठहरें मैं कोतवाली जाकर सब ठीक किए आता हूँ। फिर उस वक्त साथ ही साथ चलेंगे।"

स्त्री ने कहा "जी नहीं! ऐसा नहीं होगा, मैं यहाँ नहीं ठहर सकती। मेरे बाद कोई और ही घटना हो जाय तब? आप जहाँ जी चाहे जायँ, मगर ३॥ बजे से पहले आकर वहीं नियत स्थान पर मिलिए, नहीं तो फिर आपको इन लोगों का पता मिलना कठिन होगा और शायद एकआध की जान भी जावे तो कोई अचरज की बात नहीं।" बस यह कहकर वह उठी और चलती बनी। मैं भी वहाँ से लपका और पास ही के थाने पर जाकर २५ सिपाहियों को विना वर्दी पहने तीन बजे मकान पर आने की 'ड्यूटी' बोल आया। फिर मैं सारी बातें सोचता हुआ मकान को लौटा और कपड़े बदलकर लेटने को ही था कि मेज पर मोटे-मोटे हरूफों से लिखा हुआ कागज 'पेपर वेट' के नीचे दबा पाया, चट उठाया तो यह लिखा था—

मैंने तुम्हारी और स्त्री की बातें सब सुन लीं, अब सब करना फजूल है, अपनी जान सलामत चाहते हो तो घर पर बैठे आराम करो और नहीं तो बेमौत मरे।

तुम्हारा—एक दुश्मन।

मि० मार्टिन टेबिल पर यह देखकर बड़े अचकचाए और सन्नाटे में पड़ गए। जब मकान के अंदर लोग ऐसे-ऐसे कागज धर जाते हैं, तो रात को आकर मारने में क्या देर लगेगी, इस डर और शक से उनका सिर घूमने लगा, एक तो जान का पूरा-पूरा खौफ, फिर बना-बनाया काम मिट्टी में मिला जाता है, उधर अगर चूके तो मियाँ वाहिद का कुछ पता नहीं लगेगा, हँसी भी खूब ही होगी। मगर था तो जासूस, सब डर दूर भाग गया और वह इस फिक्र में लगा कि यह आदमी यहाँ क्योंकर आया ! ठीक है, जिस समय वह स्त्री आई थी किवाड़ खोले गए थे और फिर जब तक वह यहाँ रही खुले ही रहे, जिस समय यह बाहर चले किवाड़ बंद कर बाहर से ताला लगा ही गए थे, तो बस जो शख्स अंदर आया वह अंदर ही रहा, उसे बाहर जाने का मौका अभी नहीं मिला, तो जरूर जिसने यह कागज यहाँ रक्खा है वह शख्स बाहर नहीं गया और यहीं है। उन्होंने किवाड़ फिर बंद किए और गुप्त लालटेन लेकर तलाशी लेना शुरू की, मगर कहीं कोई निशान नहीं पाया। अलमारी के पिछाड़ी, परदों के पिछाड़ी सब जगह देखा मगर कहीं पता नहीं, आखिर लाचार हो टेबिल के पास जो कुर्सी पड़ी थी उसे सरका कर बैठ गया। उनका सिर चक्कर खाने लगा, बदन थर-थर काँपने लगा। वह यही सोचने लगे कि हाय ! यह सब बना-बनाया काम मिट्टी में मिला जाता है ! मगर जब उन्होंने पैर फैलाए तो टेबिल के नीचे किसी चीज से पैर टकराया, सोचा कि "वेस्ट पेपर वास्केट" होगी, मगर फिर कुछ शक पड़ा, उन्होंने लालटेन लेकर मेज के नीचे देखा। मेज के नीचे देखकर उसे बड़ी हँसी आई, देखा कि

जिनकी तलाश थी वे हजरत तो नीचे ही बैठे हैं। जब हजरत देख लिए गए तब आप भागने के ढंग करने लगे और जब कुछ बस न चला तो आप मि० मार्टिन से चिपट ही गए, खूब कुश्तमकुश्ता हुई, आखिर उन्होंने उसे पटक दिया और छाती के ऊपर चढ़ बैठे, और पिस्तौल उसके सामने कर पूछा कि "सच सच कहो कि तुम कौन हो?"

उसने भी उसी ढंग से जवाब दिया कि "मैं हूँ तुम्हारा दुश्मन रफीउद्दीन" बस उन्होंने ज्यादा वक्त खराब करना ठीक न समझा और झट एक जोड़ी बेड़ी हथकड़ी निकाल उसके डाल ही दी फिर घंटी बजा अपने नौकर को बुलाया और कुछ पुलिसमैनों को बुलाकर उनके हवाले किया। एक कंटक तो कटा और दूसरे के भी पूर्ण होने की आशा हुई।

* * * *

जब कि इधर यह मामला हो रहा था उधर अहमद को बदमाश लोग तंग कर रहे थे, मगर तीन बजे अड्डा तोड़ना है कुछ देर तो आराम कर लें, यही विचारकर कुछ समय के लिये वे लोग वहाँ से चले गए। आज की रात बड़ी भयंकर है, ग्यारह बजे से चारों तरफ बादल घिर आए हैं और जिधर देखो उधर अँधेरा-ही-अँधेरा है, हाथ को हाथ नहीं सूझता, तिस पर रात के एक बजे के समय कुछ बूँदें भी पड़ने लगीं। अब तो चारों तरफ सन्नाटा है, आदमी तुम्हारे पास भी खड़ा हो तब भी तुम यह नहीं समझ सकते कि हमारे आसपास में कोई आदमी है! इसी समय में एक वृद्ध मनुष्य अपनी मृत्युशय्या पर पड़ा मौत के घंटे गिन रहा है, परंतु उसके चेहरे के भाव से विदित होता है कि उसके

हृदय में शांति नहीं ? मालूम तो ऐसा ही पड़ता है, परंतु विचार करने से मालूम होता है कि यह बात कहाँ तक संभव है, एक तो यह मनुष्य कैद की हालत में मालूम पड़ता है, दूसरे मृत्यु ने आ घेरा है, देखें कहाँ तक इसके मनोरथ सफल होते हैं, नहीं ! नहीं !! वह देखिए कोठरी के अंदर ही से वह दीवार के पास का तख्ता हटा और उसमें से एक स्त्री और एक लड़की आती दिखाई दी। हैं ! तो क्या इसमें कोई गुप्त रास्ता भी है ? जरूर, नहीं तो इनका यहाँ आना कैसे होता। इतने में स्त्री आगे बढ़ी और कहा "पिताजी ! आपकी हसीना आ गई है।" वृद्ध मनुष्य को अब बातें करने की शक्ति न थी, केवल आँख उस तरफ फेरी। परंतु उधर उस लड़की का क्या हाल हुआ ? वह भी सुनिए—ज्यों ही उसने दूर से इस वृद्ध की सूरत देखी झट लपककर पाँवों पर गिर पड़ी और बेहोश हो गई, रोने या बोलने दोनों में से एक की ताकत भी न थी। आखिर स्त्री एक रूमाल सुँघाकर उसे होश में लाई और धीरे से कहा—

"हसीना ! यह समय इस तरह खोने का नहीं है, हम लोग बहुत बुरी अवस्था में हैं, अपने पिता से आखिरी बिदाई लो और चलो, तुम इन दुष्टों की वजह से अब तक अपने पिता को न देख सकी। और देखा भी तो क्या फायदा। इन्हीं बदमाशों की वजह से तुम पर इतनी-इतनी आपदाएँ पड़ीं और इनको भी यह दिन देखना पड़ा।"

इतने में वृद्ध ने धीरे-धीरे करके अपना हाथ हसीना के सिर पर फेरा और फिर दूसरी स्त्री की तरफ इशारा किया। हसीना ने कहा—"पिताजी ! मैंने बहुत यत्न किया मगर उस

समय दुष्ट उनकी कोठरी में बैठे हुए थे, इसलिये मैं किसी तरह न ला सकी, खैर अब फिर जाती हूँ।" यह कहकर वह वहाँ से चल दी और जरा-सी देर में फिर एक जवान लड़के को लिए आन पहुँची। उस लड़के को देखते ही वृद्ध के चेहरे पर कुछ हँसी की रेखा-सी दिखाई दी, परंतु बहुत देर तक नहीं। उसकी ताकत ने बिलकुल जवाब दे दिया था। उसने कुछ अपने तकिए के नीचे से निकालना चाहा मगर हाथ वहीं काँप कर रह गया, खैर इशारे से उसने बतला दिया और उस लड़के ने उस जगह से एक सोने की डिबिया निकाल ली। इस समय वृद्ध की भी आँखें ऊपर चढ़ने लगीं और एक ही मिनट में प्राणपखेरू उड़ गए।

बस इस स्त्री ने अब इन दोनों को बाहर चलने को कहा। यह बिलकुल मूर्ति की भाँति वहाँ खड़े थे, और कुछ बोलते-चालते न थे। आखिर वह इन्हें जबरदस्ती जरा ढकेल-कर दर्वाजे के पास तक ले गई और फिर चलने को कहा। मगर दोनों इस भाँति आगे बढ़ते थे, मानों निद्रा में स्वप्न देख रहे हों। बेशक बात भी यही थी। यह लड़की और कोई नहीं हसीना ही थी, और यह लड़का भी अहमद ही था। हसीना अपनी दृष्टि पर भरोसा नहीं करती थी, सोचती थी कि जिस पिता को मरे हुए कई वर्ष हुए, उनसे आज इस प्रकार भेंट होना क्या संभव है। सोचा कि ठीक है, यह भेंट मेस्मेरिजम के जरिए से कराई गई होगी। मैंने कई बार अखबारों में पढ़ा है कि मरे हुए मनुष्यों से भेंट होने की भी तरकीब है, हो न हो उसी तरह की यह भी कोई बात है, मगर क्या कोई मरा हुआ आदमी सिर पर हाथ फेर सकता है? या वह सोने

की डिबिया जो अभी दी है दे सकता है ? कुछ समझ में नहीं आता मामला क्या है, इधर यह मियाँ अहमद कहाँ से टपक पड़े हाँ ठीक है अब समझ में आया। यह स्त्री कोई जादूगरनी है और इसने मंत्र-बल से यह सब बातें की हैं। मगर हैं, हैं, यह कैसे हो सकता है, यह तो वही कमला है जिसने मुझे फूलचंद के कब्जे से छुड़ाया था और अपने को मेरी बहन बना चुकी है, यह सब गोरखधंधा समझ में नहीं आता।

उधर अहमद मियाँ भी इसी उधेड़-बुन में पड़े थे। जब से यह लोग मुझे धोखा देकर लाए हैं, नाना प्रकार के कष्ट दे रहे हैं। यह स्त्री कौन है, जिसने मेरे साथ ऐसा उपकार किया ? मुझे हसीना की सूरत यहाँ देखने की उम्मेद न थी, तो क्या मैंने हसीना को देखा, हैं, देखा ? और यह पास कौन खड़ी है ? फिर इस वृद्ध मनुष्य का मामिला और भी पेंचीदा है, इसने यह सोने की डिबिया काहे को दी, और यह मनुष्य कौन हो सकता है ? मालूम होता है कि यह हसीना के पिता हैं, मगर यह कैसे ठीक हो, उनको मरे तो आज कई वर्ष हुए। मालूम होता है कि यह सब बातें मैं स्वप्न में देखता हूँ। सारा स्वप्न है, यह कहकर वह मुँह पर हाथ फेरने लगा। स्त्री ने भी यह कहा—"कुछ बात नहीं है, आज ही संध्या तक तुम्हें सारा भेद खुल जायगा, और तब तुम्हें यह सब बातें काँच में प्रतिबिम्ब की तरह साफ-साफ मालूम होने लगेंगी। अब इस समय कुछ विचार न करो, अपनी-अपनी कोठरी में जाओ, आज ही हम सब लोगों की रिहाई है और आज ही यह सब दुष्ट पकड़े जायँगे।"

इतना कहने पर सब लोग अलहिदा-अलहिदा अपनी-अपनी कोठरियों में जाकर बैठ गए।

* * *

"रात इस प्रकार भयंकर है गंगा को पार करना है और तिसमें बदमाशों को पकड़ना है देखें यह सब बातें किस प्रकार होती हैं, परंतु नहीं बेकसूरों का परमेश्वर सहायक होता है। और पापियों का एक-न-एक दिन नाश होता ही है, तब जरूर आज परमेश्वर ही सब विघ्नों को काट हमारी सहायता करेगा।" इस प्रकार के विचार मि० मार्टिन मन-ही-मन में कर रहे थे, बाकी रात मार्टिन ने परमेश्वर की प्रार्थना में बिताई। जिस समय कि घड़ी में २॥ बजे यह पलँग से उठे और कुछ पाऊडर-सा लगा कर अपने गोरे चेहरे को जरा साँवला किया, फिर अगाड़ी के बालों को सँभालकर, पैरों में फुल रेशमी स्टाकिंग्स चढ़ाए, बाद इसके एक पतली रेशमी किनारे की धोती पहन ऊपर से एक बढ़िया कलफदार शर्ट डाटी और फिर आइने में चेहरा देखने लगे, इसके बाद एक फूलदार ऊनी चादरा गले में डाला और फुल बूट पैरों में चढ़ाया। बाहर निकलकर देखा तो मालूम हुआ कि मेंह धीमी-धीमी बूँदों से बरस रहा है। रात की अँधियारी बिलकुल नहीं घटी है, खैर इन्होंने कुछ परवा न कर एक ५ फायर का पिस्तौल जेब में रख लिया और एक जासूसी लालटेन हाथ में ले छतरी लगा पुलिस-स्टेन की राह ली। यह ठीक ३ बजने में दस मिनट थे जब वहाँ पहुँचे देखा तो पचीसों आदमी सब तरह से लैस हुए बैठे हैं, एक का ढंग दूसरे से नहीं मिलता है, इस समय इन्हें देख कौन कह सकता है कि यह शख्स पुलिस के आदमी हैं।

मि० मार्टिन इनका ढंग देखकर बहुत खुश हुए और एक-एक पुलिस का डंडा उनको छिपाने को कहा और एक-एक जासूसी लालटेन भी इनके हाथ में दी और पूछा कि इनके सहारे तुम अँधेरे में देख भी सकते हो कि नहीं। सबने कहा कि हाँ हम बखूबी देख सकते हैं। तब पूछा कि अच्छा तुम एक दूसरे की लालटेन भी देख सकते हो तब उन्होंने कहा—"लालटेन तो नहीं देख सकते हम अपनी-अपनी लालटेन की मदद से सबको देख सकते हैं।" बस इन सब बातों के पूछने के बाद बतलाई हुई जगह पर इन सबको चलने को हुक्म दिया और यह भी कहा कि कुछ मनुष्य मकान के इर्द-गिर्द की भी खबर रक्खें, बस इनको यों रवाना कर खुद भी अपनी लालटेन की मदद से सड़क देखते हुए गंगा की तरफ रवाना हुए।

हा! इस समय पतितपावनी गंगाजी भी कैसी भयंकर मालूम होती हैं, इस समय वहाँ डोंगियों का पता, निशान भी न था अब तो यह बड़े घबड़ाए। वक्त भी ठीक ही रह गया है, जरा देर हुई तो सारा खेल बिगड़ जायगा। यह घबराए हुए इधर-उधर फिरने लगे, मगर डोंगी का कहीं पता नहीं। इन्होंने लालटेन से देखा कि यहाँ से बहुत दूर एक चिराग टिमटिमा रहा है, बस उसी पर आसरा लगाए उस तरफ बढ़े। सारी आशा अब उसी पर निर्भर है। यदि वह डोंगी या नाव न निकली, तब फिर? इसी सोच-विचार में आगे बढ़े। किस्मत से वह एक बड़ी नाव ही थी और उसमें ही चिराग जल रहा था, आदमी भी बैठे-बैठे कुछ ताश-सा खेल रहे थे। इन्होंने पूछा—"क्या नाव भाड़े करोगे?" उन्होंने कहा—"नहीं साहब अभी तो आए ही हैं, कुछ देर आराम तो कर लें।" बहुत समझाने

और किराया भी दूना-चौगुना देने पर वह लोग राजी हुए। यह गंगा के उस पार पहुँचे। घड़ी में देखने से मालूम हुआ कि अभी ३॥ बजने में बारह मिनट बाकी हैं। झट यह लपके हुए उस स्त्री के बताए पते पर पहुँचे। वहाँ मौका देखने पर इन्होंने एक पुल तलाश किया और वहाँ ही जा जमे। धीरे-धीरे सीटी बजाई, उसका जवाब इन्हें हर तरफ से मिला, मालूम हो गया कि चारों तरफ सब आदमी तैयार हैं। थोड़ी देर बाद धीरे-धीरे इन्हें घोड़ों की टाप सुनाई दी। यह देखकर पुल की आड़ में छिप गए। जरा देर बाद एक घोड़ा और उसके पीछे दो गाड़ी आती हुई नजर पड़ीं, अंदाज से सोचा कि हो न हो यह घोड़े पर जो शख्स बैठा हुआ है वही बदमाशों का अफसर है। यह कुछ नहीं बोले और उसे चुपचाप चले जाने दिया। अँधेरा खूब था इसलिए उन लोगों ने गाड़ियों की खिड़कियाँ बंद करने की भी जरूरत नहीं समझी। इन्होंने जासूसी लालटेन से देखा तो मालूम हुआ कि पहली गाड़ी में सिर्फ दो औरतें हैं, जिसमें एक तो लड़की-सी मालूम होती है वह दूसरी की गोद में पड़ी हुई है, मालूम होता है शायद बेहोश हो, दूसरी गाड़ी में चार शख्स दिखाई दिए। दो इधर-उधर हाथ में मोटे-मोटे डंडे लिए हुए बैठे थे और बाकी दो पड़े हुए थे। यह भी शायद बेहोश हों। बस इन्होंने समझ लिया कि अगाड़ी की गाड़ी में हसीना और दूसरी वही स्त्री है जो कि मेरे पास खबर लेकर आई थी और एक दूसरी गाड़ी में बेहोश वाहिद व अहमद होंगे, और दूसरे दो बदमाशों के कोई नौकर होंगे। अब इन्होंने सोचा कि किस पैंतरे से काम निकालें। झट गुपचुप यह आगे बढ़े और घोड़ों के पास जाकर एकदम जोर से बोले—"आदाब

अर्ज है।" जो मनुष्य कि घोड़े पर बैठा हुआ था एकदम चौंका और डरकर काँपने लगा, मगर फिर भी तनी आवाज में कहा "कौन है"। जवाब में इन्होंने कहा "हम हैं! तुम्हारे अब्बदु जान, कहो पहचाना या नहीं।" वह दंग था कि कौन ऐसा बेढंगा है जो यह अल्फाज मुझे कह रहा है। झट कमर से छुरा निकाल लिया और कहने लगा "बताता है कि मरना चाहता है, बोल! देखा यह क्या चीज है?" इन्होंने खूब हँस कर कहा "अ-ह-ह-ह-ह-ह-भई वाह, क्या बाप पर भी छुरी चलाते हो, नहीं-नहीं ऐसा कभी न करना! देखो बेटा! बच्चों का यह फर्ज है कि बाप की खिदमत किया करें, न कि छुरी निकालकर धमकावें, (पुचकारकर) आओ अपने अब्बा से इस बात की माफी माँगो।"

सवार के होश-हवास जाते रहे। वह सोचने लगा कि ऐसा कौन ढीठ है कि सुनता ही नहीं और ऐसे कलाम बकता चला जाता है। इतने में गाड़ी में से एक औरत उतरकर घोड़ेवाले के पास आई और कहने लगी—"सरकार! हमारा तो दम निकला, यह देखो सामने कौन भूत सा खड़ा है, मेरी तरफ देखकर दाँत निकालता है।" इस बात ने उसे और भी घबड़ा दिया, अँधेरा ऐसा था कि सूरत साफ-साफ किसी तरह से दिखलाई नहीं देती थी। बस यह रास्ता रोक घोड़े के अगाड़ी जा डटे और एक खाली फैर बंदूक का किया। जानवर इस तरह एकाएक बंदूक की आवाज सुनकर और अपने सामने कोई चीज देखकर डरा और घबराहट से उछलने-कूदने लगा। सवार ने बहुत रोकना चाहा, मगर वह न रुका और उसे लेकर भागा। सड़क तो इधर घिर ही चुकी थी, वह इन्हें बाजू की

तरफ झाड़ियों में ले घुसा और ऊँची-नीची जमीन होने से एक गड्ढे में जाकर गिर पड़ा। सवार भय के मारे बिलकुल घोड़े से चिपट गया था, छुरा भी हाथ ही में लिए था, बस जिस वक्त कि घोड़ा गिरा यह भी गड्ढे में जा गिरा। हाथ में जो छुरा लिए हुए था उसी से उसकी टाँग में बहुत बड़ा जख्म हो गया। यह चोट की दर्द के मारे चीखने और कराहने लगा। दोनों आदमी जो गाड़ी में बैठे थे इस बंदूक की आवाज और मालिक का चीखना सुनकर चट (मामला क्या है) देखने को उतर आए, वहाँ आकर देखा तो मालिक और घोड़ा तो कहीं नहीं है; एक आदमी सड़क पर खड़ा है। उन्होंने डपटकर उससे पूछा "तू कौन ?" उसने फिर भी वही जवाब दिया—"तुम्हारा बाप" इस बेतुकेपन के जवाब से वह भी दंग थे, झट हाथाबाहीं होने लगी। इधर वाहिदखाँ भी नशे में तो थे ही नहीं; झट गाड़ी से कूद आये और दूसरे को सम्हाला। थोड़ी देर बाद वे दोनों आदमी वहाँ से भागे, पहला (सवार) गिरने की चोट से अधमरा हो ही रहा था। दोनों जासूस अब उसके पास पहुँचे। इन्हें देखकर उसने कहा—"हाय ! हाय !! धोका हुआ, जासूस हैं" वाहिदखाँ ने भी हँसकर कहा "कहो ठीक निकला, हैं तुम्हारे बाप कि नहीं ?" यह बड़े ताज्जुब में था कि मैं तो वाहिद को बेहोश करके लाया था, यह होश में किस तरह आया। यहाँ हमारे जासूस लोगों ने समझा कि वह दोनों शख्स जरूर मदद लाने को गए होंगे। बस, इन्होंने सीटी बजाई और देखते-देखते चारों तरफ से २०-२५ आदमी आन कर खड़े हो गए। जासूसों ने उस सवार को वहाँ से उठाकर लाने को कहा और हसीना व अहमद को होश में लाने की

तरकीबें करने लगे, मगर दोनों में से एक भी होश में न आए। खैर, इन्होंने हसीना व अहमद को एक गाड़ी में और उस सवार को दूसरी में रखने को कहा, और चार-पाँच आदमी उनकी निगरानी को छोड़ बाकी सब अगाड़ी की तरफ बढ़े। थोड़ी दूर जाकर देखा कि तीन-चार बैलगाड़ियाँ सामान लदी खड़ी हैं, मगर हाँकनेवाला या निगहबानी करनेवाला कोई शख्स भी नहीं। इन्होंने सोचा कि मकान में हथियार वगैरह लेने को सब लोग गए होंगे, मगर इनको बाकी के सिपाही रास्ते में मिले और कहने लगे कि मकान खाली पड़ा है, कोई वहाँ नहीं है, सब लोग भाग गए। ठीक है, भागें नहीं तो करें क्या, नौकरी के लिये प्राण कौन दे! और जिस समय उन्होंने देखा कि मालिक ही खुद फँस गए हैं और जासूस जिसे पकड़ेंगे सजा दिलाए बगैर छोड़े होंगे नहीं, तो बस फिर जान-बूझकर आग में कौन कूदे?

हमारे जासूसों ने भी ज्यादा ढूँढ़-ढाँढ़ करना बेफायदा समझ अपना रास्ता लिया, चार आदमियों की निगरानी में सवार को तो हवालाती अस्पताल में भेजा और हसीना व अहमद लाकर मि० मार्टिन के यहाँ रक्खे गए। वह औरत भी खुशी-खुशी इनके साथ आई।

So passed the anxious nighi away
Welcome was the peep of day.

* * *

दूसरे रोज करीब चार बजे शाम को हसीना और अहमद होश में आए, एक दूसरे को पास देखकर जो खुशी दोनों को हुई वह वही जानते होंगे। उस औरत ने इनसे सारा हाल

रास्ते का कहा और यह भी कहा कि रफीउद्दीन उर्फ मि० मॉरगन और शम्सउद्दीन उर्फ अब्दुलरज़्ज़ाक पकड़कर हिरासत में रक्खे गए। अगले सोमवार को उनकी पेशी का दिन है। सारे नगर में हसीना और अहमद के मिल जाने की खबर फैल गई और जहाँ देखो वहाँ ही इन दोनों जासूसों की तारीफ हो रही है। लोग इस विचार में मग्न हैं कि अगले सोमवार को बड़े-बड़े रहस्य खुलेंगे। हमारे जासूसों को भी कम खुशी नहीं है, दोनों ने मिलकर खूब खुशी मनाई और दो रोज तक मि० मार्टिन ने वाहिदखाँ को घर नहीं जाने दिया। बात-ही-बात में जिक्र आया कि वाहिदखाँ भी तो अहमद और हसीना के माफिक बेहोश किए गए थे, फिर एकदम यह कैसे वहाँ होश में आ गए। हमारे पाठकगण भी इस बात के जानने की चिंता में होंगे। मि० वाहिदखाँ ने कहा कि जिस समय से इस औरत ने मुझे इत्तिला दी कि करीब ३॥ बजे के यह लोग यहाँ से अड्डा तोड़ेंगे, तब ही से मैं होशियार होकर लेटा रहा, करीब २॥ बजे के वही शख्स जो कि रात में मुझसे वाद-विवाद कर गया था, अंदर आता हुआ मालूम पड़ा, मैं भी उसी तरह पड़ा रहा और उसे यही मालूम हुआ कि मैं सोता हूँ, उसने मुझे जगाने की जरा भी कोशिश न की। मैं तो यह बात पहले ही से जाने हुए था कि वह मुझे बेहोश करने आया होगा, इसलिये मैंने साँस मुँह की तरफ से लेना और नाक की राह निकालना शुरू किया। कुछ देर साँस बंद भी करना पड़ा और झट एक मिनट के बाद मैंने हाथ-पैर इस तरह से ढीले कर दिए कि जिससे उसे कामिल यकीन हो गया कि मैं बेहोश हूँ। बस, वह आदमी भी वहाँ से चलता बना, मैं भी

उसी तरह पड़ा रहा और बेहोश ही समझा जाकर गाड़ी पर भी चढ़ाया गया। मैं भी अपने दिल में सोच ही रहा था कि अगर मि० मार्टिन न आए, तो बचने की क्या सूरत है। इतने ही में आप मिले और फिर जो हुआ सो सब मालूम ही है।

चौथा परिच्छेद

Forgive me, Valentine if hearty sorrow
Be a sufficient ransom for offence,
I tender it here; I do as truly suffer
As e'er I did not offend.

चिट्ठी के पढ़ने से जो हाल फूलचंद का हुआ, उसे पाठक स्वयं ही विचार सकते हैं—सब जगह से कोरे जवाब मिल ही चुके थे, बैंक से उसे नाहीं हो चुकी थी, मनीबेग जा ही चुका था, अब केवल एक रही-सही आशा थी, वह भी अपूर्ण हुई। सोचा था, कि लगेज के मिलने पर बहुत कुछ सुबूत देने का सहारा हो जायगा, परंतु जब परमेश्वर की मरजी ही नहीं कि इसको किसी प्रकार की सहायता मिले, तब फिर कितना ही यत्न क्यों न किया जाय, सब निष्फल होना ही चाहिए। मुँह से लगाया हुआ पानी का ग्लास किस प्रकार छीन लिया गया—एक-दो घूँट पीना तो दूसरी बात, स्वाद भी न चख सके। बस तो अब कोई ठिकाना ही बाकी नहीं जहाँ जाकर "किस्मत आजमाई" करें! इस भेष में, इस

दशा में, फिरते हुए ग्लानि के कारण वे बहुत ही व्याकुल हो रहे थे—एक भले आदमी का लड़का इस प्रकार गली-गली भटकता फिरे, भला यह कर्म-दोष नहीं तो क्या है ? फिर क्या कर्म का दोष नहीं मिट सकता ? दुनिया में ऐसी कोई चीज नहीं जिसका इलाज न हो, तब फिर क्या किस्मत का इलाज नहीं ? क्यों नहीं, जरूर है ! जिस समय दिन बिगड़े हुए हों उस समय संतोष धारण करे और परमेश्वर के ऊपर किसी प्रकार का दोष न मढ़े, बल्कि उस पर और भी ज्यादा भरोसा करे और उत्तम कर्म करने में लगा रहे ।

बस, इस समय हमारे बाबू साहब को भी सब बातें फिर कर याद आने लगीं—वह 'फिटन' में बैठ बाग की सैर करना, सबको दुतकारना और फिर भी खुशामद पसंद होना, चाची की नसीहतों को न मानना और पतिव्रता पत्नी का निरादर करना इत्यादि ये सब बातें साँप-बिच्छू की तरह बन-बनकर उसे डसने लगीं । जिस समय वे सब बातें उसे याद आती थीं तो बस यह मालूम होता था कि कोई पीछे से वज्र लेकर मारने आया । सोचा हाय-हाय ! मैंने इतने पाप किए हैं, अब किसी प्रकार गति नहीं । क्या प्रभु इतने अधिक दयालु हैं कि वे मेरे सरीखे पापियों को भी क्षमा कर देते हैं, यदि वह ऐसा करते हैं तो क्यों ? यदि पापी और धर्मात्मा सबको एक ही जगह भेजते हैं तो फिर दुनिया में धर्म क्यों किया जावे ? सब पाप ही क्यों न करें ? परंतु नहीं ! नहीं ! मेरी यह सब भूल है । यदि बच्चा किसी प्रकार का कसूर करे, तो माँ-बाप उसे घर से थोड़े ही निकाल देते हैं—डराते हैं, धमकाते हैं, ताड़ना करते हैं, मारते हैं, पीटते हैं, समझाते हैं और फिर समझ जाने पर पुच-

करते हैं। फिर वैसा ही लाड़-चाव करते हैं। इसी प्रकार उस बड़े पितामह, सर्वशक्तिमान्, दीन-पालक का भी नियम है। जिस समय वह किसी को कुमार्ग पर चलते देखता है, सुमार्ग पर लाने का यत्न करता है और इसी प्रकार सुख, दुःख, लाभ, हानि मनुष्य को होते हैं। देखो! उसने कैसे-कैसे महापातकियों को तारा। जब उनको इस बात का ज्ञान हो गया कि हम कुमार्ग पर हैं। अब परमेश्वर की भक्ति में लग कर अपने को उबारें, तब ही उन्हें मोक्ष मिली।

इसी तरह विचारों के समुद्र में डूबते, उछलते चले आते थे कि दूर से देखा एक बड़े तख्ते पर मोटे-मोटे हरूफों में—"एक हजार का इनाम जो शख्स फूलचंद का पता दे" लिखा हुआ है। परंतु हाय रे समय! तेरी बलिहारी है कि इस नोटिस को खुद फूलचंद ही देखता है और कुछ कर नहीं सकता। धन्य है ऐसी नगरी को! धन्य इँगलैंड! तुझे दूर ही से नमस्कार है! अमीर आवें तो जो चीज चाहें पैदा कर सकते हैं, परंतु गरीबों का यहाँ ठिकाना ही नहीं, बस ऐसी नगरी को दूर ही से साष्टांग दंडवत्!

तो फिर अब किस प्रकार से भारत को लौटें और अपना सिर पिता के चरणों में रखकर अपना दोष क्षमा कराएँ? क्या भारतवर्ष के फिर दर्शन करने की आशा करें? कदापि नहीं! मेरे पाप ऐसे नहीं हैं कि इतने ही प्रायश्चित्त से मोक्ष हो। अवश्य ही कोई भारी दंड बाकी है।

हाय फूलचंद! इस समय तेरी दशा और क्लेश और तेरा भगवान् पर भरोसा देखकर हमारा भी चित्त चंचल हो गया। लेखनी अब तेरी दुर्दशा का वर्णन लिखने से मुँह मोड़ती है! कानों

में भी अब और कोई तेरी दुर्दशा का वर्णन सुनने की शक्ति नहीं, हृदय भी जवाब दिए देता है, इसलिये हम भी तेरे पापों का प्रायश्चित्त हो गया समझते हैं और प्रार्थना करते हैं कि अब तू कुशलपूर्वक घर पहुँच जा और वहाँ पिता के चरणों में सिर धर अपना कर्तव्य पालन कर, स्त्री की भक्ति और प्रेम का बदला उसका आदर करके दे और अपने सब "भाइयों" से जाकर पाप के फल की कहानी कह दे। उन सबों को यह भी जता दे कि उनसे जहाँ तक हो सके, वे भी देशसेवा में अपना जीवन बितावें और भूलकर भी कुमार्ग में न पड़ें। कहो इतना करने का वादा करते हो न ? बस, अब इसके उत्तर की भी राह हम नहीं देखेंगे, क्योंकि हमें मालूम है कि भारतवासियों का इतना कठोर हृदय नहीं है कि इतने पर भी वे जिस बात का वादा कर लें वह पूरा न करें ! तुम्हारा मुँह कहे देता है कि तुम अवश्य ऐसा ही करोगे।

बस, तो अब सुनिए पाठकगण ! बाबू फूलचंद का क्या हुआ—जिस समय कि वह वहाँ की एक सड़क पर विचरते हुए चले जा रहे थे उन्हें एक भारतवासी मनुष्य का मुँह एक खिड़की पर से दिख गया। बस, जैसे प्यासा जानवर पानी की तरफ दौड़ता है उसी प्रकार दौड़ते हुए यह उनके पास गए और वहाँ उनसे पूछने पर मालूम हुआ कि भारतवर्ष के एक महाराजा भ्रमण करने की अभिलाषा से यहाँ आए हुए हैं और इसी सप्ताह में भारत लौट भी जाना चाहते हैं। इस खबर को सुन फूलचंद का हृदय उमड़ आया। उसने अपना सारा वृत्तांत दिल खोल उनको सुनाया। वह और कोई नहीं महाराजा के प्राइवेट सेक्रेटरी थे। यह हाल सुनकर उनका हृदय दया से

इतना भर आया कि उन्होंने उसे एकदम छाती से लगा लिया और कहा कि हम सब तुम्हारे माल का पता अभी लगवाते हैं। मगर इसने कहा कि अब मेरी अभिलाषा उन सब बातों को और इँगलैंड ही को, जहाँ तक जल्दी हो, छोड़ देने की है। मैं तो अब अपनी मातृभूमि के दर्शन करने का अभिलाषी हूँ। जो कुछ हुआ वह सब इस किसमत से! मैं परमेश्वर का बड़ा उपकार मानता हूँ कि मुझे उसने ऐसी शिक्षा दी जिससे मेरा जन्म-कर्म दोनों सुधरे।

इन बातों ने उस भारतवासी के हृदय पर ऐसा प्रभाव डाला कि उन्होंने इसे गले से लगा लिया, कहा कि "अब तुम किसी प्रकार की चिंता न करो, हमारे साथ रहो और हमारे ही साथ वापस चलना। इस समय इस चिंता को दूर करो, इन कपड़ों को उतारकर फेंको और भोजन करके विश्राम करो।" फूलचंद ने सब बातें आज्ञा के तौर पर पूरी कीं, और उन सबके हृदय अपने हाथ में कर लिए। इस प्रकार ६ रोज रहकर वह भारतवर्ष लौटे। बंबई पहुँचने पर महाराजा साहब ने खुद 'फर्स्ट क्लास' का टिकट कलकत्ते तक दिला दिया और कहा कि "किसी समय आवश्यकता हो तो हमसे मिलना और पत्र-व्यवहार सदा करते रहना।"

सच है! भारत में अब भी ऐसे-ऐसे मनुष्य पैदा होते हैं, जो कि दया के सागर हैं! भारतमाता! तेरी संतान के समान दुनिया के पर्दे पर और कहीं मनुष्य नहीं पाए जाते। तेरे बच्चों के शील, दया और भक्ति के कारण अन्य देशवासी तेरी इज्जत करते हैं और इसी से तेरा गौरव है।

फूलचंद ने कलकत्ते में आकर किस प्रकार का व्यवहार

किया यह सब समयानुसार पाठक अगले प्रकरण में जान लेंगे। हम भी उसको इस प्रकार दुःख से रहित कर उस समय की और-और बातों का वर्णन करते हैं। हमें पूर्ण आशा है कि यदि फूलचंद के और कष्टों का वर्णन किया जाय तो पाठकों के हृदय को अधिक वेदना पहुँचेगी और इतने ही कष्ट उसके प्रायश्चित्त के निमित्त बहुत हैं।

पाँचवाँ परिच्छेद

An eagle, towering in his pride of place,
was by a mousing owl hawl'd at and killed.

सोमवार का दिन है, कलकत्ता हाईकोर्ट में बड़ी धूमधाम है। हजारों मनुष्य पहले ही से तमाशा देखने की गरज से आ जमे हैं। सुबह आठ बजे ही से भीड़ लगना शुरू हुई, दस बजे तो चींटी निकलने को भी जगह नहीं है। इतने में मिस्टर हैरिसन साहब जज भी वहाँ आ पहुँचे। सरकारी बैरिस्टर मि० धनपतराय तो पहले ही से मौजूद थे। हमारे दोनों जासूस भी जज साहब के बगल ही में कुर्सियों पर डटे हैं। सब लोगों की निगाह भी इन्हीं पर हैं। इतने में जज साहब ने मुजरिमों को कटहरे में लाने का हुक्म दिया। बस, उनके आने की देरी थी कि सरकारी वकील ने उनसे उनके नाम पूछे। दोनों ने अपने वही खास नाम शम्सउद्दीन व रफी-उद्दीन बतलाए। इस पर वकील ने कहा कि तुम्हारे ऊपर

हसीना की चोरी और सरकारी नोटों के उड़ाने का इलजाम लगाया गया है। उसके बचाव में तुम क्या कहना चाहते हो? उन्होंने जवाब दिया कि सब बातें ठीक हैं। हमने ही हसीना को चुराया, हमने नोट उड़ाए और भी कई ऐसे-ऐसे हैरतअंगेज काम किए जिसके सुनने से दाँतों में अँगुली दबानी पड़े, अब जो आपके समझ में आवे जल्द कीजिए, हम ज्यादा देर यहाँ ठहरना नहीं चाहते।

जासूसों ने टोककर कहा—"ठहरना अथवा न ठहरना अब तुम्हारे अख्तियार की बात नहीं है, अब ये घमंड भरी बातें करना छोड़ दीजिए।"

वह लोग इनकी तरफ देखकर दाँत पीसने लगे, मगर बेचारे करते क्या? बेकाबू थे।

जज ने पूछा—"अच्छा तुम कौन हो और ऐसा काम किसलिये किया?"

रफीउद्दीन ने जवाब दिया—हम लोग कौन हैं इस बात को जरा कान देकर लोग सुनें, जब मरते ही हैं तो अपनी सब बातें भी दुनिया पर रौशन क्यों न करते जावें, सुनिए—

"हम लोग ढाका शहर के रहनेवाले हैं, बचपन ही से हमारी आदत ऐसी पड़ गई थी कि जब हम मदरसे जाते थे तो अपने साथियों की किताबें, जेब से पेंसिल, रूमाल और पैसे उड़ा लिया करते थे। हमारे मा-बाप भी कुछ उससे खफा न होते थे। एक रोज का जिक्र है कि मैं एक की २॥) की 'मेन्शुरेशन' किताब चुरा लाया। उस रोज मुझको अम्माँ ने खूब हलुआ खिलाया। फिर क्या था इस काम में मैंने खूब

अभ्यास किया और अच्छी नामवरी पैदा की। जब हम जरा बड़े हुए तो जेब काटना शुरू किया और उसमें भी कमाल हासिल किया। बचपन तो यों गुजरा, जब बड़े हुए तो फिक्र हुई कि कोई धंधा करें, धंधा क्या कोई और! अजी नहीं, इसी किस्म का। तब फिर क्या किया कि जो रुपया पास था उसकी एक बाइसिकिल ली और मैंने और मेरे भाई ने उम्दा सूट बनवाए। दूसरे रोज एक अगरेज की बाइसिकिल हवा कर दी। बस अब तो दोनों के पास बाइसिकिल हो गई और दोनों जेंटिलमैन बन गए। फिर वहाँ से कलकत्ते आए। रास्ते में एक अँगरेज का ट्रंक उड़ा दिया जिसमें अच्छा माल हाथ लगा। हाँ, यह भी कह देना ठीक होगा कि हम लोगों ने सेकिंड क्लास में ट्रेविल किया था, बस तो यह रोजगार भी ठीक था, इसी से कई साल तक अपना खूब काम चलाया। शहर में बाइसिकिल पर चढ़कर निकलते, बाहर लूटते-खसोटते कौन जाने कि यह लोग कौन हैं। मगर हमेशा की तकलीफ उठाना ठीक न समझा, इसलिये कोई ऐसा सिलसिला कायम करना चाहा जिससे हमेशा का काम चले। बस इतनी बात की फिराक में रहने लगे। एक लड़की भी हमारे हाथ लग गई थी जिसका नाम अशरफ था और वह भी हमारे साथ रहकर ऐसी पक्की हो गई थी कि किसी काम में बंद न थी। एक रोज बैठे-बैठे यह सूझी, इस अशरफ की किसी ऐसे के साथ शादी कर दें जो घर में अकेला हो और खूब मालदार हो। इसकी टटोल में बहुत रोज लगे, आखिर मालूम हुआ कि एक सौदागर है, जिनका नाम वारिसअली है। उनकी बीवी अभी थोड़े रोज हुए फौत हो गई है और एक लड़की उनकी नादान है, जिसको

परवरिश के लिये वह एक औरत की तलाश में है, अगर कोशिश की जाय तो वह शादी भी कर लेंगे। फिर क्या था, अशरफ की शादी उन्हीं से करना तय हुआ, मगर ऐसा हो किस तरह सकता था? एक रईस सौदागर इस तरह एक बेजान-पहचान की लड़की से क्यों शादी करेंगे। मैं इसी फिक्र में था कि इतने में शिवपुर के रहनेवाले इनायतुल्ला साहब से मेरी मुलाकात हुई। मैंने देखा कि यह शख्स काबू में आ सकता है, बस उसको उल्टी-सीधी पट्टी पढ़ा तय किया कि वह अशरफ को अपनी बहन करार दें और वारिसअली से शादी पक्की करें। आखिर वैसा ही किया गया, शादी भी हो गई। तब तो माल खूब हाथ लगने लगा, मगर फिर भी सब्र नहीं आया। सोचा कि अगर खुद ही मालिक बन जावें तो अच्छा। यही सोचकर एक दिन खुद वारिसअली को और उससे बहुत रोज पहले अशरफ को वहाँ से बेहोश कर जाहिर किया कि ये शख्स मर गए, मगर दरहकीकत अशरफ इनायतुल्ला के यहाँ और वारिसअली हमारे यहाँ रहा किए। इनको मैंने इसलिये कैद किया था कि बाद इनके खुद अपने भाई शम्सउद्दीन को उनका लड़का कहकर वारिस बना देंगे और यह खबर सब शहर में मशहूर है कि वारिसअली को मरे कई बरस हो गए, मगर अफसोस कि परसों वह बेचारा सचमुच ही मर गया। इतना कहते-कहते उसकी जबान रुक गई।" सब लोग अवाक् थे कि यह क्या बातें कर रहा है, मगर मिलान करने से सब बातें साफ-साफ मालूम होती थीं और ठीक वैसा ही गुजरा भी था। उसने फिर कहना शुरू किया—"वारिसअली के मरने की खबर सब जगह फैल गई, अब मैंने समझा कि मौका ठीक है। हमसे पहले कई एक भले

आदमियों से मुलाकात हो गई थी और उनमें से एक लाला घासीरामजी के बड़े साहबजादे भी थे।

"इनकी आदत पहले ही से बिगड़ी हुई थी। उन्होंने उस लड़की पर अपनी निगाह डालना चाही, मैंने इनसे कहा कि अगर आप इस बात को साबित करवा दें कि "यह शख्स वारिसअली का लड़का है और बहुत दिनों से परदेश चला गया था, मरने की खबर सुनकर आया है" तब हम तुम्हारा भी काम पूरा कर दें। उन्होंने इस काम में पूरी मदद की और कई आदमियों ने भी अच्छी-अच्छी गवाही देकर मेरे भाई शम्सउद्दीन को वारिसअली का लड़का बना दिया। लड़का बेचारी नादान और भोली थी, उसने भी कुछ उज्र नहीं किया। आखिरकार उसका नाम अब्दुलरज्जाक रखकर मालिक बनवा दिया। कई साल बहुत अच्छी तरह कटे, उधर यह लड़की भी स्यानी हुई। हमने इसे उनसे मिलवा देना चाहा, क्योंकि ऐसा करने से एक साहूकार का लड़का हत्थे चढ़ता था। बहुत कोशिश की, मगर यह ऐसी नेकचलन और पाक दामन निकली कि उनकी एक बात न मानी। इतने में देखा कि उसकी आँख एक लौंडे से लग गई है। उसका नाम अहमद था। बाद को मालूम हुआ कि दोनों में सच्ची दोस्ती थी और एक दूसरे को हद से ज्यादा चाहते थे। मगर यह लौंडा जासूस वाहिदखाँ ही के पास रहता था, इसलिये हसीना को वहाँ से हटा कर अलहिदा किया। शहर में मशहूर किया कि हसीना गायब है, मगर इसको एक औरत ने, जिसका नाम कमला है, बचा कर निकाल दिया। मगर यह बेचारी जाती कहाँ, यह तो जानती ही न थी कि मेरा कौन

रिश्तेदार है। सिर्फ इसे अपने मामूँ का खयाल आया और वह यही इनायतुल्ला थे। झट यह इनके यहाँ पहुँची। हमको भी खबर लगी और फिर हमने इसे अपने यहाँ पकड़ बुलाया। इधर नोट खुद मैंने ही चुराए। एक रोज मैं मि० एलिसन के यहाँ कारखाना देखने गया। वहाँ उनके दफ्तर में एक क्लर्क धूर्त सा जान पड़ा, उसी को कुछ दे-दिवाकर मैंने एक ब्लेंक चेक फार्म ले लिया और खुद उसकी ही मदद से वैसे ही हरूफ बना कर और अपना नाम मि० मॉर्गन रखकर बैंक में गया। वहाँ देखा तो खजानची साहब जरा वहमी से नजर पड़े। उन्होंने बड़ी मुश्किल से रुपया दिया। देखा तो मेज पर एक नोट का पुलिंदा रक्खा था। बस, मैंने चट आँख बचा पतलून के अंदर गायब किया। यह भी उन्हीं की गफलत से हुआ, क्योंकि वह हरएक काम पूरी तरह पर करना चाहते थे। आपका इरादा था कि पहले नंबर उतार लें तब 'आयरन चेस्ट' में रक्खें, मगर यहाँ तो पहले ही गायब कर दिए थे। बदकिस्मती से मैं उसी ड्रेस में लाला घासीरामजी के मकान पर चला गया, क्योंकि उनके बड़े साहबजादे उसी रोज चुपके से घर छोड़ना चाहते थे। मैंने सोचा कि शायद ड्रेस बदलने में देरी हो जाय और फिर वह मिल न सकें और जाने फिर कब-से-कब मिलें। यही सोचकर मैं ड्योढ़ी पर से चला, मगर उनके यहाँ उस वक्त खुद खजानची साहब ही वही फिक्र कर रहे थे और मि० वाहिदखाँ भी वहीं बैठे सुन रहे थे। मुझे देख सब-के-सब अवाक् रह गए, मगर वाहिदखाँ ने पीछा न छोड़ा। मैंने बहुत तड़ी देना चाही, मगर एक न चली। बस आखिर नतीजा यह हुआ कि इस वक्त आप लोग वह हाल सुन रहे हैं जो शायद

मेरे साथ क़ब्र में जाते। खैर! कोई पर्वाह नहीं।" इतना कहने पर वह चुप हो गया और फिर बहुत कहने पर भी न बोला। यह तो हुआ रफीउद्दीन उर्फ मि० मॉर्गन का इजहार।

इधर इनके भाई शम्सउद्दीन उर्फ अब्दुलरज्जाक से भी बहुत कुछ जिरह हुई, मगर कोई नई बात न निकली। वह चोट से इस कदर लाचार था कि कोई सिलसिलेवार इजहार न दे सका। जासूस मि० मार्टिन की रिपोर्ट, जो कि उन्होंने इनायतुल्ला के इजहार से इकट्ठी की थी, बिलकुल इन्हीं बातों से मिलती थी। फिर जासूसों ने भी सारा हाल, जिस तरह पर कि इनको पकड़ा था, कह सुनाया। बस, सब तरफ से इन्हें शाबाशी मिलने लगी और वाहवाह हो गई।

जज ने फैसले में देरी न की, क्योंकि मुजरिमों ने सब बातें अपनी जबान से कुबूल कीं, इसलिये रफीउद्दीन उर्फ मि० मॉर्गन को आजन्म कैद और शम्सउद्दीन उर्फ अब्दुलरज्जाक को बारह वर्ष का सपरिश्रम कारावास दंड दिया गया। कचहरी बरखास्त होने के बाद सब तरफ से इनको धिक्कार और 'सत्य की जय' की आवाज सुनाई दी। दूसरे दिन बड़े-बड़े अखबारों के कालमों में सब इसी मुकदमे की कैफियत थी। एक हफ्ते के बाद मि० मार्टिन को सोने का पदक और दो हजार रुपए इनाम मिला, और मि० वाहिदखाँ को सोने का पदक और खानबहादुर का टाइटिल मिला। मि० मार्टिन ने आधा रुपया वाहिदखाँ को देना चाहा, मगर उन्होंने कहा कि मुझे रुपए के एवज में "खानबहादुर" का पद मिल चुका।

एक हफ्ते के बाद वाहिदखाँ ने हसीना की शादी बड़ी धूमधाम से अहमद के साथ कर दी और मि० मार्टिन ने कई

इनाम, अपने पास से दूल्हा और दुलहिन को दिए। अब हसीना को मालूम हुआ कि वहाँ जो मुलाकात मैंने अपने बाप से की वह मृत से नहीं बल्कि जिंदा से ही की थी, और मियाँ अहमद का भी सब ताज्जुब रफूचक्कर हुआ।

छठवाँ परिच्छेद

Who by repentence is not satisfied.
Is nor of heaven nor of earth, for these are Pleased;
By Pentivence the eternals wrath's appeased

पाठकगण! जरूर आप कहते होंगे कि अहमद और हसीना की शादी भी हो गई, मगर वह सोने की डिब्बी इस वक्त तक न खुली?

इसकी वजह और कोई नहीं सिर्फ यही थी कि उस डिब्बी पर यह खुदा हुआ था—"शादी होने के दूसरे दिन यह डिब्बी दूल्हा-दुलहिन खुद अपने हाथ से खोलें।" बस, यही बात थी कि डिबिया अब तक नहीं खोली गई थी। खैर! साहब सुनिए कि उस सोने की डिबिया में क्या था।

खोलने पर उस डिबिया में एक मुहर लगाया हुआ कागज का लिफाफा मिला और एक चाँदी की बड़ी चाबी थी, तब बगैर उस लिफाफे के खुले कैसे मालूम हो कि यह चाबी क्या चीजहै। झट मुहर को तोड़ चिट्ठी खोली गई। वह इस प्रकार थी—

बेटी हसीना!

यह बात तो आम व खास सबको जाहिर हो ही गई होगी

कि मैं मर गया, मगर नहीं मैं एक मक्कार आदमी के कब्जे में फँस गया हूँ और अब तक जिंदा हूँ। लेकिन अब जिंदगी का भरोसा नहीं, इसलिये तुम तो मुझे मरा हुआ ही समझो। या खुदा! खुदा! मुझे तो अब यकीन नहीं कि मैं तुमको फिर देख सकूँ। खैर! मेरी खुशी तो इसी में है कि तुम हमेशा खुशोखुर्रम रहो यह बदमाश तो किसी-न-किसी रोज पकड़े ही जावेंगे, क्योंकि पाप का घड़ा कब तक न फूटेगा और जब ही तुम लोग अपनी खैरियत समझना। क्योंकि अपने रहते ये तुम्हें चैन न लेने देंगे।

बस तो अब तुम इतने ही से समझ लेना कि तुम्हारा बाप किस तरह तुम्हारे लिये रोता गया है, चलते वक्त एक बात और भी याद आई, उन्होंने दूकान में तो एक पैसा भी नकद न छोड़ा होगा और जरूर ही बैंकों में से भी सब रुपया निकाल लिया गया होगा। क्योंकि मैंने सुना था कि वे मेरे वारिस करार दे दिए गए हैं, मगर फिर भी तुम्हारे लायक मेरे पास और भी है। जिस अलमारी में मेरी पढ़ने की किताबें थीं, उसके नीचे की जमीन खोदने पर तुम्हें एक संदूक-सा दिखाई देगा, बस उसी संदूक की यह चाबी है और उसमें जो कुछ माल हो वह भी तुम्हारा ही है। बस, बेटी! मैं तुम्हें और तुम्हारे खाविंद को दुआ देने के बाद चलता हूँ।

काल कोठरी
ता० २७ जौलाई १९०३ } तुम्हारा मरा हुआ बाप
वारिसअली

बस, अब तो दोनों के चेहरे हँसी और रंज से बार-बार पलटते थे। मरते हुए बाप की चिट्ठी पढ़कर हसीना की आँखों से टप-टप आँसू टपकने लगे और यह भी समझ गई कि क्यों यह चिट्ठी शादी के बाद खोलने को कहा गया था?

शादी के बाद खाविंद की मुहब्बत बाप से बढ़ जाया करती है और इसीलिये उसकी मुहब्बत के सामने बाप के मरने की खबर कुछ असर न करेगी, बस यही मुराद बाप की, शादी के बाद चिट्ठी खोलने की थी। दूसरे रोज जब कि संदूक खोला गया, तो उसमें नकद बीस हजार गिन्नियाँ निकलीं। ठीक है 'शक्कर खोरे को शक्कर ही मिलती है।' अब तक कमला हसीना के साथ ही थी अब उसने कहा—"अब तक मैं तुम्हारी खबरदारी किया करती थी, मगर अब मैं वह अपना चार्ज मियाँ अहमद को देती हूँ, क्योंकि वह अच्छी तरह अपना कर्तव्य पूरा कर सकेंगे।" उसने यह भी कहा कि उसकी मंशा काशीजी जाने की है।

प्रिय पाठकगण, आप लोग (पहले हिस्से के बारहवें परिच्छेद में) पढ़ चुके हैं कि कमला हसीना को फूलचंद के पंजे से छुड़ा उसके "मामूँ" के घर तक पहुँचा आई थी और हमेशा उसकी खबर लेने का वादा करती गई थी। एक दिन उसे खबर मिली कि हसीना फिर बदमाशों के फंदे में फँस गई, यह सुनकर कमला वेष बदलकर उन्हीं बदमाशों के यहाँ नौकर हो गई, और छिपे-छिपे हसीना पर निगाह रखने लगी। उसी की मदद से वारिसअली ने यह सब लिखा-पढ़ी की थी, और यह भी पाठकों को मालूम ही है कि इसी की मदद से सब बदमाश पकड़े गए और हसीना ने अपने बाप से आखिरी मुलाकात की।

खैर ! इतने भले कामों के करने से विदित होता है कि कमला का दिल अब वह नहीं है और इसी से हम भी खुशी से उसे काशी जाने की सलाह देते हैं और उसका कल्याण हो

इसके लिये हम भी दिल से ईश्वर की प्रार्थना करते हैं। परमेश्वर बड़ा दयालु है, उसने बड़े-बड़े पाप करनेवालों को तारा है, तब क्या कमला को नहीं उबारेगा? जरूर! जरूर कमला! अब तू काशी जाकर वहाँ ईश्वर के भजन में लवलीन हो, और फिर देख कि जगत्पिता, दीनबंधु, तेरे पापों को क्षमा करते हैं या नहीं।

सातवाँ परिच्छेद

उपसंहार

बंबई आते ही फूलचंद ने साहबी पोशाक को अलग फेंका और एक जोड़ी हिंदुस्तानी कपड़ों की पहन, सीधा उसी दम कलकत्ते लौटा। मकान पर पहुँचा, तो दर्वाजे पर रुगनचंद खड़े थे, झट उनके गले में लिपट गया। दोनों खूब गले लग कर मिले। उसी दम पिता को खबर मिली, फूलचंद जाकर उनके पैरों पर गिर पड़ा और बड़ी देर तक क्षमा-प्रार्थना करता रहा। फिर जाकर चाची साहिबा के चरण छुए। उसके पश्चात् स्त्री के कमरे में गया, देखा कि उसकी बुरी गति है, कहने लगा कि—"हाय! प्राणप्यारी, मैंने तुझे बड़े कष्ट दिए, तेरा यह हाल है!" वह भी झट खड़ी हो उनके चरण छू लिपट गई, और कहने लगी—"देव! बहुत दिन बाद दर्शन दिए।" एक बार फूलचंद फिर हसीना से मिले और एक दूसरे ने भाई-बहन कहकर परिचय दिया।

उस समय फूलचंद वह फूलचंद नहीं थे। इनका दिमाग दुःख सह-सहकर बिलकुल बदल गया था। बड़ी मुश्किल से बिरादरी में मिला लेने की प्रार्थना की गई। पहले तो हाँई नाहीं होती रही, परंतु फिर इनके व्यवहार को देख और यह जान कि इन्होंने इँगलैंड में अभक्ष्य भोजन नहीं खाया, प्रायश्चित्त देकर जाति में मिला लिया। सब घर-द्वार उसी प्रकार फिर हुआ, माता-पिता ने भी बहुत दिन तक सुख भोग, स्वर्ग का रास्ता लिया।

पाठकगण! देखिए, आजकल "फूलचंद रुगनचंद" की कोठी को कौन नहीं जानता। यह देखो—इस नुक्कड़ से उस नुक्कड़ तक सब मिल्कियत किसकी है। इन दिनों इनका कारोबार बाप के समय से भी ज्यादा है, दोनों भाई खूब दत्त-चित्त होकर देश की सेवा में अग्रसर हैं, दोनों को खिताब भी खूब मिल गए हैं।

फूलचंद के इस समय एक लड़का है, जिसका नाम निर्मलचंद है, और एक लड़की है जिसका नाम सरस्वती है, और रुगन बाबू के केवल एक कन्या ही है, जिसका नाम लक्ष्मी है, परंतु निर्मल दोनों को ही इतना प्यारा है कि रुगनचंद इसे अपना ही समझते हैं।

ठीक है! परमेश्वर जिसका हाथ पकड़े उसे कौन छुड़ा सकता है और हमारी भी यही प्रार्थना है कि परमेश्वर ने जैसे इस कुल के दिन फेरे वैसे सबके फेरें।

मुद्रक—श्रीमुन्नूलाल श्रीवास्तव
(राजा) रामकुमार-प्रेस, लखनऊ